ISSN 2250 – 0391
CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

स्वाध्याय

पाण्डुलिपि विशेषाङ्क

पुस्तक ५६, वर्ष २०१९

संपादक
श्वेता प्रजापति

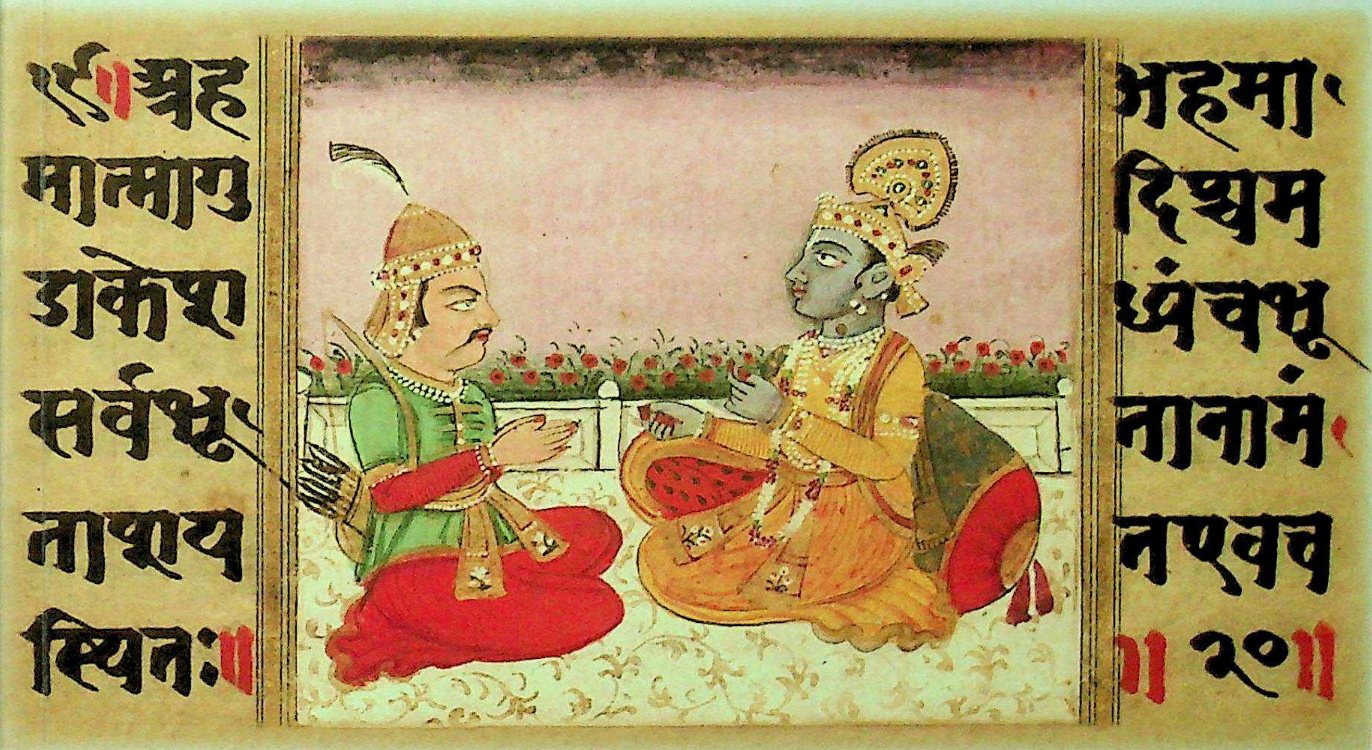

सत्यं शिवं सुन्दरम्
Estd. 1949
Accredited 'A' Grade by NAAC

प्राच्यविद्यामन्दिर
महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, वडोदरा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh
ISSN 2250 - 0391

स्वाध्याय

SVĀDHYĀYA

पाण्डुलिपि विशेषाङ्क

Issue No. 56, Year 2019

Editor
Dr. Sweta Prajapati

THE MAHARAJA SAYAJIRAO UNIVERSITY OF BARODA
सत्यं शिवं सुन्दरम्
Estd. 1949

Accredited 'A' Grade by NAAC

प्राच्यविद्यामन्दिर

Oriental Institute
The Maharaja Sayajirao University of Baroda
Vadodara - 390 001

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ISSN 2250 - 0391

Svadhyaya

Referred and Blind 'Peer-reviewed' Annual Multilingual Research Journal

Issue No. 56, Year 2019

Editor

Dr. Sweta Prajapati

Advisory Board

Prof. Ramakant Pandey
Dept. of Sahitya, Central Sanskrit University, Jaipur - Campus, Jaipur

Prof. Rabindrakumar Panda
Dept. of Sanskrit, Pali & Prakrit, The Maharaja Sayajirao University of Baroda, Vadodara

Prof. Mansukh Moliya
Head, Dept. of Sanskrit, Saurashtra University, Rajkot

Dr. Bharat Pandya
Dept. of Gujarati, The Maharaja Sayajirao University of Baroda, Vadodara

Editorial Board

Dr. J. K. Umrethiya
Dr. Ramanath Pandey
Dr. Sharmila Bagchi
Dr. Vipul Patel
Dr. Nandkishor Mishra

Address

Director
Oriental Institute
Opp. Palace Gate, Palace Road
The Maharaja Sayajirao University of Baroda, Vadodara - 390 001
Phone: (+91-265) 2425121, **(M)**: 9898472669
E-mail : director-oriental@msubaroda.ac.in
Website : www.msubaroda.ac.in

Subscription : ₹ 150/- Annual (For India) / $ 50 Annual (For Foreign Countries)

Note: The statements and views expressed by the authors of articles in this journal are their own and not necessarily of the Editorial Board.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पुरोवचन

प्राच्यविद्यामन्दिर, महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, वडोदरा द्वारा प्रकाशित संशोधन पत्रिका ''स्वाध्याय'' का यह ५६वाँ अंक **''पाण्डुलिपि विशेषांक''** के रूप में आप सभी विद्वानों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए अतीव आनंद एवं संतोष का अनुभव कर रही हूँ । प्राच्यविद्यामन्दिर के तत्कालीन निदेशक प्रो. भोगीलाल सांडेसरा द्वारा ई. स. १९६१ से प्रारंभ हुआ स्वाध्याय (त्रैमासिक) गुजरात के अध्येताओं एवं विद्वानों के समक्ष एक गुणवत्तायुक्त संशोधन पत्रिका के रूप में स्वीकार हुआ । भारत की स्वतंत्रता के पश्चात् इतिहास, पुरातत्त्व, गुजराती, संस्कृत, प्राकृत आदि भाषाओं एवं इनके साहित्य से सम्बन्धित संशोधनों को एक नई दृष्टि प्रदान हुई । निर्भीकतापूर्वक अपने विचारों को प्रस्तुत करने की स्वतंत्रता एवं योग्य परिवेश संशोधकों को प्राप्त हुआ । अपने क्षेत्र में विशिष्ट कार्य करने वाले विद्वानों के मौलिक संशोधन एवं विचारों को अपनी मातृभाषा गुजराती में अभिव्यक्त करने के लिये स्वाध्याय पत्रिका सदैव तत्पर रही है ।

इसके पूर्व स्वाध्याय में **''शताब्दी विशेषांक''** **''गुजरातनुं रूपक क्षेत्रे प्रदान''** **''श्रीमद्भागवत विशेषांक''** प्रकाशित हुए हैं । प्रस्तुत अंक को **''पाण्डुलिपि विशेषांक''** बनाने के पीछे एक उद्देश्य रहा है । अनेक वर्षों से संरक्षित पाण्डुलिपियों में सन्निहित ज्ञान से परिपूर्ण प्राचीन ग्रंथों का अध्ययन, संपादन एवं प्रकाशन हो तभी प्राच्यविद्यामन्दिर जैसी संस्था की स्थापना का उद्देश्य एवं महाराजा सयाजीराव गायकवाड द्वारा देखा गया स्वप्न साकार होगा । आज की नई पीढ़ी के उभरते हुए अध्येताओं को भी पाण्डुलिपि के क्षेत्र में रुचि उत्पन्न कराना एवं प्रोत्साहित करना अत्यधिक आवश्यक है । इस हेतु से इस विशेषांक को प्रकाशित करने का निश्चय किया गया । इस अंक में प्रो. वसन्त भट्ट, प्रो. मनसुख मोलिया, प्रो. रवीन्द्र पण्डा, प्रो. कीर्तिदा व्यास, डॉ. रसीलाबेन कडिआ जैसे प्रौढ-विद्वानों के लेख हमें प्राप्त हुए हैं तथा इस क्षेत्र में कार्य करने के लिए उत्सुक जिज्ञासुओं के पास से भी छोटे-छोटे ग्रंथों को संपादित कराया गया है । सामान्यतः कुछ ग्रंथ लघु होने के कारण उपेक्षित अवस्था को प्राप्त हो जाते हैं इसलिये उनका संपादन करवा कर नई पीढ़ी को संपादन कार्य में संलग्न करके उनको प्रशिक्षण प्रदान करने का सत्प्रयास इस अंक द्वारा किया गया है ।

पाठालोचन की विविध परंपरा विषयक विस्तृत जानकारी प्रदान करता हुआ विद्वत्तापूर्ण लेख पाण्डुलिपि के क्षेत्र में हमारा मार्गदर्शन करता है । वृत्ताभिराम एवं मेघाभ्युदयकाव्य जैसे ग्रंथों के एक से अधिक पाण्डुलिपियों के आधार पर ग्रंथ संपादित हुए हैं जबकि तरणिवाक्कुसुमांजलि, लक्षणावाद, शिष्टलक्षणावाद, राजयोगामृतसार, पूर्वपक्षमंजूषा जैसे ग्रंथ मात्र एक पाण्डुलिपि के आधार पर संपादित हुए हैं । सूर्याष्टकम् ग्रंथ का संपादन पूर्वप्रकाशित आवृत्ति के साथ तुलना कर अध्ययन किया गया है । 'पाण्डुलिपिलेखन : एक तकनीकाश्रित कला' लेख भारत में प्राचीन काल में प्रचलित लेखनपद्धति में कला और उससे जुड़ी तकनीक पर प्रकाश डालता है । संस्कृत ग्रंथों के बाद गुजराती साहित्य के ग्रंथों का सम्पादन भी इस अंक में अनोखी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चमत्कृति प्रदान करता है । हीरविजयसूरि नो सलोकों, सुभाषित सवैया, नर्मदास्तोत्र गुजराती भाषा में लिखे हुए ग्रंथ हैं । इन ग्रंथों का संपादन, इनकी पद्धति संस्कृत ग्रंथों से भिन्न है जो हम उन लेखों में देख सकते हैं । कुछ ग्रंथों में अनेक प्रयत्नों के पश्चात् भी संपादन में कहीं कहीं कुछ पाठ अस्पष्ट रह गये हैं, परंतु ग्रंथ को यथामति, यथाशक्ति संपादित कर प्रकाशित करने का उद्देश्य परिपूर्ण किया है । 'अकलंक शोध संस्थान' का परिचयात्मक लेख भी रसप्रद है । प्राच्यविद्यामन्दिर संस्था के उदय से वर्तमान काल तक लेख प्रवर्तमान स्थिति की तरफ निर्देश करके हमारी चेतना को भीतर से झंकझोर देते हैं । पाण्डुलिपिविज्ञान के सभी पहलुओं को समन्वित करता हुआ काव्य/शास्त्रकाव्य भी इस अंक की विशेषता है । इन लेखों को लिखने वाले सभी विद्वानों का सहयोग ही इस संस्था की वास्तविक पूँजी हैं ।

यह अंक एक अन्य कारण से भी विशेष है । इस अंक से ''स्वाध्याय'' को त्रिभाषी बनाया गया है । नूतन राष्ट्रीय शिक्षा नीति में भी त्रिभाषायुक्त शिक्षा पर जोर दिया गया है । गुजरात में ख्याति प्राप्त ''स्वाध्याय'' की क्षितिज का विस्तार करने एवं भारत के अन्य प्रांतो के विद्वानों का भी सहयोग प्राप्त हो इस उद्देश्य से ''स्वाध्याय'' को गुजराती के साथ-साथ हिन्दी और संस्कृत में भी प्रकाशित करने का विचार बहुत समय से मन में था । इसी विचार को प्रो. वसन्त भट्ट जी का एवं अन्य विद्वानों का समर्थन भी प्राप्त हुआ । विगत अनेक वर्षों से त्रैमासिक रूप में प्रारंभ हुआ यह ''स्वाध्याय'' कुछ वर्षों के बाद वर्ष में दो बार फिर वर्ष में एक बार प्रकाशित होने लगा । गुणवत्तायुक्त लेखों के अभाव के साथ-साथ अनेक तकनीकी समस्याएँ भी इसका मुख्य कारण रही हैं । इन समस्याओं के निवारण हेतु स्वाध्याय को त्रिभाषी बनाने का निर्णय लिया गया । हम ''स्वाध्याय'' को मुद्रित एवं डिजिटल दोनों रूपों में प्रकाशित कर पाठकों एवं अध्येताओं तक निर्धारित समय में पहुँचाने का प्रयास कर रहे हैं । आशा रखते हैं कि वैश्विक महामारी से आक्रन्त सुधीजनों के हृदय को प्रस्तुत 'स्वाध्याय' हर्षान्वित करेगा ।

''स्वाध्याय'' के प्रस्तुत ५६ वें अंक के प्रकाशन में डॉ. जयन्त उमरेठिया एवं समस्त संपादन-समिति के उत्साह एवं सूक्ष्मदृष्टि के कारण कार्य अनायास ही सिद्ध एवं फलीभूत हो गया । परामर्शक-समिति का मार्गदर्शन एवं महत्त्वपूर्ण निर्देशन हमारा मार्ग प्रशस्त कर देता है । महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय की साधना प्रेस के प्रबन्धक श्री जतीन सोमाणी और उनके सहयोगियों का योगदान भी उल्लेखनीय है । मैं तो केवल निमित्तमात्र बनकर कार्य को अग्रेसर करती हूँ ।

आशा है कि त्रिभाषा समन्वित स्वाध्याय के प्रस्तुत ''**पाण्डुलिपि विशेषांक**'' का आप सभी सुधीजन, विद्वज्जन उत्साहपूर्वक स्वागत करेंगे । आप सभी विद्वद्जनों से यह अनुरोध है कि इस शोधपत्रिका का प्रचार-प्रसार कर इसकी सदस्यता बढाने में हमारा सहयोग करें । आपके मंतव्य एवं सहयोग की अपेक्षा सह -

संवत् २०७६, रक्षाबंधन
३ अगस्त २०२०

श्वेता प्रजापति
संपादिका

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

स्वाध्याय

पुस्तक ५६, वर्ष २०१९

अनुक्रमणिका

ગુજરાતી

०१. હીરવિજયસૂરીનો સલોકો : સંશોધિત રચના - કીર્તિદા શ્રેણિક શાહ ૧-૧૪

०२. સવૈયા સુભાષિત - રસીલા કડીઆ ૧૫-૨૧

०३. હિરાનન્દ ભટ્ટકૃત "નર્મદાસ્તોત્ર" - પરિચય અને પાઠ - જે. કે. ઉમરેઠિયા ૨૩-૨૮

०४. રઘુદેવ ભટ્ટાચાર્યકૃત લક્ષણાવાદઃ- અપ્રકાશિત નવ્યન્યાયવાદગ્રંથ - શ્વેતા પ્રજાપતિ ૨૯-૩૨

०५. તાનભટ્ટકૃત શિષ્ટલક્ષણવાદાર્થઃ અપ્રકાશિત નવ્યન્યાયવાદગ્રંથ - શ્વેતા પ્રજાપતિ ૩૩-૩૫

०६. આનંદાનંદનાથ વિરચિત રાજયોગામૃતસાર- અપ્રકાશિત ગ્રંથ - વિપુલ પટેલ ૩૭-૪૫

०७. પૂર્વપક્ષમઞ્જૂષા - આશાધર ભટ્ટની એક અપ્રકાશિત કૃતિ - હર્ષલ ભટ્ટ ૪૭-૫૫

०८. કવિ મયૂરકૃત રસાષ્ટકમ્ - વંદના લેલે ૫૭-૬૬

०९. ગુજરાતનાં પ્રાચ્યવિદ્યા સંશોધનમંદિરો- શિખરથી અસ્તાચલ ભણી - મણિભાઈ પ્રજાપતિ ૬૭-૭૩

हिन्दी

१०. समीक्षित पाठ-सम्पादन के प्रचलित सिद्धान्तों का पुनरावलोकन - वसन्तकुमार म. भट्ट ७५-८४

११. रामचन्द्रपण्डित कृत वृत्ताभिराम : छन्दशास्त्रीयग्रन्थ - मनसुख के. मोलिया ८५-११५

१२. कवि इच्छाराम शास्त्री विरचित 'तरणिवाक्कुसुमाञ्जलिः' - एक अप्रकाशित संस्कृत लघुकाव्य - रवीन्द्रकुमार पण्डा ११७-१२२

१३. कवि मानाङ्क विरचित मेघाभ्युदयकाव्यम् : अप्रकाशित संस्कृत लघुकाव्य - नन्दकिशोर मिश्र १२३-१३६

१४. पाण्डुलिपि/हस्तलिखितग्रन्थ लेखन-एक तकनीकाश्रित-कला - शर्मिला बागची १३७-१५१

१५. अकलंक शोध संस्थान : एक परिचय - संस्कृति जैन १५३-१५५

संस्कृत

१६. कारिकामयं हस्तलेखशास्त्रम् - बनमाली बिश्वालः १५७-१७३

१७. ગ્રંથાવલોકન १७५-१८७

१८. प्राच्यविद्यामन्दिर की वार्षिक गतिविधियाँ (२०१९-२०२०) १८९-१९२

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

હીરવિજયસૂરીનો સલોકો : સંશોધિત રચના

કીર્તિદા શ્રેણિક શાહ*

સલોકા મધ્યકાલીન સાહિત્યનું સ્વરૂપ છે. આ શબ્દ સંસ્કૃત શ્લોક પરથી સલોક, શલોક, સલોકો-શલોકો એ રીતે ગુજરાતીમાં ઉતરી આવ્યો છે. મધ્યકાલીન સાહિત્યમાં પદ્યબદ્ધ શૌર્યસ્તુતિના સ્વરૂપની રચના માટે આ શબ્દ પ્રયોજાયો છે. આપણું પ્રબંધ અને પવાડા સાહિત્ય 'સલોકા'નું વારસ છે. ગુજરાતી સાહિત્યમાં ઐતિહાસિક પ્રસંગ સાથે સંબદ્ધ વ્યક્તિની પદ્યબદ્ધ શૌર્યસ્તુતિવાળા સલોકા પણ રચાયા છે.

આપણે ત્યાં ઘણી જ્ઞાતિઓમાં લગ્ન વગેરે ઉત્સવ પ્રસંગે 'શલોકા' બોલવાનો રિવાજ છે, એ પ્રસંગે પ્રાસબંધ પંક્તિઓમાં જાહેરમાં પ્રશસ્તિગાન થાય છે. એક વ્યક્તિ લયબદ્ધ રીતે એક પંક્તિ બોલે અને સામેથી હોંકારાનો લલકાર થાય એવી પદ્ધતિ એમાં હોય છે.

એક સમયે માહ્યરામાં વર તેમજ કન્યા તરફથી આવા સલોકા બોલાતા. વિદ્યા અને ચાતુરીની કસોટી માટે બોલાતા આવા શ્લોક ક્રમે ક્રમે પ્રાસબદ્ધ લયરચના તરીકે વિકસીને ફટાણાંની જેમ મહેણાં-ટોણાંવાળા બન્યા હોય એ સંભવિત છે. ગુજરાતી સાહિત્યમાં કવિ શામળનો રૂસ્તમનો સલોકો અને રણછોડદાસનો રણછોડજીનો સલોકો વધુ જાણીતા છે. અહીં હીરવિજયસૂરીનો સલોકોનું સંશોધન-સંપાદન કરવામાં આવ્યું છે.

વ્રત અને ગુરુનો મહિમા ગાતી મધ્યકાલીન સાહિત્યની ૮૦ કડીની આ રચનામાં આરંભની ૮ કડીમાં હીરવિજયસૂરીના જન્મોત્સવ અને દીક્ષા વિશેનું સંક્ષિપ્ત વર્ણન છે. પછી ચાંપાબાઈનું ચાતુર્માસતપ, એ તપથી અકબર બાદશાહનું પ્રભાવિત થવું અને ચાંપાબાઈના ગુરુ હીરવિજયસૂરી સાથે અકબર બાદશાહની મુલાકાત જેવી ઘટનાઓ કૃતિમાં આલેખાઈ છે. આગ્રામાં ચાંપાબાઈ નામની એક સ્ત્રીએ ચાતુર્માસ તપ કર્યું હતું. તેના આ તપની વાત સમગ્ર શહેરમાં ફેલાઈ જાય છે. અકબર બાદશાહને ચાંપાબાઈના વ્રતની જાણ થાય છે. ચાંપાબાઈના વ્રતથી પ્રભાવિત થઈને તે ચાંપાબાઈને દરબારમાં બોલાવે છે. બાદશાહ ચાંપાબાઈને ચાર માસ સુધી તે અનાજ વિના કઈ રીતે રહી શકી એનું રહસ્ય પૂછે છે. ચાંપાબાઈ કહે છે 'રોજે કરું મેં દેવગુરુ ધ્યાને'. અકબર તેના તપની પ્રશંસા કરે છે અને તેના બન્ને દીકરા થાનસંઘ, માનસંઘને ઘોડા વગેરે આપી તેમનું પણ બહુમાન કરે છે. ચાંપાબાઈને તેમના ગુરુ વિશે પૂછે છે. ચાંપાબાઈ બાદશાહને પોતાના ગુરુ હીરવિજયસૂરીની ઓળખ આપે છે અને તેઓ ક્યાં મળે તે વિશે જણાવે છે. અકબર બાદશાહ તરત જ હીરવિજયસૂરી ગુજરાતમાં હતા ત્યાં સૂબાને મોકલી તેમને આગ્રા તેડાવે છે.

'સ્વાધ્યાય' - પુ. ૫૬, વર્ષ ૨૦૧૯, પૃ. ૧-૧૪. ISSN 2250-0391

* સ્વાશ્રય ૧/એ, એ.ડી.સી. બેંક સોસાયટી, સહજાનંદ કોલેજ પાછળ, આંબાવાડી, અમદાવાદ-૧૫

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

હીરવિજયસૂરીને અકબર તરફથી આગ્રા આવવાનું ફરમાન મળ્યું છે એ જાણી સંઘમાં શંકાનું વાદળ ફરી વળે છે. સૌ વિચારે છે બાદશાહ હીરવિજયસૂરી સાથે કપટ કરી રહ્યા છે. બધા ગુરુને બાદશાહ પાસે ન જવા વિનંતી કરે છે. વહાણમાં બેસી દીવ ચાલ્યા જવાનું કહે છે. પરંતુ, હીરવિજયસૂરી સંઘને જવાબ આપે છે, 'ધર્મ પ્રભાવે મંગલીક થાસે' અને અકબર પાસે જવા તૈયાર થાય છે. વિહાર કરતા કરતા ગુરુ સારોતરી ગામ પહોંચે છે. ત્યાંના શ્રાવકોને પણ ગુરુને આગ્રા જવા માટેના અકબરના આમંત્રણથી શંકા થાય છે. ગુરુને વંદન કરી તેઓ કહે છે 'કહો તો મ્લેચ્છને મારિય કાઢું'. પરંતુ ગુરુ 'અઘટતું એ કિમ કરઇ' એમ કહી તેમને રોકે છે. સારોતરીમા પર્યુષણ કરીને ક્રમશઃ જાલોર, મેડતા, જોધપુર થઈને આગ્રા અકબર પાસે પહોંચે છે.

હવે પછી કૃતિમાં બાદશાહ અને હીરગુરુ વચ્ચે થયેલી બે મુલાકાત ક્રમશઃ આવે છે. પહેલી મુલાકાતમાં મહેલમાં પધારેલા ગુરુને વંદન કરી અકબર બાદશાહ એમને ગાલીચા પર બેસવા કહે છે. પરંતુ ગુરુ કાંબળી પાથરીને નીચે બેસે છે. બાદશાહ ગુરુને ગાલીચા પર બેસવા આગ્રહ કરે છે ત્યારે ગુરુ ગાલીચાની નીચે જીવ છે એમ કહે છે. બાદશાહ ગાલીચો ઊંચો કરીને જુવે છે ત્યારે ખરેખર ત્યાં બે-ચાર કીડી હોય છે. બાદશાહ આનંદમિશ્રિત આશ્ચર્યથી ગુરુને ચમત્કાર વિશે પૂછે છે ત્યારે ગુરુ બહુ સરળતાથી જવાબ આપે છે. જીવહત્યા ન કરવી. જૂઠું ન બોલવું, રાત્રી ભોજન ન કરવું આ કર્મોનું પાલન કરવું એ જ ઇલમ છે.

ત્યાર પછી બાદશાહ અને ગુરુની બીજી મુલાકાત આવે છે. એમાં એક સૂફી સંત અને હિન્દુ સંન્યાસીના ચમત્કારની વાત આવે છે. મુકુંદ નામનો એક સંન્યાસી એક ગોદડી મૂકે છે. હીરગુરુને આ ગોદડી આકાશમાં ઉડાડવાનું કહે છે. બાદશાહની હઠને કારણે માલદેવ ગોદડી આકાશમાં ઉડાડી દે છે. આ પછી એક સૂફી સંત પોતાના માથાની ટોપી આકાશમાં ઉડાડે છે. બાદશાહ પેલી ગોદડી અને ટોપી બન્ને આકાશમાંથી નીચે ઉતારી લાવવા કહે છે. માલદેવ એ ગોદડી અને ટોપી નીચે ઉતારે છે પછી આ પ્રમાણે પંક્તિ આવે છે : 'સોફી સંન્યાસી દો થયા વિતા, પાદશાહ દરબાર હીરગુરુ જીત્યા' (૬૪) અહીં પ્રશ્ન એ થાય છે કે ગોદડી ઉડાડનાર કે ગોદડી અને ટોપીને નીચે લાવનાર માલદેવ છે તો 'હીરવિજય જીત્યા' એમ કેમ કરવામાં આવ્યું છે? માલદેવે હીરવિજય વતી આ ચમત્કાર કર્યો છે ? પણ પાછળ આ પ્રમાણે પંક્તિ આવે છે, 'માલદેવ મુનિ અભિગ્રહ લીધો, આજથી હીરગુરુ માથે તે કીધો' (૬૬) એટલે કે માલદેવ હીરવિજયની ચમત્કારિક શક્તિથી જાણે પ્રભાવિત થાય છે. આ પ્રસંગ વર્ણનમાં કવિની કચાશ રહી ગઈ જણાય છે. વળી આ ચમત્કારનો પ્રસંગ હીરવિજયસૂરીવિષયક અન્ય રચનાઓમાં પણ ક્યાંય હોય એવું જણાયું નથી. એ રીતે આ કૃતિ ધ્યાનપાત્ર બને છે. આ પછી અકબર બાદશાહ હીરગુરુ પર અત્યંત પ્રસન્ન થઈને એમને હાથી, ઘોડા, ગામ જે કંઈ જોઈએ તે માંગવા કહે છે. પરંતુ ગુરુ કંઈ પણ ભૌતિક વસ્તુ માંગવાને બદલે પર્યુષણમાં જીવહત્યા બંધ કરાવવા, શત્રુંજય તીર્થને મુક્ત કરવા બંદીવાનોને છોડી મૂકવા, ડાબર સરોવરમાં જીવહત્યાનો નિરોધ કરવા તથા જીજીયાવેરો બંધ કરવા કહે છે. અકબર ગુરુને પિસ્તાળીસ લાખ પુસ્તકો ભેટ આપે છે. ગુરુ તેનો ભંડાર કરાવે છે. ત્યાર પછી કૃતિમાં હીરગુરુના પ્રભાવથી લોંકાગચ્છના મેઘજી હીરગુરુના શિષ્ય બને છે એ વાત આવે

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

છે. કૃતિમાં આવતા બે ચમત્કારો કૃતિનું આકર્ષણ છે જ સાથે કૃતિની ભાષા પણ ધ્યાન ખેંચે એવી છે. કૃતિની ભાષા હિન્દી, ફારસી મિશ્ર ગુજરાતી છે. કેટલીક વિશેષ ઉક્તિઓ તેની લાક્ષણિક ભાષાલઢણોને કારણે જોવા જેવી છે. જેમ કે, ચાંપાબાઈના વ્રતથી શંકિત થયેલો બાદશાહ ચાંપાને તેના વ્રત વિશે સવાલ પૂછે એવું આવે એને બદલે 'પૂછે જાબાપ તે ચાંપા આપે' એમ અહીં જવાબ પૂછાય છે. કૃતિમાં કવિ દ્વારા જિનશાસન અને હીરગુરુનો મહિમા કરવામાં આવ્યો છે.

વીરવિમલ-2/વિદ્યાધર કવિની રચના 'હીરવિજયસૂરીનો સલોકો' ની લેખનસાલ ઈ.સ. ૧૮૧૯ મળે છે. આ કૃતિની કડી સંખ્યા ૮૦ છે. આ કૃતિની ત્રણ હસ્તપ્રત લાલભાઈ દલપતભાઈ વિદ્યામંદિરના હસ્તપ્રતભંડારમાંથી મળી છે. જેના ક્રમાંક નીચે મુજબ છે.

1. લા. દ. ૨૪૯૨૮
2. લા. દ. ૩૦૫૦૦-૩
3. લા. દ. ૩૧૫૩૭

હસ્તપ્રત નંબર ૩૦૫૦૦-૩ क પ્રત છે.

હસ્તપ્રત નંબર ૩૧૫૩૭ ख પ્રત છે.

હસ્તપ્રત નંબર ૨૪૯૨૮ ग પ્રત છે.

આ ત્રણે પ્રતને આધારે કૃતિનું સંશોધિત સંપાદન કર્યું છે. હસ્તપ્રતની ઝેરોક્ષ મળી છે માટે તેના માપ વગેરે વિશે માહિતી આપી નથી. આ ત્રણ પ્રતમાંની પ્રત ૬૮ કડીએ અધૂરી મળી છે. એનો ઉપયોગ પાઠાંતર સંદર્ભે કર્યો છે.

હીરવિજયસૂરિ સલોકો

શાસનદેવી તુમ પાય લાગું, ગુરુગુણ ગાવા[1] બુદ્ધિ જ માગું,
[2]હીરવિજયસૂરિ તણો સલોકો, વરણવી કહું સાંભલજ્યો એક મના થઈ લોકો ૧

પાલણપુર નગર કેહવું વખાણું, અમરપુરથી અધકેરું જાણું,
કુંરો સાહ વસે જિહાં વિવહારી, સતીય-સિરોમણ નાથિય નારી. ૨

સિહસુપન દેખી સુત જાયો, મોચ્છવ મોટો તાતે કરાયો,
લક્ષણ બત્રીસે રંગરંગીલો, કુંવર વાધે છયલ છબીલો. ૩

---

૧. સિદ્ધિ બુદ્ધિ માગું ગ
૨. હીરવિજયસૂરી તણો સલોકો, વરણવી સાંભલજ્યો લોકો ક ખ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

વયરાગ પામી ચારિત્ર લીધો, કુમરે કામ[૩] અવધ કીધો,
હીરહરખ મુનિ-સિરદાર, ભણ્યો સિદ્ધાંત અંગ અગ્યાર. ૪

શ્રી આમંદવિમલ સૂરિ-શિરોમણ, જેણે દીપ્યો શ્રી જિનશાસણ,
આગરા લાહોર દલ્લી મુલતાન, મરુધર માલવ મેવાડ માન. ૫

સોરઠ કછ ગુજ્જર હલાર, દખ્ખણ કુંકણ મરહઠ સાર,
એહવે દેશે કરે વિહાર,[૪] પ્રતિબોધિ શ્રાવક કીધા સુવિચાર. ૬

સિથલ પંથ દૂરૈ જ ટાલી, શ્રી જિનશાસન સુધુ અજુઆલી,
[૫]શ્રી આનંદવિમલસૂરિ-પાટ દીપાયો, શ્રી વિજયદાનસૂરિ સવાયો. ૭

સૂરિમંત્ર જપે સૂરિશ્વર ધ્યાને, શાસનાદેવી [૬]આવ્યા બહુ માને,
[૭]ગુરુજી પૂછિ દેવી કહિ આપ, હીરગુરુ કરયો અધિક પ્રતાપ. ૮

શ્રી હીરવિજય સૂરીશ્વર કીધા, ખટદર્શનમાં હૂઆ પ્રસિદ્ધા,
[૮]દેશવિદેશે કીધા વિહાર, ચોમાસું પોહતા નયરી ગંધાર. ૯

[૯]પૂરે પકવાને સામીજન પોખ્યા, યાચક જનને દાને સંતોખ્યા,
પૂજા સ્નાત્ર ઉચ્છવ રંગરોલ, દેવરાયે રાતિજગાને તંબોલ. ૧૦

હવે આગરામાં [૧૦]હુઈ છૈ વાત, થાનસંગ માનસંગ કેરડી માત,
નામે તે બાઈ ચાંપા પ્રસિદ્ધ, મોટો તે તપ ચોમાસી કીધ. ૧૧

[૧૧]સેહેર આગરામાં હુઈ છે ક્યાત, પાતશાહિ સાંભલો તે તપ વાત,
[૧૨]જુઠુઅ બોલે હીંદુઅ કાફર, પાતશાહને પેટે ચઢી છે આફર. ૧૨

---

૩. અબલ ખ અચલ ગ
૪. પ્રતિબોધિ શ્રાવક કિધા સમકિતધાર ગ
૫. શ્રી આનંદ વિમલસૂરિપદ પાયો ક ગ
૬. આવિ દૈ માન ખ
૭. હીરગુરુ કરયો બહુલ પ્રતાપિ, શાસનદેવે એહવી મત્ય આપી ગ
૮. દેશપ્રદેશે ગ
૯. ઘૃતપૂર પકવાને સ્વામી સંતોખ્યા, દાન દેઇ વલી યાચક પોખ્યા ગ
૧૦. હોઈ તે ખ્યાત ક
૧૧. તપ મહોચ્છવ કરઈ આમાને યાત, પાતસાહ સાંભલી તેહની વાત ગ
૧૨. પાતસ્યાહ કહે જૂઠા હીંદુ કાફર, ઇમ કહી સેવક મૂક્યો છે ઘર ગ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

હુકમ કરીને ચાંપા બોલાવ્યાં, સુખપાલ બેસી દરબાર આયાં,
તપને તેજે પાતસાજી કંપે, પૂછે જબાપ તે ચાંપા [૧૩]આપે. ૧૩

અનાજ વિગર કયું કરિ રહેવાઈ, ચ્યારે મહિને કે રોજે કયું થાઈ,
ચોકી છોડી મહૂલમેં રહણા, તબહી જાણું સાચા તુમ કહણા. ૧૪

મહોલામાં બેઠા તપ આરાધે, [૧૪]તપની મહમઈ બહુ જસ વાધે,
કહો રે યારો કિનકું કયા સૂઝે, ઈસકી કરામત [૧૫]કહો કુણ બૂઝે. ૧૫

કયા હૈ કરામત ચાંપા તુમ પાસિ, પાતસજી પૂછે મનને ઉલ્લાસે,
રોજે કરું મૈં દેવગુરુ-ધ્યાને, પાતસા બોલાવે દેઇ બહુમાને. ૧૬

[૧૬]તેરે રોજેકું બહુત સાબાસ, તેરે જોઈએ સો માગો ઉલ્લાસ,
[૧૭]દલિપતિ પાતસાઈ બહુત નિબાજી, પાતસાઈ નોબત આગલ વાજી. ૧૭

[૧૮]બારહજારી મોટા દિવાન, પાતશાહીમાંહી હૂઆ પ્રધાન,
[૧૯]થાનસંગ રહિ છઇ પાતશાહ હજૂર, પાપ તણી મત્ય તેહથી દૂર. ૧૮

પાતશાહ મનમેં એહવો સંદેહ, [૨૦]ગુરુકી કરામત્ય રોજા કરે એહ,
[૨૧]ઉનકે ગુરુકું ઇહાં બોલાઉં, ઉસકી કરામત મૈં ભી પાઉં[૨૨]. ૧૯

[૨૩]તુમ્હારા ગુરુકા કહો ચાંપા નામ, કિહાં વસે ને કહો કુણ નામ,
હીરવિજયસૂરિ ગુરુજી હમારા, સકલ દુનિયામાં કરે ઉપગારા. ૨૦

---

૧૩. જંપે ક
૧૪. તપને તેજે ક ગ
૧૫. કુણે કાંઇ સૂઝે ક
૧૬. દલ્લીપતિ તસ્યા ઇમ પ્રસંસી, તેરે રોજેકું બહુત સાબાસી ગ
૧૭. બહિન કરી ચાંપા ઘર તેડી દલ્લીપતિસાહે ઘર સંપ્રેડિ ગ
૧૮. તાનસંઘ માનસંઘને દીઇ બહુમાન, બારહજારી ઘોડા દિવાન ગ
૧૯. પાતસાહમાંહિ હુઆ વજીર થાનસિંઘ માનસિંઘ પાતસાહ હજૂર ગ
૨૦. કેસી કરામતસે રોજે કર સકે એહ ગ
૨૧. ઇનકે ગુરુકું ઇહાં બોલાવે, એસી કરામત હમકુ દેખાયે ગ
૨૨. આ પછી વધારાની પંક્તિ : રીઝો પાતસાહ આપે જો મોજ, ષટદરસનના જૂજવા છે ચોજ ગ
૨૩. તમારે ગુરુકા કહો ગુણનામ, ઇણકા વતન કેસે રહેગા ગ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

[૨૪]ગુજર દેશે કરી વિહાર, સુણીયા ચોમાસું નયરી ગંધાર,
ચાંપા ગુનહો કરયો જે મહેલમાં તેડ્યા બહિન માનીને ઘરે સંપેડ્યા. ૨૧

[૨૫]હુકમ ફરમાને હડરત બોલાએ, હાથ જોડીને આગલ આએ,
બડે ફરમાન લખો એક ત્યાંઈ, હીરગુરુકું પાતસા બોલાઈ. ૨૨

તરત ગુજરાતે [૨૬]મેવડા ચલાવ્યા, દિન સાતે પાંચે ગુજરાત આવ્યા,
ગુજરાતી સુબે ફરમાન દીધા, તસલીન કરી હાથમાં લીધા. ૨૩

[૨૭]પાતસાહ ફરમાના સબહી વાંચિ, હીરગુરુ તેડણ પ્રપંચિ,
પાતસાજી લિખી ઈસિય કેણી, [૨૮]હલકી ચલણા ઉણકું કહણા. ૨૪

રોજા મહીના પાતસાહી [૨૯]દેણા, [૩૦]હુલઇં ને હુલુઇં આરામ લેણા,
સુબે એદી તુરત ચલાએ, અસવાર દોય ગંધાર આએ. ૨૫

પાતસાહ ફરમાન આગલ છોડે, હીરગુરુ વાંચે મનને કોડે,
સંઘ સહૂકો [૩૧]મલિ ઇમ વિમાસે, હીરગુરુ તેડા પાતસાહ પાસે. ૨૬

અકબર પાતસાહ જે મહાખુનિ, વીનતી ન માને ઉબરાવ કેની,
પૂજ્યજી પાતશા પાપિષ્ટ દુષ્ટ, મહા મુગલ ને રખે ઘે કષ્ટ. ૨૭

એદીસ્યુ કુડ કપટ રચીઇ વાહણે બેસારી દીવ પોચવીઇ,
વલતું હીરગુરુ ઇમ પ્રકાસે, ધર્મપ્રભાવે મંગલિક થાસે. ૨૮

શ્રી જિનશાસન સબલી જ સર્મ, નાસી જાતાં નવિ રહે ધર્મ,
વારુ મહુર્ત કીધા પ્રસ્તાન, [૩૨]પૂજ્યજી થાસિ કુશલકલ્યાણ. ૨૯

---

૨૪. દેશ વિદેશે ક
૨૫. હુકમ કરીને ક
૨૬. સેવડા ગ
૨૭. ક પ્રતમાં નથી
૨૮. સતાબીચ જમા અજર દેણી ક ખ
૨૯. ખિણ્યા ખ
૩૦. હલુઇ હલુઇ આગરૈ મિલણ્યા ખ
૩૧. મનમેં વિમાસે ગ
૩૨. જપપતાકા કલ્યાણ ક ખ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

સુકન [૩૩]સબલા મારગ થાઇ, કન્યા ઊભી મોતીડે વધાઈ,
[૩૪]ડાવીય દેવી તોરણિ અવાસ, જિમણી ભૈરવ પૂરે છે આસ. ૩૦

ખર ડાવું ને [૩૫]ડાવા જલાલી, દ્મિણું તોરણ બાંધ્યું [૩૬]મલાલી,
સકુન સબલા હુઆ ઉછાંહિ, હીરગુરુ ચાલ્યા ચોમાસા માંહિ. ૩૧

[૩૭]પાતસાહી મેવડા ઇંદી સંઘાતે, હીરગુરુ ચાલ્યા પરિવાર સાથે,
અમદાવાદ સંઘ અતિ બહુ ભાવે, આવી આડંબર સામહિયાં લાવે. ૩૨

[૩૮]રાજનગરમાં પૂજ્ય પધરાવે, કાનખાના સાહિબ વાંદવા આવે,
નીકી નીકી ગુરુજીય ચલણા, પાતસાહજી ચાહતે હૈ તુમ મિલણા. ૩૩

ઇમ કહી નબાપ વલિઆ, રાજનગરના શ્રાવક મલિયા,
સાહ સૂરો ને કુંવરજી જવેરી, પનિઆ સા પ્રમુખ મોટા વ્યવહારી. ૩૪

પૂજ્યજી કહો તો નબાપ ફેરવીઇ, પર્વ પજુસણ ઇહાં કિણ કરીઈ,
પૂજ્યજી બોલ્યા મનને ઉછાંહે, છ છિંડી બોલિ છે સિદ્ધાંત માંહે. ૩૫

પરભાતે તેણે કારણ પાંગરવો, પાતશાહિ હુકમ [૩૯]પાછો ન કરવો,
અનુંચાન વાચક અને પંન્યાસ, [૪૦]સાથિ પાંત્રીસ ઠાણું ઉલ્લાસ.[૪૧] ૩૬

[૪૨]મીણીઆ માપાને સેજવાલિ, વિહુલ્યુ સાથે દોસી ચાલિ,
મહિસાણ સિદ્ધપુર પાલણપુરમાંહિ, સરોતરિનગર પહોતા ઉછાંહિ.[૪૩] ૩૭

---

૩૩. રૂડેરા ગ
૩૪. ડાવિ ભેરવ બોલી આવાસ ગ
૩૫. પૂઠે વલી ઝાલી, ડાવાથી જિમણી આવી દેવ કાલી ગ
૩૬. મલ્હાલી ખ
૩૭. પાતસાહિ મેવડા સાથઇ ઇયદી, હલૂઇ ચલણા ગુરુજી પ્યાદા ખ
૩૮. રાજનગરના લોક વાંદવા ગ
૩૯. પાછો ન ફરવું ક
૪૦. સાથિ તેડ્યા ઠાણું પચાસ ગ
૪૧. પછી ગ પ્રતમાં વધારાની પંક્તિ : ઊંચી નિશાણ નોબત વાજે, અતિ આડંબર ચાલ્યા ગુરુરાય
૪૨. સાથે ચાલેં સીનસે ઝમાલા ગ
૪૩. વધારાનું ચરણ ક પ્રતમાં : આડંબર ચાલ્યા શ્રી ગુરુરાજ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

સરોતરિ સબલા શ્રાવક વાસી, સહહસાઅરજન મોટો મેવાસી[44],
[45]બીજા પણ મેવાસી બલિયા, ગુરુ પાયે લાગિ આવિને મલિયા. ૩૮

ગુરુજી ચોમાસુ ઈહાંકિણ કરીઈ, પૂજ્ય પરમેસરથી ઈહાં ડરીઈ,
કહો તો મ્લેચ્છને મારિય કાઢું, કુશલે ખિમે સહેર પહોચાડું. ૩૯

ગુરુ કહે અઘટતું એ કિમ કરીઈ, પાતશા કને જાતાં ઘણો જસ [46]વરીઈ,
[47]પરવ પજુસણ ઈહાંકિણ કરીઈ, પારણા કરીને આગલ સંચરીઈ. ૪૦

પજૂસણ કરવા પૂજ્યજી રહિયા, નવે વખાણે કલ્પસૂત્ર સાંભલિયા,
સંવત્સરી-દાન સોનઇઆ આપ્યા, જાચક જનના દાલિદ્ર કાપ્યા. ૪૧

પારણા પૂજા ને સબલી સજાઈ, ધન ધન હીરગુરુની કમાઈ,
સેસો અરજનને પ્રતિબોધી, [48]જીવ નવિ મારું [49]આખડી એ લીધી. ૪૨

[50]પજૂસણ કરી પૂજ્ય પાંગરીઆ, નગરી સીરોહી આવી ઉતરીયા,
[51]રાય સુલતાન આવીને મલિયા, ગુરુજી દેખીને વંછિત ફલિયા. ૪૩

જાલોર જોધપુર મેડતામાંહિ, શ્રીપૂજ્ય પહોતા મન-ઉચ્છાંહિ,
સાહ સદારંગ ઉછવ કીધ, લૂંછણે જાચકને હીથીયા દીધ. ૪૪

પાતસાહી મેવડા આગલ ચલિયા, હીરગુરુ આવ્યા અકબર સાંભલિયા,
થાનસંઘ માનસંઘ સબલી સજાઈ, દલિસા આગલે દીધી વધાઈ. ૪૫

મેડતાથી પૂજે કર્યા પરિયાણ, નગરે ફત્તેપુર હૂઈ છે જાણ,
સેખુજી પાતસા સામા મોકલીયા, આગરાઇ સંઘ મનોરથ ફલીયા. ૪૬

---

૪૪. ઘરે બેઠા નિત્ય આવે છે ગ્રાસ ક પ્રતમાં આટલું ચરણ વધારાનું છે.
૪૫. સહસા અરજન મેવાસિ ક ગ
૪૬. લહીઇ ક ચ
૪૭. સંઘક હિયડે ધરીઇ ધરીઇ, તો પરવ પજૂષણ કરી ઇ ગ, અમારિ પલાવી જીવ ઉધરીઇ ક
૪૮. નાસતા ન મારું ખ
૪૯. બાધા ક ખ
૫૦. સુરતાણરાય આયા સાહમીઇ, તેહના વર્ણન કેતા કહીઇ ખ
૫૧. ઇહાંથી આગલઇ હીરગુરુ સંચરીયા (બીજું ચરણ) ક

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

પાતસાહી નેજા વડા નીસાણ, નોબત વાજે મોટે મંડાણ,
પાચસાહી ઘોડા હાથી પાખરીયા, કોતલ દોરીને આગલ કરીયા. ૪૭

પંચશબ્દ ને [૫૨]નીશાણ વાજે, ઢોલ ધ્રુસૂકે અંબર ગાજે,
માદલ તાલ અને સરણાઈ, [૫૩]ઠોરેય ઠોરે દેતા વધાઈ. ૪૮

આગરાઈ સંઘે કર્યો સામહિઉ, વર્ણવી કાંઈ ન જાઈ કહિઊ,
મોછવ મોટે પૂજ્ય પધરાવે, હીરવિજયસૂરિ આગરામાં આથે. ૪૯

પ્રભાવના સબલી હુઈ રૂપઇએ, શ્રાવકે જાયકને સંતોખ્યા સહુએ,
આગરાઈ સંઘ ચતુર-સુજાણ, [૫૪]થાનસિંઘ માનસિંઘ માનુ કલ્યાણ. ૫૦

ગુરુજીય ઉત્તર્યા દરબાર તેડ્યા, પ્રભાતે પાતસા મોલામાં તેડ્યા,
હીરગુરુ સાથે [૫૫]ઠાણું જ સાત, પાતસાજી પૂછે સી સીય વાત. ૫૧

આશીસ દેઈ આગલેં રહીયા, દરસણ કેખી પાતસા ગહગહીયા,
દલીસા દેખી દરીસણ આણંદે, હાથ જોડીને ઉંબરાવ વંદે. ૫૨

પાતસાહી જલેયા સોનેરી દીઠા, કાંબલી બિછાહિ આગલ બેઠા,
પાતસાહ કહે ગુરુ બેસો જલીયે, સાધુ એક બોલ્યો જીવ હુવે નીચે. ૫૩

મોહલામાં [૫૬]જીવ કિહાંસે હોવે, [૫૭]પાતસાહ [૫૮]મોજે ખોલીય જોવે,
[૫૯]જોતાં નાની કીડી બિચ્ચાર, દેખીય ચમક્યો હૃદય મઝાર. ૫૪

---

૫૨. કરણાલ વાજૈ ખ
૫૩. ઠામ ઠામ હુઇ વધાઇ ગ
૫૪. માનસિંઘ મહિતો પ્રધાન ગ
૫૫. ઠાણું સેં સાથ ગ
૫૬. જનાવર ગ
૫૭. પાતસ્યા જલિયો ઉઠાવી જોવી ક
૫૮. ખોજીઇ જોવઇ ગ
૫૯. જોતા કીડી નગરો નિહાલો, પાતસ્યાને મન સંદેહ ટાલ્યો ગ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

એ નહી માનવ આદમ રૂપ, [૬૦]અલ્લા ખુદા કા એહ સરૂપ,
અબદલફજલ સેખ દીવાન, માનસંઘ કઊ સૂરસેન જાણ. ૫૫

વીરબલ રાજા ટોડરમલ્લ, રતનસંઘ હાડો ઉબરો અવલ,
સહુ સભામાં પાતસાજી આપે હીરગુરુ નામ જગતગુરુ થાપે. ૫૬

પાતશાહિ બોલ્યા બોલ વીચારા, કેણ ઇલમ ગુરુજી તુમારા,
જીવ ઉગારું જૂઠ ન બોલું, ચોરી નવિ લું ને નાડા ન ખોલું. ૫૭

[૬૧]દુનિયા ન નજાડું (ઉજાડું), રાતિ ન ખાઉં, ઇશા ઇલમ સદા નિરવાહૂં,
વાત સુણીને પાસશા દિલ બેઠો, હૂકમ હુઓ [૬૨]ને ગુરુજીય ઊઠી. ૫૮

મજલસ બીજી પૂજ્ય પધારે, ષટ્‌દર્શનમાં લાજ વધારે,
મુકંદ સંન્યાસી ગોદડી મૂકો, [૬૩]હાથી હલકા સ્યા ન થાઈ ઊંચી. ૫૯

જગગુરુ કહે ગુદડી ઉડાડે, પાતશાહ [૬૪]રિઝ્વો એ હઠ માંડિ,
ગુરુજી બિરુદ આપણું રાખો, ગોદડી ઉડાડી અલગીય નાખી. ૬૦

માલદેવ ચિંતે હવે ઈહાં આજ, કિમ કરી ખોઈઇ દરિસણલાજ,
હુકારી વીર ગોદડી ઉડાડી, સોફીઇ એક કરામત માંડી. ૬૧

નિજ માથાથી ટોપી ઉડાડી, ઉડી આકાસે પાતસ્યા નિહાલી,
દલીસા બોલે તન ઇક તારી, ગોદડી ટોપી લાઓ ઉતારી. ૬૨

ગોદડી ટોપી માલદે ખીલ્યો, સોફી સંન્યાસી અંગ થયાં ઢીલાં,
પાતસા હુકમ કરે છે ફેરી, [૬૫]ગોદડી મંગાઉ તુમિ ઇન કેરી. ૬૩

---

૬૦. સાંઇ ખુદાકા ગ
૬૧. દુનિયા ન જોડું ખ
૬૨. તે તેજવર ગુરુ ઊઠી ગ
૬૩. હાથીહ કરી ન થાઇ ઊચી ખ
૬૪. રીઝ્યો ક ખ, રીઝો એહ રમાડો ગ
૬૫. ગોદડી મંગાવો અબકીય વેગી ક ખ ચ, ગોદડી માગા તુમે ન કેરી ગ ખ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

આપણો ઓઘો માલદેવ ચલાવે, ગોદડી ટોપી મારીને લાવે,
સોફી સંન્યાસી દો થયા વીતા, પાતસાહ દરબારે હીરગુરુ જીત્યા. ૬૪

જગગુરુ બીરદ રાખ્યું છે જાતું, અઇ અઇ હીરગુરુ પુન્ય જ માતુ,
[૬૬]બ્રાહ્મણ સંન્યાસી અતિ ઉનમાદ, ખટ્ દર્શન સુ જીત્યો છે વાદ. ૬૫

માલદેવમુનિ અભિગ્રહ લીધો, આજથી હીરગુરુ માથે તે કીધો,
દલ્લીસા અકબર હીરગુરુ ગાય, પાતસા કહે માગો બહોત પસાય. ૬૬

હાથી ઘોડા ને પરગણે ગામ, જે જોઈઇ તેકા લ્યો નામ,
માગ્યા સો ઘો તો અમાર પલાવો, નવ મોહરે તુમે છાપ ચલાવો. ૬૭

પરવ પજૂસણ અમાર પલાવો, શેત્રુંજો તીરથ મુગતો કરાવો,
હુકમ ફરમાને ગાય છોડાવો, [૬૭]બંદીવાન લાખ પૂરા મૂકાવો. ૬૮

પંખી મૃગલાને ઘણું ઉધરીયા, ડાબર સરોવર જીવ છોડવીયાં,
[૬૮]જીજીઆ બાધૂં દાણ મેલાવી, [૬૯]શ્રી જિનશાસન થીર થપાવી. ૬૯

શ્રી જિનશાસન સબલો જ ધર્મ, હીરસૂરિનું મોટું જ કર્મ,
પહેલું ચોમાસું આગરે રહીને, બીજું ચોમાસું ફત્તેપુર જઈને. ૭૦

પાતસા બહોત ફરમાને ભેજે, ત્રીજું ચોમાસું આગરે રહીજે,
અકબરસાનો આગ્રહ જાણી, ધન ધન હીરગુરુની કમાણી. ૭૧

ત્રીજું ચોમાસું આગરે આવે, સબલ સામઈએ પૂજ્ય પધરાવે,
અકબરસાહ સબલો તે રીઝ્યો, શ્રી ગુરુવચને ઘણું પ્રતિબૂઝ્યો. ૭૨

પામરી પુસ્તક ભેટણું કીધું, [૭૦]હીરગુરે તે કંઈ ન લીધું,
[૭૧]અકબર-આગ્રહ કીધ ભંડાર, જગતગુરુ કીધો મનોહર. ૭૩

---

૬૬. બ્રાહ્મણ મિથ્યા તિમારા ઉન્માદ ખ
૬૭. જીજીયો બંદિવાન સર્વ મેલાવો ગ
૬૮. પુંછી ધૂંબા દાણ મેલાવી ગ
૬૯. જિનશાસન ઘાટ રોપાવી ગ
૭૦. અકબર આગ્રહ કાંઈ ન લીધું ક
૭૧. અકબર આગરે કિધો ભંડાર ક

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

લાખ પિસ્તાલિસ પુસ્તક સંચે, ષટ્ દરસનના સાસ્ત્ર પ્રપંચે,
પારણે પૂજ્ય તિહાંથી પાંગરીઆ, હજરત સલામ કરી ઊભા રહીઆ. ૭૪

પાતસાહ બહુત કરિ સનમાન, [૭૨]હીરગુરુ તમારા બહુત ગ્યાન,
શ્રેણિક વાલો શ્રી મહાવીર, અકબર વાલો શ્રી ગુરુ હીર. ૭૫

કેશી કીધો પ્રદેશી [૭૩]સીધો, શ્રી ગુરુ અકબર તેમ પ્રતિબોધ્યો,
શાંતિચંદ વાચક પાસે હજૂર, તીહાંથી પાંગરીયા હીરવિજયસૂર. ૭૬

મરુધર ગુજર પાવન કરતા, શ્રી જિનશાસન માંહે ગહગહતા,
મેઘજી રીખ્ય આચારજ લૂંકે, ઠાણું સત્યાવીસ નિજ મત મૂકે. ૭૭

પ્રતિમા જૂહારી સંસાર તરીઆ, હીરગુરુ-દરિસણ [૭૪]પામી તે ઉધરીઆ,
પંચ મહાવ્રત ઉચરીયાં ફેરી, લંકા-મત પાપ કાઢ્યો ઢુંઢેરી. ૭૮

હીરવિજયસૂરિ ગુણ જગાઇ, [૭૫]દિનદિન પ્રતિપો કોડિ સવાઇ,
વિવાહ મંગલિક ઉછવ કાજ, એ સલોકો ભણવો વરરાજ. ૭૯

આણંદવિમલસૂરિશિષ્યના શિષ્ય, દેવવિમલગુરુ પંડિત પ્રતિખ્ય,
તસ સીસ મંગલિક સલોકો ગાયો, વીર વિદ્યાધર આણંદ પાયો. ૮૦

શબ્દકોશ

(**નોંધ** :- પહેલો ક્રમાંક કડી સંખ્યા અને બીજો ક્રમાંક જે તે કડીની પહેલી બીજી પંક્તિ સૂચવે છે)

અમાર	67.2	અમારિ - અહિંસા
અવદ્ય	4.1	નિર્મળ
આદમ	55.1	ઈશ્વર

---

૭૨. જે તુમ ચાહે સો ઉનકા લ્યો નામ (બીજું ચરણ) ક

૭૩. પ્રસિધો ગ

૭૪. પાંમી ગહગહીયા ક

૭૫. દિન દિન પ્રતિયે તેં જસ વાય ગ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ઈલમ	57.1	કળા, વિદ્યા
ઉછાંહી	31.2	ઉત્સાહથી
ઓઘો	64.1	જૈન મુનિનું રજોહરણ
ગહગહીયા	52.1, 77.1	આનંદિત થયા
છિંદ્રી	35.1	છિદ્ર
જલાલી	31.1	ઉજ્જવળતા, ભવ્યતા
જલેચા	53.1	ગાલીચો
જૂહારી	78.1	વંદન કરી
તસલીમ	23.2	નમસ્કાર
દેવી	30.2	દેવચકલી
દોસી	37.1	કાપડિયો
ધ્રુસકે	48.1	વાગે
નીકી નીકી	33.2	આરામથી, સુખપૂર્વક
નેજા	33.2	ધજા
પાખરીયા	47.2	પલાણ્યા
પામરી	73.1	ઉપકરણો, રેશમ કે ઊનનો દુપટ્ટો
પાંગરવો	36.1, 43.1	વિહાર કરવો
પ્રતિપો	79.1	પ્રકાશો, તપો
પ્રપંચિ	24.1	ગોઠવણ કરે છે
પ્રભાવના	50.1	લહાણી
ભૈરવ	30.2	ભૈરવી, ચીબરી
મજલસ	59.1	મિજલસ
મરહઠ	6.1	મહારાષ્ટ્ર
મરુધર	5.2	મારવાડ
માફા	37.1	વાહન પરનું કપડાનું ઢાંકણ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

મેવડા	23.1, 45.1	સંદેશાવાહક
લૂંછણે	44.2	ઓવારણે
વિવહારી	2.2	વેપારી, વ્યવહારી
વિહલ્યુ	37.1	વહેલ, વેલડું
સર્મ	29.1	શર્મ, આનંદ
સુખપાલ	13.1	પાલખી
સેજવાલી	37.1	પાલખી
સોનઇઆ	41.1	સોનાના સિક્કા
હલુંઇ	25.1	હળવે

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

સવૈયા સુભાષિત

રસીલા કડીઆ*

પ્રસ્તુત કૃતિમાં સવૈયા છંદમાં લખાયેલાં ૧૬ સુભાષિતોનો સંચય છે. કેટલાંક સુભાષિતોમાં કવિએ પોતાના નામનો નિર્દેશ કર્યો છે જેના પરથી આ બધાં સુભાષિતો જુદા જુદા કવિઓની રચના હોવાનું સમજાય છે. સંચયકારે પોતાની રુચિ અનુસાર, પોતાના અંગત હેતુ માટે જુદા જુદા કવિઓનાં સુભાષિતોનો સંચય કર્યો છે, એમ જણાય છે.

સવૈયા છંદ ૩૧ માત્રાઓનું હોવાને કારણે તેને સવૈયા એકત્રીસાથી પણ ઓળખવામાં આવે છે. તેને જ ચરણ અને પ્રત્યેક ચરણમાં ૩૧ માત્રા હોય છે. યતિ ૧૬ તથા પછી ૧૫મી માત્રાએ આવે છે. તાલ ૮ છે. આ બંધારણની દષ્ટિએ તપાસતાં, દરેક સુભાષિત આ કસોટીએ ખરું ઉતરતું નથી. કેટલાંક સુભાષિતો સવૈયાનાં નથી એમ પણ જણાય છે. ૧૪મું અને ૧૬મું સુભાષિત જોતાં, પ્રથમ નજરે જ તે સવૈયાનું નથી તેમ પ્રતીત થાય છે. જો કે, બહુધા અહીં સંચિત સવૈયામાં લિખિત સુભાષિતો છે અને એટલે 'સવૈયા-સુભાષિત' એવું નામ આપ્યું જણાય છે.

પ્રસ્તુત પ્રત મને ''ઓરિએન્ટલ ઈન્સ્ટિટ્યુટ બરોડા'' તરફથી ઉપલબ્ધ થયેલ છે. તેનો નંબર ૨૨૭૪૫ છે. દેવનાગરી લિપિમાં લખાયેલ જૂની ગુજરાતી ભાષાની આ પ્રત તપાસતાં તેમાં કેટલાંક સુભાષિતમાં તળપદા, અશ્લીલ અને સ્લેન્ગ શબ્દો કે બોલચાલની ભાષાનો વિનિયોગ થયેલ જણાય છે.[1] ૧૩ તથા ૧૫મું સુભાષિત તેનું ઉદાહરણ છે. ક્યાંક મારવાડી કે હિન્દી શબ્દોની છાંટ જણાય. એમાંના અક્ષરો મધ્યમ કદથી થોડા મોટા છે. અક્ષરો વચ્ચે જગ્યા છૂટતી રહી છે. સામાન્ય રીતે પ્રતોમાં વચ્ચે જરા ય જગ્યા ન રહે તેમ ચુસ્ત રીતે લખાતું હોય છે. અહીં શબ્દોના અન્વય પ્રમાણે આજની પેઠે જગ્યા છોડી નથી. છૂટા અક્ષરો છે. ભલે મીંડું કરી (॥ર્દ૦॥) એની બાજુમાં 'સવૈયોઃ' શબ્દ લખીને સુભાષિતોનું લખાણ શરૂ થાય છે. પ્રત્યેક પંક્તિમાં ૩૧ થી ૩૫ અક્ષરો છે. પૃષ્ઠ ૨.૫ છે. (પ્રતમાં આગળ પાછળનું થઈને એક પૃષ્ઠ ગણાય છે. અહીં ત્રીજું પૃષ્ઠ એક છે. પાછળ લખાયું નથી.) પ્રત્યેક પૃષ્ઠ પર કુલ ૧૧ પંક્તિઓ લખાઈ છે. પ્રારંભની પ્રથમ લીટીમાં ખોટું લખાયું છે ત્યાં છેકો માર્યો છે. પ્રસ્તુત સવૈયામાં ત્રણ ચરણો જોતાં જણાય છે કે અહીં, ખોટી પંક્તિને છેકો લગાવ્યા બાદ સાચી પંક્તિ લખવાનું ભુલાઈ ગયું છે. પ્રતમાં વિસર્ગચિહ્નો વધુ જોવા મળે છે ત્યાં ચરણ છૂટું પાડવા લિપિકારે મૂક્યા હોય તેમ જણાય છે. બાકીના વિરામચિહ્નો લિપ્યંતર કરતાં મેં મૂકેલા છે અને જરૂરી છે ત્યાં 'ષ' નો 'ખ' કર્યો છે.

'સ્વાધ્યાય' - પુ. ૫૬, વર્ષ ૨૦૧૯, પૃ. ૧૫-૨૧. ISSN 2250-0391

* ૮, જયમા સોસાયટી, સેટેલાઈટ માનસી ક્રોસ રોડ, પાણીની ટાંકીની બાજુમાં, સેટેલાઈટ કોમ્પ્લેક્ષની બાજુમાં, અમદાવાદ - ૩૮૦ ૦૧૫, M: 07926765442

૧. આવા શબ્દોને મૂળ પાઠમાંથી ભાષાની મર્યાદાને ધ્યાનમાં લઈ રદ કર્યા છે.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

જ્યાં કવિનામ આપ્યાં છે તેવાં સુભાષિતો અને નામ જણાવું તો ૩જા સુભાષિતમાં કવિ ગ્યાંન (જ્ઞાન), બીજું અને ત્રીજું સુભાષિત સુખાનંદવાલો રચિત છે. ૪થું કવિ જીહ, ૫મું કવિ કેશવદાસ, ૯મું કવિ ઋષભ રચિત, ૧૧, ૧૨મું કવિ જિત રચિત હોવાનું જણાય છે. ૧૧માં કવિએ નામ જણાવ્યું નથી પણ તેના વિષય અને લેખન શૈલી જોતાં બન્ને એક જ કવિના જણાયા છે. ૧૪મા સુભાષિતમાં કવિ ઉહાનું નામ છે. સુભાષિતોમાં જુદી જુદી રીતે કાં તો જ્ઞાન વાર્તા આપવામાં આવી છે કે કશોક સંદેશ પાઠવવામાં આવ્યો છે અથવા તો સુંદર શબ્દ ચિત્ર ગૂંથવામાં આવેલ છે, ઔષધવિજ્ઞાન રજૂ કરવામાં આવ્યું છે, કે થવાકાળ થયા વિના રહેતું નથી તેવી હિંદના માનસમાં દૃઢ અંકિત થયેલ માન્યતા ને વિવિધ પાત્રોનાં ઉદાહરણોથી સ્પષ્ટ કર્યું છે.

સુભાષિત ૧૩ અને ૧૫માં પ્રયોજાયેલ સ્લેન્ગ શબ્દો અને અશ્લીલ ભાષા જોઈને, બાકીનાં સુભાષિતોના વિષયો જોઈ, આ બેના સંચય માટે આશ્ચર્ય થયું. જો કે, રતિ-ક્રીડાના વર્ણન જેવાં અપશબ્દોયુક્ત આ સુભાષિતોના કોઈ ગહન અર્થો હોઈ શકે પણ હું સમજી શકી નથી. ભવિષ્યમાં કોઈ જાણકાર આ સંસ્થાને જણાવી શકે તેનો અર્થ.

૧૪મા શ્લોકમાં અધ્યાત્મની સાધનાના માર્ગની વાત જણાય છે પણ મને તેની જાણકારી નથી. કોઈ સાધનામાર્ગનો પ્રવાસી તે વાત સમજાવી શકે.

અહીં પ્રાયઃ પ્રાસ, આંતરપ્રાસ કે ઝડઝમકના પ્રયોગથી સુભાષિત રોચક અને ગણગણવા ગમે તેવાં છે. ૧૧મા અને ૧૨મા સુભાષિતમાં વાજિંત્રના અવાજો, નાટ્યનર્તન વખતે દેવાતા તાલસૂચક શબ્દો અને શંભુના નર્તનનું અતિ રોચક વર્ણન આપવામાં આવ્યું છે. દા.ત. ડિમંડિમ ડમરુ, ઠિમંઠિમ તાલ અને છિમંછિન થતા પાય, ધુપપ્પ ધુપપ-ધુપપપ ઘેઈ જેવો મૃદંગનો અવાજ, તત તત ત થઈ કરી નાચતા શંભુ કે મૃદંગના પટાક પટાકસ્યુના નાદે પડતી તાળીઓનું વર્ણન તમને સરસ મઝાની નૃત્યની મહેફિલમાં હોવાનો અનુભવ અને એની રસમસ્તીનો આનંદ કરાવે તેવું છે. આમાં ઉમા કહે અને ઊભા થઈ નર્તન કરતા શંભુનું કેવું સુંદર શબ્દચિત્ર છે ?!

પ્રથમ સુભાષિતમાં એક ભક્ત નારીનું સુંદર ચિત્ર આપવામાં આવ્યું છે. હરી રંગની ચોળી અને હરી રંગની ચૂંદડી પહેરી હરી (નીલા રંગના શ્યામ)ની છબી જોતી અને એને પૂજતી નારી, ભાવવિભોર બની હરી હરી કરતાં ખુદ નીલી-હરી અર્થાત્ ખુદ શ્યામ પોતે બની જાય છે મતલબ કે ભક્ત અને ઈશ્વર વચ્ચે એવું ઐક્ય સધાયું છે કે અલગતા જણાય નહિ. કબીરજી કહે છે ને લાલી શોધવા જનાર ખુદ જ લાલ બની જાય છે ! શોધક અને શોધપાત્ર બન્ને એક જ બની જાય, તેવી અહીં વાત છે.

બીજા સુભાષિતમાં સંસારમાંની અસમાનતાની વાત કરી છે. ઈશ્વરસ્મરણ અને સૌમાં ઈશ્વર દર્શન થયા વિના અસમાનતા જશે નહિ.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

નાગરી નીચું જુએ અને બ્રાહ્મણી ઊંચે જુએ ? કેવી અસમાનતા ? આસમાન જ ફાટે ને ? ઈંદ્રલોકમાં પણ ઉપદ્રવ મચી જાય અને ત્યારે રામની યાદ આવે. તું છે તો યે આવી અસમાનતા, આવો ભેદભાવ ? આસમાન ફાટે તેવું કંઈ થાય ? આવું થાય ત્યારે મને તો ડર લાગે છે.

ત્રીજા સુભાષિતમાં દીદાર અભિલાષી વ્યક્તિની વાત સુંદર રીતે કરી છે. આ દીદાર એ સ્ત્રી દર્શનનાં હોય કે હરિદર્શનના હોય-ગમે તે હોય. પણ ઘૂંઘટમાં અર્થાત્ આવરણમાં છુપાયેલ મુખનાં દર્શન માટે કવિ ચોખટમાં સાલોથી પોતાનાં પાય-પગને ત્યાં ખોડીને ઇંતેજાર કરી રહ્યા છે ! શા માટે પછી મુખદર્શનનું દાન નથી આપતા ? મુખને ઘૂંઘટમાં સાને છુપાવ્યું છે ? હવે આ કમલદલ જેવી-આંખો કટારી પેઠે દિલને ઘાયલ કરે છે.

ચોથા સુભાષિતમાં ખૂબ સુંદર આંખોનું વર્ણન છે. કમલદલ જેવી આંખોમાં ટસર બેસાડેલ છે જેથી અણિયારી અને તેજસ્વી લાગે છે. કીકીઓ કોમળ પણ છે. પ્રેમમાં રિસાઈ જાય ત્યારે થાય કે કટારી જેવી તેજસ્વી અને અણિયારી આંખોને કાટ નહિ લાગે ?

પાંચમા સુભાષિતમાં પ્રેમિકા કે (હરિ?)નાં દર્શન અને એની સાથે વાત કરવાનાં અરમાન રાખનારની વાત છે. વર્ષો તો એળે ગયાં. હવે દિવસો થોડા છે. કાળજું બળી રહ્યું છે તો હવે કૃપા કરો. પગે લાગું છું ત્યારે આમ તેમ કેમ જોયા કરો છો ? મન માને તો વાત કરવા દેજો પણ બોલવામાંથી ય કેમ જાવ છો ? એવી વિમાસણ અનુભવનારની વાત છે.

કવિ જીહ અને કવિ કેશવદાસ ૬ અને ૭મા સુભાષિતમાં રૂપિયાની-ધનની બોલબાલા છે, પ્રભાવકતા છે તેની વાત કરે છે. તમે રૂપવાન હોય, વેદ ભણ્યા હોવ, ઊંચી જાતનો હોય, ગુણવાન હોય તો યે પૈસો ન હોય તો તે મોટો ન કહેવાય. મા માટે કે બહેન માટે પણ ગાંઠે રૂપિયા હોય તો જ માનપાન.

પૈસા હોય તો લોકો આવીને પગે પડે, માતા-પિતાને વહાલો લાગે, ભૂતલે ભીમ જેવો બળવાન ગણે, એની જૂઠી વાત સાવ સાચી મનાય, લોકો માટે તે ગુણવાન હોય, ખરેખર તો તેઓ બધા માટે ગાંઠે રૂપિયા છે તે જ મોટો છે.

૮મા સુભાષિતમાં કઈ વસ્તુ કઈ વસ્તુનો દોષ હરે તે દર્શાવતા વિજ્ઞાન અને ઔષધશાસ્ત્ર વગેરેના દૃષ્ટાંત આપે છે. અગ્નિને ઠંડુ પાણી હોલવે, છત્રી સૂરજના તાપને ઓછો કરે. વ્યાધિ હોય તો વૈદ જોઈએ, ઘોડાને ચાબખા અને હાથીને અંકુશ જોઈએ. ભૂત માટે વિષજ્વર મંત્રની જરૂર, આમ આ સૌ વસ્તુના ઉપાયો છે પણ મૂરખ માટે કોઈ ઔષધ નથી. કોઈ ઉપાય નથી. અડધો પરાક્રમ કર્યા વિના રહે નહિ !

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

૯મા સુભાષિતમાં ઘીની મહત્તા દર્શાવી છે. ઘી થી વાન વધે, કાન સરવા બને એટલે કે શ્રવણશક્તિ વધે. ખરજવાથી પડેલ ખાડા જાય, ઘડપણ ન વ્યાપે. રકતધાતુ ધ્રૂજે નહિ. કમર સરખી નહિ એટલે કે પાછળ ખૂંધ ન નીકળે કે વાંકી ન થાય. બુદ્ધિ એવી તેજસ્વી બને કે અર્થ તરત સૂઝે, ઘી આમ, મુખની શોભા છે. અન્ય સુભાષિતમાં કહેવાયું છે કે વિદ્યા વિનાનો નર પુચ્છ અને શિંગડા વિનાના પશુ સમાન છે. અહીં કવિ ઋષભ ઘી માટે કહે છે કે ઘીનો ઉપયોગ ન કરે તે સૂકી લાકડી જેવો છે.

૧૦મા સુભાષિતમાં સાનુકૂળ કે વિપરિત પરપરિસ્થિતિનો પ્રભાવ ઘટના પર પડે છે અને એકના માટે ન સારું તે અન્ય માટે શુભ નીવડે. કહે છે : આંબા પલ્લવિત બની, મીઠી કેરીઓ ક્યારે આપે ? તેની વાત કરે છે. ગરમીને તમામ લોકો વખોડે, ગરમીથી ત્રાહિ ત્રાહિ પોકારે. પણ વાવ કૂવા સુકાઈ જશે એમ લાગે, પ્રચંડ લુ લાગે, પૃથ્વી આખી ધગધગી જાય, તેવે વખતે કૂવાનું પાણી આપવામાં આવે તો આંબા પર પત્ર, ફૂલ, ફળ, મંજરી ખૂબ પ્રમાણમાં જોવા મળશે અને કેરીમાં શાખ પડશે અને સાકર સમી મીઠી કેરી આપતો આંબો કલ્પવૃક્ષ જેવો બનશે.

૧૪મા સુભાષિતમાં દેખીતું તો પૃથ્વીનું ઉદાહરણ છે. શ્યામલી છે પણ પોતાનામાં બધું જ છે. ઉપરથી ભલે તે ઉબડ-ખાબડ, નૂરવાળી ન હોય તેવી જણાતી હોય પણ એને ખેડો અને પાક લેવો હોય ત્યારે ચાર આંગળ પહોળી, આઠ-દસ આંગળ ઊંડી, બે તરુઓ વચ્ચે જગ્યા હોય એ તરુનો વિકાસ થતો હોય છે. સાધનામાં પણ સાધક એ સ્થિતિ પામે (ધ્યાનાવસ્થામાં) ત્યારે લખેસરી જેવી સોય પામે. કરવા જેવું કામ આ છે. (સાધનાની આ અવસ્થા સમજાવવી એ મારા ક્ષેત્ર બહારની વાત છે પણ હું અહીં સમજું છું તેમ વાત જણાવી છે.)

૧૬મા સુભાષિતમાં શંખ જલ ભરે, દશરથના શરસંધાનની વાત, રાવણ સીતાનું હરણ કરે, રામ સેતુ બાંધો જેવાં દૃષ્ટાંતોની સાથે દ્રુપદ, કીચક, ધુત ખેલનાર પાંડવો અને યુદ્ધના મંડાણ વગેરેનાં દૃષ્ટાંતો આપી કવિ કહે છે કે એકવાર વિધિલેખ લખાય પછી તેને ભોગવ્યે જ છૂટકો. ભાવિનું નિર્માણ અફર છે. તેને બદલી શકાતું નથી.

આમ આ સુભાષિત સવૈયાનો સંચય જ્ઞાન, ડહાપણની અનેક વાતો કહી જાય છે. કેટલીક અગમ્ય વાતો તે તે ક્ષેત્રના લોકો માટે ખપની છે.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

।। સુભાષિત સવૈયો ।।

।।ર્દ૦।। સવૈયો

સારી હરી ચુનકે પેહરી, અરૂ ચોલ હરી સબ સુધે ભરી હે ।
પોત હરી, મુખ જોત હરી, ત્રીય જોવન જરાય જરી હે ।
કુંજ હરી, સુખ પુંજ હરી, ચલો, દેખ હરી મેં, હરીસુ ધરી હે ।।૧।।

નીચુ નિહાર તુ નાગરી, બ્રાહ્મણી ઉચ દેખે અસમાંન ફટેગે ।
ઈ(ઈં)દ્રકે લોકમેં હોત ઉપદ્રઈ, સબકો સબને જ ઘટેગો ।।
થકે જ્યુ પવન થથે રવી બાઝી નરાં મહી રાંમ જગત્ર જપેગો ।
મોહેકુ તાર અસો ડર આવત તેરે દેખ્યાં અસમાંન ફટેગો ।।૨।।

તુમ રચ્યાલ ખુસાલમે ચાલત હો, ટુક પાઉ ખડે રહો ચોહરમે ટુક યાર ।
દીદારકું દાન કરો, કાહ માંન ધરો ઈતનો મનમેં ચિત્ત ચાતુરી નાર ।।
વિચારીયો જ્યુ ફલ સિધ નહી કછુકા પટમે।
કવિ ગ્યાંન કહે કછુ લેત નહીં, કાહા ચાંકત હો મુખ ઘુંઘટમે ।।૩।।

ઠારી આંખિ કમલના દલ જેહવી માંહે ટસર બેસારીયો રે ।
અણિઆલિયો ને અજુઆલિયો છૈ, માહી કીકીઓકા મલ-ગારીયો રે ।।
રીસાયનેં રુડીય પ્રેમની ઉડીય, જાનું એ હતી બલિહારીયો રે ।
સુખાનંદવાલો રહે જ્યું કાટવા કીધિ છે, કીમ કટારી યો ।।૪।।

બહુ દિન્ન અસ્યા માંહે એલે ગયા, હવે ફાસુ દિન ગાલો છો કાં ?
એકવાર કૃપા કરો, જન્મ માહેહ લ્યાઈ મત્તે, કાલજ્યું બાલો છો કાં ?
સુખનંદવાલો પગ પાય લાગે ત્યારે મુખ અરુપરુ ભાલો [છો] કાં ?
મંન માંને તો, વાત કરવા દીજો પેલિપણ, બોલવા માંહથી ટાબો છો કાં ?।।૫।।

નાહિ વડો અતિ રુપ વિલક્ષણ, નાહિ વા(વ)ડો વિધિ વેદ પઢીયા ।
નાહી વડો જસુ જાત સુ, નાહિ વડો ગુણ ગીત ગવિયા ।।
માય કહે મેરે એક જ પુત્તકે, બહેન કહે મેરે એક જ ભઈયા ।
કવિ જીહ કહે સુણ હો નર સજન, સોઈ વડો જાકિ ગાંઠ રુપિયા ।।૬।।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

વાહ કરે જન કિ જગમેં અબ આય કે પાય નમે ભલે ભઈયા ।
માતકુ તાતકુ લાગે વલ્લભ, ભીમની ઝેમ ભુતલે તબ લિયા ।।
વાત જુઠી સબ સાવ સહિ, માનત લોક ગુણી જસવાસ કહિયા ।
કેસવદાસ કહે, સુન હો નર સજઝન, સોઈ વડો જાકિ ગાઠ રુપિયા ।।૭।।

પાવકકું જલષિત નીવારત, સુરજ તાપકું છત્ર દિયો હે ।
વ્યાડ્યાદધિ વૈઈદે, તુરંગકુ ચાબખા, ચોપદકું બર્ષ(?) ડંડ હો ।।
હાથી માહા મદકુ હરી અ (અં)કુશ, ભુત વિષજ્વર મંત્ર કહો હે ।
ઉષદ (ઔષધ) હે સબકે સખિ ઉખધ મુરખ ઉખદ નહિ કહો હે ।।૮।।

ધીઈ વાધે વાંન, કાંન પિણ સર્યા થાયે,
આંખે વાધે તે જ, ખરજ ને ખાડો જાયે ।
જરા ન વ્યાપે અંગ, રગતઉધાત્ત ન ધુજે ।।
મુખનું મંડણ ઘૃત, કાં કોઈને દેતો હડિ ?
કવિ ઋષભ ઈણ પરે ઉચરે, ઘૃત વિહુણા નર જેહ જે જાણે સુકિ લાકડિ ।।૯।।

જિણ દિન પ્રઠન પ્રચંડ લુય ઝડ તાપ તડકા ।
જિણ દિણ નહિ અનીવાણ, વાવ કુયા સવિ સુકા ।।
જિણ દિન આકત દુધ ગી મહચિ સબ થકિ ।
તિણ દિન કૂપ સરંત, અંબત્તહ લુબ લહકિ ।।
ફલ ફુલ પત્ર પરીમલ બહુલ સતરવર દીસે સમા ।
તિણ દિવસ સાખ્ય, સાકર સૂહ પકહ અંબ હુતુ કલ્પદ્રુમા ।।૧૦।।

સંગીત કર, ડેરુ ડિમંડિમ, પાય ઠિમંઠિમ, તાલ છિમંછિનં ભારતભેઈ ।
ગિરકંદ સજે શિરસિ સરવ લંકતિ શેષ ખલકત્તિ સારદસેઈ ।।
ઉહા વાજે મદંગ ધુપપ્પ ધુપપ ધુપપપ ઘેઈ ।
નાચત શંભુ ગિડ તત્તઃ તતઃ તત થેઈ ।।૧૧।।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ઉમયાકે કહે તબ શંભુ ઉઠે ઉહા નાચત ખેલ કિયા મનહારી ।
કર એક સીરે કર પીછે ધર ખેલન લાગે વાઘંબરધારી ।।
સબ તેત્રીસ કોડસ્યુ દેવ મલે કવિ જીત કહે રહે કીત્તિકહારી ।
ઉહા વાજે મૃદંગ પટાક વટાક સ્યુ એસે વજે કરે એકસે તાલિ ।।૧૨।।

ઉચા ઢોર રહે જેસો દ્વારકો થંભ ન આડો રહે, જેસે ડોલિકો ડાંડો ।
દૂતિસ્યું દેખ તમે ખસ્યૂં પેખત ..... દેખત ચોગ તો ચોડો ।।
આ તો મુશલહે કેદ તુસલહે કિસકા કુતકા ગજવેલકા ખાડો ।
નાહિ તો ..... રંજન, ગામકો ગંજન, ... ભંજન સ્યામકો લાડો ।।૧૩।।

ધરા ભોમ સ્યામલિ, માહે પિણ સઘલા વાનાં ।
ઉપર નુર સનુર ભલા હો વજ દિસે કાંના ।।
ચાર આંગુલ ચોડિ, આઠ દસ આંગુલ ઉ(ઉં)ડી ।
હોય પગા વિચ વલવલે, એ તરુ લહલહતિ કુંડિ ।।
સ કો નર ભમે સોજતા, પામે સોચ લાવે સરી ।
કર જોડિ કવિત ઉહો કહે જવ જવ જગત કુડે સરી ।।૧૪।।

સુહાલિસ દલિ, કનક સરિખાં કાંના ।
હરણ ખુરી સીહે ગલો, વિચવિચ સહરાતા વાંના ।।
અણીયા આગલિ, ત્રિકુટ ગઢ જેમ ત્રિખુણિ ।
રૂપાલી રૂપાલી દલિ, દિઠે દીપે અતિ ઘની ।।
અતો સારા જગતરી સોસડિ ।
ભેટતા ભવના દુખ ભાજ છે ?
ભારી તીરથ તે ..... ।।૧૫।।

કાહી સંખઉ જલ ભરે, કિહા દશરથ સર સંધે ।
કાહા રાવન સીય હરે, કાહા રઘુપતિ દધિ બંધે ।।
કિહા પાંડવ જુવ રંમે, કાહા વીગ્રહ ભુવ મંડે ।
ભવતવ્ય ભોગ ભુગતે બને, કોટિ જતન સુરનર રહે ।
કિરતાર કલમ કર ફિર ગહી તો લખો અબ કબહુ ન મટે ।।૧૬।।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

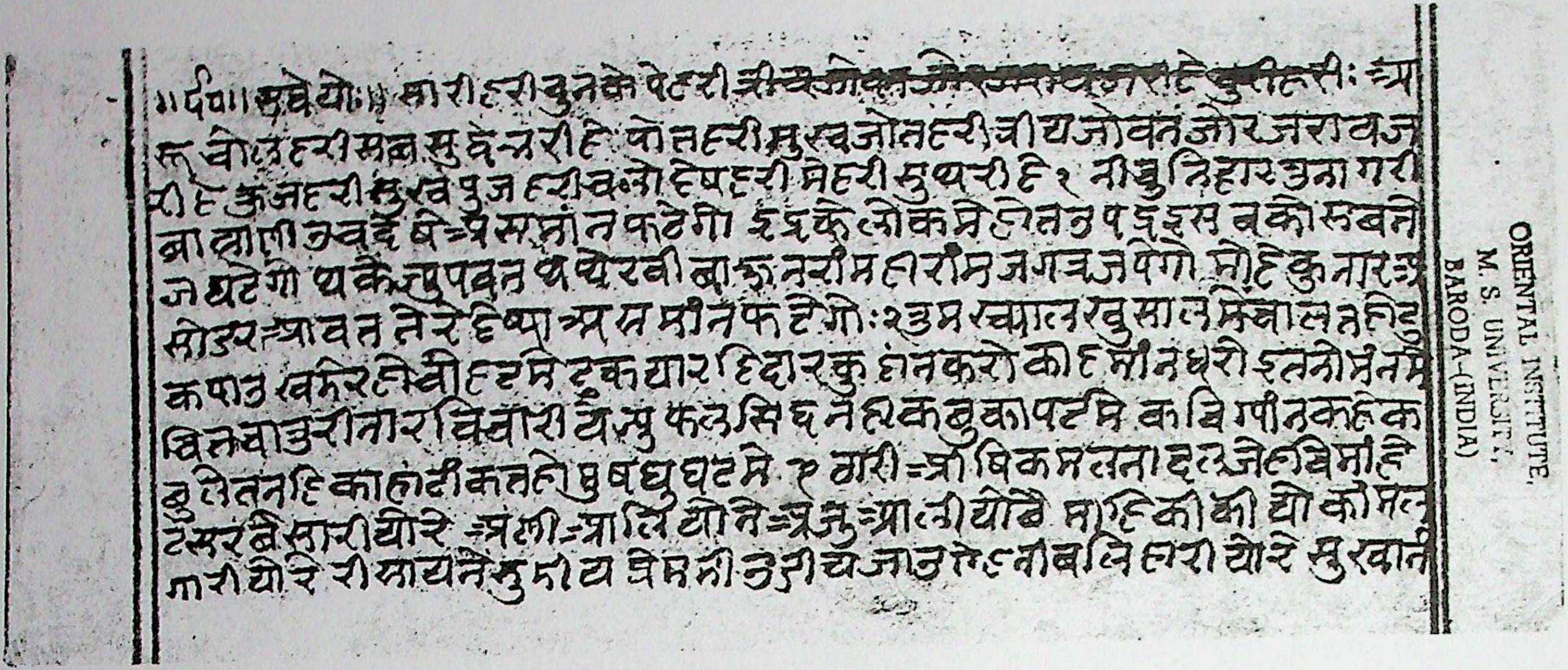

સવૈયા સુભાષિત, પ્રાચ્યવિદ્યામંદિર, હસ્તપ્રત - ક્રમાંક : ૨૨૭૪૫

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

હિરાનન્દ ભટ્ટકૃત "નર્મદાસ્તોત્ર" – પરિચય અને પાઠ

જે. કે. ઉમરેઠિયા*

જ્યાં જ્યાં નદીઓ વહે છે ત્યાં ત્યાં નદીકાઠાં ઉપર ભિન્ન ભિન્ન પ્રકારના લોક વધુ પ્રમાણમાં સ્થાયી થયા છે. નદીકાંઠા પર નિવાસ કરતી પ્રજાએ પોતાના સંસ્કાર દેશભરમાં ફેલાવ્યા છે. 'નદી માતૃક દેશ' એવો શબ્દપ્રયોગ પણ નદીને લોકમાતારૂપે યાદ કરાવે છે. વિવિધ નદીઓને ધ્યાનમાં રાખીને કવિઓએ એનાં ગુણગાન ગાયાં છે. મા નર્મદા અને રેવાજીને ઉદ્દેશીને પણ સંખ્યાબંધ કાવ્યો, સ્તોત્રો, રાસ, પ્રબંધ વગેરે રચાયાં છે. 'રેવા' ચલચિત્ર આવ્યા પછી સાંપ્રત સમયમાં ફરી નર્મદામૈયા પ્રત્યે ભક્તિનો જુવાળ ઉમટેલો જોવા મળે છે. આ નદીનું દર્શન કરવા માત્રથી મનુષ્યનાં તમામ પાપ ધોવાઈ જાય છે એમ કહેવાયું છે. 'જેટલા કંકર એટલા શંકર' એવી કહેવતમાં પણ નર્મદાનો અપાર મહિમા વ્યક્ત થયો છે.

નર્મદા વિશે અનેક દંતકથાઓ પ્રચલિત છે.[૧] છેક પુરાણોમાં પણ આ નદી વિષયક ઉલ્લેખો પ્રાપ્ત થાય છે. જેમ કે સ્કંદપુરાણમાં 'રેવાખંડ', વલ્લભ ભટ્ટકૃત 'રુદ્રદેહા સ્તોત્ર' વગેરે. ૧૦૮ ભુજંગી છંદમાં સં.૧૭૫૭માં રચેલું 'રુદ્રદેહા' સ્તોત્ર અમદાવાદ વિદ્યાસભાના સંગ્રહમાં મળી આવે છે. આ ઉપરાંત ઉમિયાદાસે સં.૧૭૭૮માં આવેલી ભયંકર રેલનું વર્ણન ગરબારૂપે કર્યું છે. આ અતિ પ્રસિદ્ધ ગરબાની પંકિતઓ નર્મદાકાંઠાના, ખાસ કરીને જૂની પેઢીનાં સ્ત્રીપુરુષોના મુખે આજેય ગવાય છે. આ ગરબાની એક પ્રતિકૃતિ મહારાજા સયાજીરાવ વિશ્વવિદ્યાલય, વડોદરાના પ્રાચ્યવિદ્યામંદિરમાં છે એમ નોંધાયું છે.[૨] આ ઉપરાંત નર્મદાસંબંધી માહિતીપૂર્ણ હિન્દી પુસ્તક 'નર્મદારહસ્ય' (૧૯૩૪) પણ નોંધવાલાયક છે.[૩] આ પુસ્તકમાં સ્તોત્રો, નર્મદાલહરી, કબીરવડ ઇત્યાદિ રચનાઓ ઉપલબ્ધ થાય છે જે તુલનાત્મક અભ્યાસ કરનાર સંશોધક માટે ઉપયોગી બની રહે તેમ છે.

'સ્વાધ્યાય' – પુ. ૫૬, વર્ષ ૨૦૧૯, પૃ. ૨૩-૨૮. ISSN 2250-0391

* પ્રાચ્યવિદ્યામંદિર, મહારાજા સયાજીરાવ વિશ્વવિદ્યાલય, રાજમહેલ દરવાજા પાસે, રાજમહેલ રોડ, વડોદરા - ૩૯૦૦૦૧

M: 9427849843, Email: jkumrethiya70@gmail.com

૧. મજમુદાર (ડૉ.) મંજુલાલ, રેવાને તીરે તીરે, અવધૂત સાહિત્ય પ્રકાશન ટ્રસ્ટ, નારેશ્વર, બીજી આવૃત્તિ સં. ૨૦૭૨

૨. એજન, પૃ. ૭

૩. એજન, પૃ. ૮

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

મધ્યકાલીન ગુજરાતી કવિ દયારામે નર્મદાનું વર્ણન કરતાં કહ્યું છે :

શ્રી નર્મદાજી તટ ઉપર ચારુ ચંડીગ્રામ :
મહિમા વખાણું શું સ્થળ તણો, સમોવડ વૈકુંઠધામ.

કવિશ્રી ડૉ. બળવંતરાય ઠાકોરે પોતાના એક સોનેટમાં નર્મદાનું માહાત્મ્ય ગાયું છે.[૪] કવિ સુંદરમ્, રા. વિ. પાઠક, કવિ પૂજાલાલ જેવા કવિઓએ પણ પોતાનાં કાવ્યોમાં અનેકવિધ દષ્ટિકોણથી નર્મદાનાં ગુણગાન ગાયાં છે. નદીકિનારાના પ્રદેશોમાં પ્રચલિત વ્યક્તિનામો જેવાં કે, નર્મદા, રેવા, યમુના, ગંગા, કાવેરી, ગોદાવરી વગેરેમાં વિવિધ નદીનો જ પ્રભાવ જોવા મળે છે.

નર્મદા વિષયક અનેક કાવ્યો તથા પુસ્તકો સુપ્રસિદ્ધ છે. જયંત કોઠારીએ જૈન ગૂર્જર કવિઓમાં જુદા જુદા ભંડારોમાં સચવાયેલી કૃતિઓ-કવિઓને સમાવિષ્ટ કરતી સંશોધિત સંવર્ધિત આવૃત્તિનું સંપાદન કર્યું છે જેમાં નર્મદાવિષયક કૃતિઓ જુદાં જુદાં નામે મળે છે. જેમ કે નર્મદાસુંદરી પ્રબંધ (ર.સં. ૧૬૪૩)[૫], લગભગ સં. ૧૬૫૦માં લખાયેલો ૩૨૯ કડીનો નર્મદાસુંદરી રાસ[૬], સં. ૧૬૭૮માં રચાયેલ નર્મદાસુંદરી ચોપાઈ[૭], સં. ૧૬૯૫માં રચાયેલ નર્મદાસુંદરી રાસ[૮], નવાનગરમાં સં. ૧૭૦૧માં રચાયેલ નર્મદાસુંદરી ચોપાઈ[૯], નર્મદાસુંદરી રાસ[૧૦], ૬૩ ઢાળમાં સં. ૧૮૫૪માં સમીનગરે રચાયેલો નર્મદાસુંદરી રાસ[૧૧], ૨૮ ઢાળમાં સં. ૧૮૪૧માં જોધપુરમાં રચાયેલ નર્મદાસતીની ચોપાઈ[૧૨] વગેરે નોંધપાત્ર છે. N.C.C.માં નર્મદાસ્તોત્ર શીર્ષકથી બે હસ્તપ્રતોમાં નોંધાયેલી છે. આ ઉપરાંત એમાં નર્મદાકવચ, નર્મદાખણ્ડ, નર્મદાગંગાષ્ટક, નર્મદાગિરિ, નર્મદાપુરાણ, નર્મદામહિમ્ન, નર્મદામહાત્મ્ય, નર્મદાલહરી, નર્મદાષ્ટક, નર્મદાસહસ્રનામ, નર્મદાસુંદરીકથા જેવાં વિવિધ શીર્ષકોથી નર્મદા વિષયક હસ્તપ્રતો નોંધાયેલી છે.[૧૩]

---

૪. મજમુદાર (ડૉ.) મંજુલાલ, રેવાને તીરે તીરે, પૃ. ૧૪
૫. જૈન ગૂર્જર કવિઓ, ભાગ-૨, સંપા. જયંત કોઠારી, શ્રી મહાવીર જૈન વિદ્યાલય, મુંબઈ, બીજી આવૃતિ, ૧૯૮૭, પૃ. ૧૮૬
૬. એજન, પૃ. ૨૬૬
૭. એજન, ભાગ-૩, પૃ. ૨૨૪
૮. એજન, પૃ. ૩૦૬
૯. એજન, ભાગ-૪, ૧૯૮૮, પૃ. ૩૫
૧૦. એજન, પૃ. ૩૧૦
૧૧. એજન, ભાગ ૫, ૧૯૮૮, પૃ. ૧૩૭
૧૨. એજન, ભાગ-૬, ૧૯૮૯, પૃ. ૯૭
૧૩. New Catalogus Catalogorum, Vol.1, Edited: Dr. K. Kunjunni Raja, University of Madras, 1977, pp. 373-374

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

પ્રાચ્યવિદ્યામંદિરના કેટલોગમાં ક્રમાંક ૨૪૩૪૨થી નોંધાયેલ કૃતિ હિરાનન્દ ભટ્ટકૃત 'નર્મદાસ્તોત્ર' મળે છે.[૧૪] આ કૃતિની ભાષા ગુજરાતી છે. લિપિ દેવનાગરી છે. બે પત્રો અને ૨૦ સ્તોત્રોમાં લખાયેલ આ કૃતિનું પરિમાણ ૨૪ X ૧૪.૫ સે.મિ. જેટલું છે. કૃતિ પ્રાચ્યવિદ્યામંદિરને ભેટસ્વરૂપે પ્રાપ્ત થયેલ છે. કૃતિમાં વ્યાકરણગત અશુદ્ધિઓ પુષ્કળ પ્રમાણમાં જોવા મળે છે. દા.ત. નિર-નીર, ખાખિ-ખાખી, કરિ-કરી, શ્રેણિ-શ્રેણી, જિતિ-જીતી વગેરે. આ પ્રકારની હ્રસ્વ-દીર્ઘ પ્રકારની જોડણી વિષયક અશુદ્ધિઓ મૂળ પ્રમાણે જ રાખી છે. કેટલીક જગ્યાએ શાહીનાં ડબકાં પડ્યાં હોવાથી સ્પષ્ટ ઉકેલાતું નથી. કૃતિમાં હ્રસ્વનો બહુલ પ્રયોગ થયો છે. જે મૂળ પ્રમાણે જ પાઠમાં જાળવી રાખ્યો છે. ક્યાંક હાંસિયામાં લખેલ લખાણ પણ ડબકાંથી ભુંસાયું છે. એવું લખાણ અનુમાનથી ઉકેલ્યું છે. ઘણા શબ્દોમાં અનુસ્વારનો વધુ પડતો પ્રયોગ પણ લેખન ખાસીયત બતાવે છે. દા.ત. હોયેં, ક્ષોભેં, ભણેં વગેરે. રાંણી, કાંમ, પાંમી વગેરેમાં પ્રયોજેલા પ્રચલિત અનુનાસિકો પણ ધ્યાન ખેંચે છે. વ્યવસ્થા ખાતર દરેક પંકિતને અંતે દંડ મૂકયા છે જે મૂળમાં નથી. કૃતિનો આરંભ "શ્રી ગણેશાય નમઃ" જેવા મંગલાચરણથી થાય છે. શરૂઆતના પ્રથમ ચરણમાં નોધ્યું છે કે "શ્રી અચલનાથજીની કૃપા છે" સ્તોત્રની પ્રથમ કડીમાં મિત્રબંધુને ઉદ્દેશીને નર્મદાની સ્તુતિ કરાઈ છે. ત્યારબાદ નર્મદાનાં નિર્મલ નીર, એનું પુણ્ય, રેવાજન્મ, એમાં સ્નાન કરવાથી પાપ મટે, એનું દર્શન કરવા સ્વર્ગેથી દેવો પણ વિમાનમાં બેસી પધારે છે એમ કહેવાયું છે. નર્મદાની ભક્તિ, સંસારમાં નર્મદા વગર પાપને કોણ ટાળશે એમ કહીને કેવાં કેવાં પાપ ટળે છે એ પુનઃ દર્શાવ્યું છે. નર્મદાનાં નીર, વાતાવરણની કવિ છોટાલાલ નરભેરામ ભટ્ટે પણ પોતાના 'રસશાસ્ત્ર' પુસ્તકમાં 'શાન્ત રસ'ના ઉદાહરણ તરીકે નોંધ લીધી છે.[૧૫]

નર્મદાનું જળ પીવાથી મૂર્ખબુદ્ધિના મુખે પણ વિદ્યા જળહળે છે. નર્મદા, રેવા અશક્ત લોકોને પણ સહાય કરે છે. ટૂંકમાં દરેક સ્તોત્રમાં નર્મદાની પ્રશસ્તિ કરવામાં આવી છેઃ

મહિમા તણો નૈવ જ પાર જ આવે નદિ નર્મદાને ભજો શુધ ભાવે.

નર્મદાની કથા જે સાંભળે, સંભળાવે તેને મહાદ્દુઃખમાંથી મુક્તિ મળે છે અને વૈકુંઠમાં વાસ થાય એવી ફલશ્રુતિ દર્શાવી અંતે આ સ્તોત્ર ચૈત્ર સુદ સાતમે લખેલ છે એમ પુષ્પિકામાં કવિએ લખ્યું છે કે-

હિરાનન્દ ભટ્ટે રચા શ્લોક યુક્તે ભવાંનિ તણા ચરણની ।
સાર ભક્તે નિવાસે વસે વંસ રે તેય માટે શુદિ ચૈત્રની સપ્તમી રખસાવે ।।૨૦।।

ઇતિ નર્મદાસ્તોત્રં સમાપ્તં ।।શ્રી

---

૧૪. *An Alphabetical list of Manuscript in the Oriental Institute,* Vadodara, Vol. 4, Ed. Usha Brahmachari, Sweta Prajapati, Pub. Oriental Insitute, Vadodara, First Edition, 2008, pp. 258-259

૧૫. મજમુદાર (ડૉ.) મંજુલાલ, રેવાને તીરે તીરે, પૃ. ૧૩

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

અહીં લેખકે કૃતિ રચાયાનું કે લખાયાનું વર્ષ આપ્યું નથી. નર્મદાને જોઈને કવિ એનું બાહ્ય અને આંતરિક સૌંદર્ય, એના પ્રત્યેનો ભક્તિભાવ, સંસ્કૃતિ, ધર્મ વગેરેનું દર્શન કરાવે છે. આ પ્રકારનાં સ્તોત્રો, કાવ્યો દ્વારા ખ્યાલ આવે છે કે કવિ નર્મદાને તીર્થસ્થાનરૂપ ગણાવી એના પ્રત્યે અનેરો ભક્તિભાવ પ્રદર્શિત કરે છે.

કવિએ 'નર્મદાસ્તોત્ર'માં નર્મદાના માહાત્મ્યને ઉદાત્ત ભાવે ભાવસભર વર્ણવ્યું છે.

આ સ્તોત્રનો વિશેષ પરિચય પ્રાપ્ત થાય તે હેતુથી એનો હસ્તપ્રતના આધારે સંપાદિત કરેલો પાઠ નીચે મુજબ છે.

॥ નર્મદાસ્તોત્ર ॥

શ્રી ગણેશાય નમઃ॥

શ્રી અચલનાથજિની ક્રપા(કૃપા) છે.

ભલા મિત્ર બંધુ નહિ સુ વિચારો, કલિકાલ તે વ્યાલ વ્યાધ્યો ન જાંણો ॥
ઉપાયે જાંણો દુષ્ટને ચિત રાષિ(ખી) નહિ ભાગસે નરબદા નીર પાષિ(ખિ) ॥૧॥

વહે નિર્મલિ નરમદા નિરશ્રેણિ પ્રભાવે કરિ રમ્ય જિતિ ત્રિવેણિ ॥
ઘણા દેવ ગંગાનદિ વીષા(ખા)ણેં વિશેશ થકિ નરમદા પુણ્ય જાણોં ॥૨॥

હિમાલે માહો કન્યકા-દાન દિધુ શિવેપારવતિ હસ્ત ઝાલિને લુ(લી)ધુ ॥
ઘશું(?) હસ્તમાં હિ(હ)સ્ત કિનિર જારે, નદિ નરબદા પ્રગટિ સદ્ય તારે ॥૩॥

થયો જન્મ રેવા તણો મે કુલેથિ કરી નંદની પર તેજ તેથિ ॥
ઘણા દેશ શોધિ ગિરિને વિદારિ પછે તીર્થ પાંમો નદિનો વિહારિ ॥૪॥

નદી નરમદા નિર વેણિ વિરાજે જલ ગગડિં ગરજના(ગર્જના) ઘોર વાજે ॥
માહા ઓઘથિ ઠિર ના લોક ઘૂટેં નદિ સ્નાનથિ પાપનાં મૂલ ત્રુટે ॥૫॥

મુગટ મુ(મ)સ્તકે શોભત તે ધરિ રે નૈચિ રમ્ય તે વેષ રુડા થઈને ॥
ઘણા સ્વર્ગથિ દેવ બેસિ વિમાસે પધારે નદિ નરમદા નિર પાંમેં ॥૬॥

ઘણા દેવ નારિ ગ્રહિ હસ્ત ઝારિ નવયૌવન વૃધ બાલ કુમારિ ॥
ભલા શોભતા શોલ સૂંગાર સારિ પધારે નદિ નરમદા પુણ્ય વારિ ॥૭॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

રહા કેટલાક તે તટે વાસ પુરિ મુનિ દેવ ગંધર્વ ને યક્ષ સુરિ ।।
માહાદૈત્ય નેં યક્ષ વાસેં વસે છે, ધરી ધ્યાન મુનિ હરિનેં ભજે છે ।।૮।।

હૃદે હોય જો સ્વર્ગ વૈકુંઠ લેધો(વો), ઘણિ ભક્તિથિ નરમદા નિર સેવો ।।
નથિ સાર કાંઈ જ સંસારકાલેન વિના ન(ર)મદા પાપને કુણ ટાલે ।।૯।।

યેના નિરનોં દશને શું ન થાયે, પશુ બ્રહ્મહત્યા તણુ દુઃખ જાયે ।।
માહા રોગ નેં દુઃખદારિદ્ર નાસે રહે રાત્રિનું ધ્યાંત(ધ્યાન) શું સુર્યભાસે ।।૧૦।।

નદિ નરમદા નિરના બિંદુ પાંમેં મહા પાતકિ જાયે વૈકુંઠ ઠામે ।।
સદા પુત્ર નારી ધનેથિ જ સોભેં, મહિમા સ્થકી સરવ બ્રહ્માંડ ક્ષોભેં ।।૧૧।।

પિયે નિર્મલિ નરમદા નિર ભક્તેં કરેં માતાનિ શેવના શાસ્ત્ર યુક્તેં ।।
જડો હોય જે જન્મનો મુર્ખ બુધિ મુખે જલહલે સર્વવિદ્યા ચ શુધિ ।।૧૨।।

માહાદેહનો ક્ષિણ નિશ્ચેં જ હોયેં, ગલન્કોઢથિ સર્વ ગાત્ર તે કોહેં ।।
અનુસરેં નર્મદાસ્નાન જો ભાવ આંણી જોઈ તેજ તહનુ નમે કાંમ રાંણી ।।૧૩।।

મુખે બોબડા ચિબડા આંખ આંધો(ધળો) પગે પાંગલો કરણ બેરા જ વંધ્યા ।।
કરેં નરમદા નિરની પાંન સેવા સહુ દાષ તેહેના હરે માત રેવા ।।૧૪।।

યેહેના વૃક્ષનુ જન્મ છે પુણ્ય તિરે થઈ વધ્યા તે નરમદા સાર નિરે ।।
છ(છે) પુણ્ય કિધું માહા પુર્વજન્મેઃ પિયે ને જુયેં નિત્યં નિત્યેં જ ધર્મે ।।૧૫।।

મહિમા તણો નૈવ જ પાર જ આવે નદિ નર્મદાને ભજો શુધ ભાવેં ।।
માહા સારામાં સાર છેં તીર(રેવા)વોરે યેહેના નિરથિ સ્વર્ગના લોક લેવા ।।૧૬।।

વિચારી જુઓ કાલમાં જિવ ખોટો, છે અંત મલે ભ(ક્તિ) પંથ (મો)ટો ।।
ફરે વ્યો(મ)માં વિજલિ સદ્ય જાયે તમ દેહનો પ્રાણનો નાશ થાયે ।।૧૭।।

યેણે નિરમલું નર્મદા નીર પીધું, ત્રણે લોકનુ સર્વ તે સારુ લિધું ।।
માહાયજ્ઞ કિધા ઘણાં દાન આપેં રણ તે સર્વ (શ્વ) વંશનાશ થતે કાપાં ।।૧૮।।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

કરિ જે કથા નરમદા નિજ ભાવે પ્રભાતે ભણેં સાંભલે સંભલાવે ।।
મહા દુ:ખ નેં પાપનો લેશ જાયે માહાસ્મૃધિ વૈકુંઠજામાં વાસ થાયે ।।૧૯।।

હિરાનન્દ ભટે રચા શ્લોક યુક્તે ભવાંનિ તણા ચરણની સાર ભક્તેં નિવાસે
વસેં વંસ રે તે ય માટે શુદ્દિ ચૈત્રની સપ્તમિ વરષ સાખે ।।
ઈતિ નર્મદાસ્તોત્રં સમાપ્તં ।।શ્રી

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

રઘુદેવ ભટ્ટાચાર્યકૃત લક્ષણાવાદઃ - અપ્રકાશિત નવ્યન્યાયવાદગ્રંથ

શ્વેતા પ્રજાપતિ*

ભૂમિકાઃ

પ્રાચ્યવિદ્યામંદિર, વડોદરા તેના હસ્તપ્રતના મૂલ્યવાન સંગ્રહ માટે પ્રખ્યાત છે. વિવિધ વિષય, અને લિપિઓમાં પ્રાપ્ત ૩૦,૦૦૦થી વધુ હસ્તપ્રતોના આ સંગ્રહમાં ન્યાયશાસ્ત્રની ૭૫૦ જેટલી હસ્તપ્રતો ઉપલબ્ધ છે. તેમાં પણ અનેક વાદગ્રંથોનો સંગ્રહ એ આગવી વિશેષતા છે. અલ્પજ્ઞાત એવા નવ્યનૈયાયિક રઘુદેવ ભટ્ટાચાર્યના ઘણા ગ્રંથો હજુ અપ્રકાશિત જ રહ્યા છે. તેમના ગ્રંથોની હસ્તપ્રતોની શોધ કરતા જાણવા મળે છે કે કેટલીક હસ્તપ્રતો પ્રાચ્યવિદ્યામંદિરમાં જ જળવાયેલી છે. પ્રસ્તુત લેખમાં તેમના એક ગ્રંથ **લક્ષણાવાદ**નું સંપાદન કરવામાં આવ્યું છે.

હસ્તપ્રત વિશેઃ આ ગ્રંથની હસ્તપ્રત જામનગર આયુર્વેદ યુનિવર્સિટીમાંથી પ્રાપ્ત થઈ છે. આ હસ્તપ્રતને ત્રણ પત્રો અને ૮૦ જેટલી ગ્રંથસંખ્યા છે. *New Catalogus Catalogorum*માં આ લક્ષણાવાદ નામનો ગ્રંથ ગદાધર ભટ્ટાચાર્ય, ગોકુલનાથ અને રઘુદેવ ભટ્ટાચાર્યના નામે મળે છે.[૧] રઘુદેવ ભટ્ટાચાર્યકૃત લક્ષણાવાદની હસ્તપ્રત અલ્હાબાદ, ઔંધ અને સૌરાષ્ટ્ર ખાતે છે. તેમાંની સૌરાષ્ટ્રની હસ્તપ્રત એટલે જ જામનગરની હસ્તપ્રત. લોકડાઉનનાં કારણે અલ્હાબાદ અને ઔંધથી હસ્તપ્રત પ્રાપ્ત થઈ ન હોવાને કારણે માત્ર જામનગરની એક જ હસ્તપ્રતના આધારે લક્ષણાવાદગ્રંથનું સંપાદન કરવાનો પ્રયત્ન કરવામાં આવ્યો છે. આ હસ્તપ્રતનો લેખનકાળ કે લહિયાની કોઈ જાણકારી મળતી નથી.

કર્તા વિશેઃ રઘુદેવ ભટ્ટાચાર્ય હરિરામ તર્કવાગીશના શિષ્ય અને ગદાધર ભટ્ટાચાર્યના સમકાલીન છે. તેથી રઘુદેવનો સમય અંદાજિત ૧૭મી સદીના મધ્યભાગમાં નક્કી કરી શકાય. નવ્યન્યાયક્ષેત્રે તેમણે ૩૫થી વધુ મૂળ ગ્રંથો, ટીકાઓ અને વાદગ્રંથો લખ્યા છે. રઘુદેવના જીવન અને કર્તૃત્વ અંગેની વિસ્તૃત માહિતી મારા અગાઉ પ્રકાશિત લેખોમાંથી પ્રાપ્ત કરી શકાય છે.[૨]

'સ્વાધ્યાય' - પુ. ૫૬, વર્ષ ૨૦૧૯, પૃ. ૨૯-૩૨. ISSN 2250-0391

* પ્રાચ્યવિદ્યામંદિર, મહારાજા સયાજીરાવ વિશ્વવિદ્યાલય, રાજમહેલ દરવાજા પાસે, રાજમહેલ રોડ, વડોદરા-૩૯૦ ૦૦૧, M: 9898472669 Email: sprajapati22@yahoo.com

1. Das, Siniruddha, *New Catalogus Catalogorum*, Madras University, Madras, Vol.xxvi, p.9
૨. રઘુદેવકૃત મુક્તિવાદ, સ્વાધ્યાય, પુસ્તક ૩૫, પૃ. ૯૫; રઘુદેવકૃત પ્રાગભાવવિચાર, સ્વાધ્યાય, પુસ્તક ૩૬, પૃ. ૧૯૧; Raghudeva Bhattacharya and His Works, *Journal of Oriental Institute*, Vol. LI, Nos. 1-2, 2001, pp. 65-84

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ગ્રંથ વિશે: ગૌતમવિરચિત ન્યાયસૂત્રમાં ઉપચારછલના સંદર્ભમાં લક્ષણાનો સંકેત મળે છે. વાચસ્પતિ મિશ્ર પણ ૯મી સદીમાં તત્ત્વબિંદુમાં લક્ષણાની સંક્ષિપ્ત ચર્ચા કરે છે. ઉપરાંત ગદાધર ભટ્ટાચાર્ય તેમના શક્તિવાદ નામના ગ્રંથમાં શક્તિગ્રહની ચર્ચા કરતા લક્ષણાની પણ ચર્ચા કરે છે. તેમના વ્યુત્પત્તિવાદ ગ્રંથમાં પણ આ ચર્ચા મળે છે. વિશ્વનાથ ન્યાયપંચાનન, જગદીશ ભટ્ટાચાર્ય જેવા નૈયાયિકોએ તેમના ગ્રંથોમાં આ વિષય પર વિસ્તૃત ચર્ચા કરી છે. અલંકારશાસ્ત્રમાં લક્ષણાના વિવેચન પહેલા દાર્શનિકો અને વૈયાકરણોએ તેનું વિવેચન કર્યું છે. પ્રાચીન ન્યાયાશાસ્ત્ર પરંપરામાં ચાલી આવતી લક્ષણાની ચર્ચા નવ્યન્યાય પરંપરામાં વિસ્તૃત અને સૂક્ષ્મતાથી રજૂઆત પામી છે. તેના માટે વાદગ્રંથની રચના અલગ અલગ નૈયાયિકોએ કરી છે. રઘુદેવના પ્રસ્તુત વાદગ્રંથમાં લક્ષણાનું વિસ્તૃત વિવેચન કરવામાં આવ્યું છે. કેટલાક પૂર્વપક્ષો દ્વારા લક્ષણાની અનાવશ્યકતા અંગે પ્રશ્નો ઉઠાવ્યા છે અને તેનું નિરાકરણ કરી અંતે લક્ષણાનું મહત્ત્વ સ્થાપિત કરવામાં આવ્યું છે.

લક્ષણાવાદઃ

श्रीगणेशाय नमः । श्रीगुरुभ्यो नमः । श्रीरामचन्द्र(द्राय) नमः ।

लक्षणा च वृत्त्यन्तरमिति मूलम् । तस्यायमा(श)यः । तत्छाब्दबुद्धित्वावच्छिन्नं प्रति तत्छक्तपदज्ञानत्वेन हेतुत्वम् । तथाच गङ्गायां घोषः प्रतिवसतीत्यत्र गङ्गापदस्य तीरे शक्तेरभावात् कथं गङ्गापदात्तीरधीः । तत्रागत्या लक्षणावृत्तिः कल्प्यते । सा च शक्यादशक्योपस्थितिः । सैव शाब्दधीकारणम् । अत एव लाक्षणीकं नानुभाविकमिति संगच्छते । पदज्ञानस्य स्वजन्योपस्थितिसंबन्धेन शब्दं प्रति ह (हे)तुत्वम् । तत्र च गङ्गापदजन्योपस्थितेस्तादृशबोधजनकत्वात्सुतरां तादृशसम्बन्धेन पदज्ञा(न)स्यापि हेतुत्वाभावः । न च तच्छाब्दबुद्धित्वावच्छिन्नं प्रति पदजन्यपदार्थोपस्थितेर्हेतुत्वेन कथं निरुक्तोपस्थितेस्तादृ(श)शाब्दबोध इति वाच्यम् । तदर्थवाचकतत्पदनिरूपितशक्तिज्ञानस्य तत्छाब्दबुद्धित्वावच्छिन्नं प्रति तत्पदनिरूपितशक्तिज्ञानेन ह(हे)तुत्वं तादृशलक्षणजन्यहेतुशाब्दबुद्धित्वावच्छिन्नं प्रति तादृशस्वरूपतत्पदार्थोपस्थितित्वेन हेतुत्वं वक्तव्यम् । न तु निरुक्तहेतुमद्भावः ।

साम्प्रदायिकास्तु शक्यसम्बन्ध एव लक्षणा । अत एव लक्ष्यतावच्छेदकेन लक्षणा नास्तीति प्राचां प्रवादोऽपि साधियान् । अन्यथा उपस्थितेर्लक्षणात्वे तादृशोपस्थितेर्लक्ष्यविषयकत्वात् । लक्ष्यतावच्छेदकेऽपि तादृशोपस्थितिसत्त्वात् । लक्ष्यतावच्छेदके लक्षण नास्तीति प्रवादो व्याहन्येत् । अस्मन्मते तु गङ्गायामित्यादौ शक्यसम्बन्धस्य लक्षणत्वे तस्य तीरत्वादावभावात् । तादृशप्रवादसङ्गमनं यत्र च लक्ष्यसाधारणसम्बन्धः तत्र लक्ष्यमात्रनिधायकसम्बन्धेन तस्य लक्षणात्वम् । अथ त्वन्मतेऽपि तुल्ययुक्त्या स्वज्ञानजन्यपदार्थोपस्थितिसम्बन्धेन लाक्षणिकस्यापि अनुभवत्वसम्भवात् । लाक्षणिकमननुभाविकमिति सिद्धान्तभङ्गः । शक्यादशक्योपस्थितिर्लक्षणेति मते लाक्षणिकार्थस्य तटस्थतया भानात् । न च तद्गोचरानुभवजनकत्वमित्येतत्सत्यं लाक्षणिकमननुभाविकमित्यस्य उद्देश्यविधेयभावतयाऽननुभवकत्वे तात्पर्यार्थात् उद्देश्यविधेयभावेनान्वयं प्रति शक्तिमत्वस्येव नियामकत्वात् । अत एव लक्षणाजन्यशाब्दबोधेन शक्तिग्रहस्य

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हेतुत्वप्रसङ्गः । लक्षणाज्ञानं तु न विधेयतया भाने नियामकम् । अत एव न विधौ परः शब्दार्थ इत्यत्र विधेयमर्थे लक्षणा नास्तीति बीजं विधेयतया भाननियमादिति मिश्राः । यदि च लाक्षणिकस्थले तटस्थतया भानं न तु लाक्षणिकार्थस्य शाब्दधीविषयतयापीति मतं तथापि न क्षतिः । मन्मतेऽपि लाक्षणिकार्थस्य तटस्थतयैव भानात् । तादृशतटस्थभानं प्रति प्रागेव लक्षणाग्रहस्य तटस्थतया भानं तु तज्ज्ञानविशेष्यतया प्रकारतया वा भानमिति प्रकारताविशेष्यता वा न विधेयात्मिकज्ञानविषयीभूतज्ञानप्रकारत्वादिकं तिष्ठतीति बहः(हवः) । वस्तुतो लक्ष्यतावच्छेदके लक्षणा नास्तीत्यस्यायमाशयः । लक्ष्यतावच्छेदकविशिष्टे शक्यसम्बन्धरूपलक्षणाग्रहोऽपेक्षितो न तु लक्ष्यतावच्छेदके तादृशसम्बन्धग्रहोऽपेक्षित इति लक्ष्यतावच्छेदकविशिष्टे शक्तेर्ज्ञानं शक्यतावच्छेदकधर्मेऽपि विशेषणविधया शक्तिज्ञानमपेक्षितमिति । अत एव लक्ष्यतावच्छेदकसाधारणसम्बन्धेन लक्ष्यतावच्छेदके तादृशग्रहोऽपेक्षितः। यदि च लक्ष्यमात्रवृत्तिविषयतासम्बन्धेन लक्षणाप्रयोजकं(क)त्वं तत्र सम्बन्धेन लक्ष्यतावच्छेदकसाधारणविषयोपस्थितेर्लक्ष्यतावच्छेदकयथाकथञ्चित्सम्बन्धेन सत्त्वेऽपि न क्षतिरि[ति] भाव्यते । तथापि प्रकृत्यर्थान्वितस्वार्थबोधकत्वं प्रत्ययानमिति प्रतीतेर्गङ्गायां घोष इत्यत्र लाक्षणिकार्थतीरे विभक्त्यर्थान्वयानुपपत्तेः । शक्यात् शक्योपस्थितिर्लक्षणेति मते तत्र प्रवाहस्यैव प्रकृत्यर्थत्वात् । न च प्रकृतिप्रयोज्यत्वं पदार्थोपस्थितौ नियामकं न तु प्रकृतिजन्यत्वं तथा स(त्य)यवान्तरवाक्यक्रमेण महावाक्यार्थबोधानुपपत्तिरि(ति) वाच्यम् । प्रकृतिजन्यतज्जन्यस(सा)धारणप्रयोज्यत्वस्य लाभात् । अस्मांक मते महावाक्यार्थबोधं प्रति अवान्तरवाक्यार्थज्ञा(न)स्याहेतुत्वात् । अवान्तरवाक्यार्थक्रमेण महावाक्यार्थधीः । किन्तु प्रथमत एव न चाव्ययीभावः । उपकुम्भमित्यादौ प्रकृत्यर्थे भिन्ने उपपदार्थे सामीप्ये विशिष्टे प्रत्ययार्थस्यान्वयदर्शनात् । एवमर्धपिप्पलीत्यादावपि प्रकृत्यर्थे भिन्नेऽर्धपदार्थे विभक्त्यर्थस्यान्वयदर्शनात् । सम्पन्नो व्रीहिरित्यत्र च लक्षणविभक्त्यर्थस्य च व्रीहित्वलक्षणपदार्थतावच्छेदके अन्वयदर्शनान्न तथा व्युत्पत्तिरि[ति] वाच्यम् । तत्तद्भिन्नस्थल एव तादृशवु(व्यु)त्पत्तेरादरः । न चैकत्र तस्य संकोचकल्पने सर्वत्र तस्य संकोचे प्रमाणाभावात् । शक्तिलक्षणयोर्न पृथग्रूपेण हेतुत्वं किं त्वेकरूपेण । तथा हि शक्तित्वावच्छिन्नं सांसर्गिकविषयतानिरूपितपदनिष्ठप्रकारतानिरूपितार्थविशेष्यताग्रहत्वेनैव हेतुत्वम् । इत्थं च यत्र केवलशक्तिसम्बन्धेन पदप्रकारकं ज्ञानं भवति तत्रापि तादृशविषयताशालिपदप्रकारकज्ञानस्य सुलभत्वात् । यत्र शक्यसम्बन्धेनापि पदप्रकारकं ज्ञान तत्रापि तादृशज्ञानस्य विद्यमानत्वान्न दोषः । अत्र च न निविशते शक्तिनिष्ठावच्छेदकतायाः पर्याप्तिः । तेन लक्षणाज्ञानस्य संग्रहः । अथ शक्यसम्बन्धो पदप्रकारकं ज्ञानं शक्तित्वावच्छिन्नसांसर्गिकविषयताशालिज्ञानम् । कथमन्यथा शक्तिसम्बन्धेन पदाभावादिति निश्चयोत्तरमपि शक्यसम्बन्धेन पदार्थप्रकारकं ज्ञानं जायते । तत्सम्बन्धेन तदभाववत्वनिश्चयस्य तत्सम्बन्धनिष्ठसांसर्गिकविषयताशालिग्रहो न जयते । इत्थं च तथैव प्रतिबध्यप्रतिबन्धकभावः । तथा च पदनिष्ठप्रकारतानिरूपिताया अर्थनिष्ठाविशेष्यता तन्निरूपिताया शक्तिनिष्ठा सांसर्गिकविषयता तच्छालिज्ञानं प्रति शक्यतावच्छिन्नप्रतियोगिताकयदभावनिष्ठप्रकारतानिरूपितधर्मनिष्ठविशेष्यताशालिज्ञानस्य प्रतिबन्धकानुपपत्तिः तादृशी शक्तिनिष्ठायाः सांसर्गिकविषयता सा न पदनिष्ठप्रकारतानिरूपिता सती अर्थनिष्ठविशेष्यतानिरूपिता शक्तिनिष्ठा विषयितानिरूपितापदनिष्ठप्रका[र]ता भवति किन्तु नार्थनिष्ठविशेष्यतानिरू[पि]ता इति वक्ष्यामः । यदि च शक्यसम्बन्धाभावसम्बन्धेन पदप्रकारकार्थविशेष्यकज्ञानात् शक्यभावसम्बन्धेन पदप्रकारकार्थविशेष्यताकज्ञानात् शाब्दधीः

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तदा प्रतियोगितावच्छेदकतानवच्छिन्नसांसर्गिकविषयताकपदप्रकारता ग्राह्याशक्त्यभेदसम्बन्धवारणं तु तादृशविषयताभेदनिर्वेशादिति अथवा अर्थनिष्ठाविशेष्यतानिरूपिताया स्वानधिकरणकालवृत्तित्वकृतित्वकृतिघटितस्य सामान्याधिकरण्योभयसम्बन्धेन स्वोच्चारणविशिष्टं यदुच्चारणं तत्कर्मताश्रयत तच्छब्दविशिष्टत्वं कृतिघटितस्वसामानाधिकरणकालवृत्तिध्वंसप्रतियोगिकालवृत्युच्चारणकर्मत्वस्ववृत्ति- वक्तृतात्पर्यगोचरविधेयाश्रयत्वे तत्त्रितयसम्बन्धेन पुनस्सामानाधिकरण्याभाने तु परित्याज्यम् । यदि चात्र पूर्वजन्मनि एकं शब्दम् उच्चार्य परजन्मनि शब्दान्तरं तत्र घटशब्दादेः पाठकोऽयमिति न कस्यापि व्यवहारस्तदा स्वजनकरणसजातीयकरणजन्यत्वमपि सम्बन्धेऽन्तर्भासम् एवं गणनास्थले तद्वा त्वर्थमन्तर्भाव्यनिर्वाच्यमिति दिक् । आदित्वलक्षणमिदं चेति सिद्धान्तः। साधुः संगच्छते एवं लाक्षणिकं नानुभाविकमिति प्रवादोऽपि उद्देश्यविधेयभावेऽपि विधेयान्वयजनकपरतयैव व्याख्येयः । एवं तद्विशिष्टवाचकपदस्य शक्यतावच्छेदकीभूतविशेष्यवृत्तिधर्मे शक्तिज्ञानादेव शाब्दधीसम्भवे कृतं तत्र लक्षणाङ्गीकारेणेति । यथा च बलवदनिष्ठसाधनत्ववाचकविधेः श्येनाभिचरन् यजेत इत्यादौ केवलबलवन्निष्ठा न ।

ननु बाधित्वमपहायेष्टसाधनत्वबोधजनकत्वं तत्र तादृशविशिष्टशक्तिग्रहस्य तादृशविशिष्टसाधनतात्वशब्दत्वं कार्यतावच्छेदकत्वं केवलेष्टसाधनताबोधः । यदि चेष्टसाधनत्वप्रकारकशाब्दत्वं कार्यतावच्छेदकं तर्हि क्वापि बलवदनिष्ठा । ननु बधित्वविशिष्टेष्टसाधनत्वस्य बोधः । क्वचिदिष्टसाधनत्वस्यापि । न च बलवदनिष्ठा ननु बन्धित्वस्य कार्यतावच्छेदककुक्ष्यनिवेशे यथा तद्बोधस्तथा प्रमेयत्वादीनां कथं योग्यताज्ञानादेव शिष्टत्वादिति वाच्यम् । योग्यताज्ञाने तदितरधर्मस्य बोधजनने तत्तत्छक्तिग्रहस्य विशेषसामग्रीत्वाददोषः । एवं शक्यादन्येन रूपेण ज्ञाने भवति लक्षणेति श्रुते वैय्यर्थ्यवशादेव शक्यलक्षणा नास्तीति । अत एव शक्येऽपि शक्यतावच्छेकरूपेणेति निरासः ।

इति श्रीरघुदेवन्यायालङ्कारभट्टाचार्यविरचितो लक्षणावादः समाप्तिमगमत् ॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

તાનભટ્ટકૃત શિષ્ટલક્ષણવાદાર્થઃ : અપ્રકાશિત નવ્યન્યાયવાદગ્રંથ

શ્વેતા પ્રજાપતિ*

પ્રસ્તુત લેખમાં ન્યાયશાસ્ત્રનાં એક અપ્રકાશિત અત્યંત લઘુ વાદગ્રંથને સંપાદિત કરવાનો પ્રયાસ કરવામાં આવ્યો છે. તાનભટ્ટકૃત શિષ્ટલક્ષણવાદાર્થઃ ગ્રંથની હસ્તપ્રત પ્રાચ્યવિદ્યામંદિર, વડોદરામાં અનુક્રમ નં. ૧૨૩૪૫ થી જળવાયેલ છે. તેના પાંચ પત્ર, ૭૫ ગ્રંથસંખ્યા અને ૨૮ X ૧૦ સે. મી. પરિમાણ છે. આ ગ્રંથના રચનાકાળ કે તેની હસ્તપ્રતના લેખનકાળનો કોઈ ઉલ્લેખ પ્રાપ્ત થતો નથી. *New Catalogus Catalogorum, Vol. XXXIV* ના પૃ. ૨૭૯ પર આ ગ્રંથની એકમાત્ર હસ્તપ્રત પ્રાચ્યવિદ્યામંદિર, વડોદરા પાસે જ હોવાનો ઉલ્લેખ મળે છે. ગ્રંથકર્તા તાનભટ્ટ અંગેની કોઈ માહિતી પ્રાપ્ત થતી નથી. તેમના અન્ય કોઈ ગ્રંથો રચાયા હોય તેવી પણ જાણકારી મળતી નથી. પ્રસ્તુત વાદગ્રંથમાં ન્યાયશાસ્ત્રમાં ચર્ચાતી શિષ્ટપરંપરા અંગેની વિસ્તૃત તાર્કિક રજૂઆત કરવામાં આવી છે. શિષ્ટ આસ્તિક છે અને વેદપરંપરાને અનુસરે છે. ન્યાયશાસ્ત્ર પ્રમાણે વેદ શબ્દપ્રમાણ છે. તેથી વેદમાં દર્શાવેલ બધી જ ક્રિયાને શિષ્ટ અનુસરે છે. આ એક સદાચાર છે. તો પછી વેદમાં દર્શાવ્યા મુજબ શિષ્ટ જો યજ્ઞમાં પશુબલિ આપી હિંસાનું આચરણ કરે છે તો તે શિષ્ટ કેવી રીતે કહેવાય એવો પૂર્વપક્ષ અહીં રજૂ કરવામાં આવ્યો છે. બાદમાં તેનું ખંડન કરી દલીલો રજૂ કરવામાં આવી છે અને અંતે શિષ્ટ કોણ કહેવાય તેની સ્પષ્ટતા કરી વેદપરંપરાનું જ સમર્થન કરવામાં આવ્યું છે.

शिष्टलक्षणवादार्थः

ॐ नमः श्रीसच्चिदानन्दपरब्रह्मणे गुरवे नमः ।

पाखण्डव्यावृत्तशिष्टव्यवहारप्रयोजकं वेदप्रामाण्याभ्युपगंतृत्वमिति वृद्धाः । प्रामाण्यमत्र प्रमापरत्वम् । न तु प्रमाकरणत्वम् । प्रमाकरणज्ञानविषयत्वं वा । तेन वेदमात्रस्य लिङ्गावधेया प्रमाण्याभ्युपगन्तरि नास्तिके वेदविशेषसहकारिवैकल्यप्रयुक्तवाक्यार्थबोधकरणत्वाभ्युपगन्तरि पदज्ञानाभिहितपदार्थज्ञानकरणत्ववादिनिशिष्टे च नातिव्याप्तिः । वेदत्वस्य चावच्छेदकत्वे नान्वयः । अभ्युपगमश्च स्वाप्नाहार्यविलक्षणः । तेन न हिंसादित्यादेर्वेदस्य प्रमातात्पर्याभ्युपगन्तरि आस्तिकसमशीलस्वप्नाहार्यवेदप्रामाण्याभ्युपगमवति वा नास्तिके नातिव्याप्तिः । अत्र वेदप्रामाण्याभ्युपगमस्य विशेषणत्वे शयनादिमतिशिष्टव्यवहारानापत्तिः । उपलक्षणत्वे शयनादिमतिशिष्टव्यवहारानापत्तिः । त्वेवेदाप्रामाण्याभ्युपगमानन्तरमपि शिष्टव्यवहारापत्तिरिति । अत्र वेदप्रामाण्याभ्युपगमस्योपलक्षणत्वमेव । एवं च वेदप्रामाण्याभ्युपगमसमयमारभ्य यावन्न तदात्मनि वेदप्रामाण्याभ्युपगमस्तावन्तं कालं स शिष्ट **इत्येके** । वेदप्रामाण्याभ्युपगमसमानाधिकरण यावद्वेदाप्रामाण्याभ्युपगमाभाववत्वमित्यपरे तात्पर्यं वर्णयन्ति । तत्राप्येवमाक्षिपन्ति । एवमपि शिष्टत्वानन्तरं नास्ति । कपुत्रत्वापन्ने अनुत्पन्नवेदाप्रामाण्याभ्युपगमेऽपि

'સ્વાધ્યાય' - પુ. ૫૬, વર્ષ ૨૦૧૯, પૃ. ૩૩-૩૫. ISSN 2250-0391

* પ્રાચ્યવિદ્યામંદિર, રાજમહેલ રોડ, રાજમહેલ દરવાજા સામે, વડોદરા - ૩૯૦ ૦૦૧, M: 9898472669

Email: sprajapati22@yahoo.com

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

त्रादिवाक्यमात्रेणास्तिकशब्दश्रवणासमानकालीन भोजनकर्तरि बाह्यव्यवहारास्पदे शिष्टव्यवहारापत्तिः । न च तत्तच्छरीरावच्छेदेनेति पूरणीयम् । एवमप्यनुत्पन्नवेदप्रामाण्याभ्युपगमेऽपि त्रादिवाक्यमात्रेणोचितकर्मकर्तरि शिष्टव्यवहारास्पदे शिष्टव्यवहारानापत्तिः । न चासावशिष्ट एव शिष्टव्यवहारश्च शिष्टपुत्रत्वादौपचारिकः दीक्षितपुत्रेष्विव दीक्षितव्यवहाराय इति वाच्यम् । पितृसमाना विगीतव्यवहारत्वात् । अत एव दीक्षितोपनामो दीक्षितशब्दः कृत्रिमसंकेतो न त्वौपचारिकः । अत एव तत्रैवाप्रामाण्याभ्युपगमानन्तरं नायमधुना शिष्ट इति भूतपूर्वशिष्टव्यवहारनिमित्तनिरोधः । किं चैवं वेदप्रामाण्याभ्युपगमस्य विशेषणत्वमेवास्तु अनन्तरं शिष्टव्यवहारश्च कालत्रयोदासिन्येन पाकरक्ते श्यामव्यवहारवत् यथार्थ एव । इदानीं शिष्टव्यवहारस्त्वयथार्थ एवेति सुवचत्वे किं वक्रव्याख्यानेन । न चायमधुना शिष्ट इति । तावत्कालस्थितशिष्टव्यवहारनिमित्तनिवेशाषेधाच्च तत्संग्रहाय व्याख्यानविशेष इति वाच्यम् । दृष्टिसाम्ये यथोक्तशिष्टपुत्रसाधारणनिमित्तस्यापि मृग्यमाणत्वात् । तस्माद्वेदप्रामाण्याभ्युपगन्तरि तद्दशायां च तत्पुत्रादिष्वपि यावन्न वेदप्रामाण्याभ्युपगमः तावच्छिष्टव्यवहारः अप्रामाण्याभ्युपगन्तरि च तद्दशायां च यावन्न वेदप्रामाण्याभ्युपगमः तावद्बौद्धव्यवहार इति स्थितिमनुसंध्य सुधितया निमित्तमन्वेषणीयम् । अन्यथा परिभाषामात्रत्वापत्तेः । तदिदमभिधीयते । स्वप्रयोजकवेदप्रामाण्याभ्युपगमावच्छेदकशरीराप्रयोजकस्वावच्छिन्नवेदप्रामाण्याभ्युपगमसमानाधिकरणसमानकालीन- यावद्वेदप्रामाण्याभ्युपगमाभावावच्छिन्न-शरीरप्रयोज्य - स्वावच्छिन्नवेदप्रामाण्याभ्युपगमानाद्यभावविरोध्यनवच्छिन्नशरीररहितत्वे सति तच्छरीरनिष्ठसमानकालीनानेकावृत्तिजातिमदवच्छिन्नात्मवृत्तिस्वसमानकालीन - यावद्वेदाप्रामाण्याभ्युपगमाद्यभावसमवहितवेदप्रामाण्याभ्युपगमाभावविरहत्वं शिष्टत्वम् । अथ प्रथमशिष्टपदं राहित्य शरीरप्रतियोगिशरीरपरम् । द्वितीयं प्रयोजकबौद्धशरीरपरम् । तृतीयमपि राहित्यप्रतियोगिपरम् । स्वराहित्यप्रतियोगित्वेनाभिमतस्य शरीरस्य प्रयोजकं पित्राद्यन्यतमरूपं यद्वेदप्रामाण्याभ्युपगमावच्छेदकं शरीरं तस्याप्रयोजकमपि त्रादिरूपं यत्स्वावच्छिन्नवेदाप्रामाण्याभ्युपगमसमानाधिकरणसमानकालीन- यावद्वेदप्रामाण्याभ्युपगमाभावावच्छिन्नं यच्छरीरं बौद्धशरीरत्वेनाभिमतं तेन प्रयोज्यं तत्पित्रादिरूपं यत्स्वावच्छिन्नवेदाप्रामाण्याभ्युपगमनाद्यभावविरोध्यनवच्छिन्नं शरीरं तद्रहितत्वे सति अदृष्टविशेषजन्यतत्संयोगरहितत्वे सति यच्छरीरावच्छेदेन शिष्टत्वं लिलक्षयिषितं तच्छरीरनिष्ठा या जातिसमानकालीनेष्वनेकेष्ववर्तमाना चैत्रत्वादिरूपा तज्जातिमदवच्छिन्ने अदृष्टविशेषजन्य तत्संयोगवति आत्मनि वर्तमाना स्वसमानकालीना उपादीयमानवेदप्रामाण्याभ्युपगमाभावविरहसमानकालीना ये यावन्तो वेदाप्रामाण्याभ्युपगमानाद्यभावास्तत्समवहितो यो वेदप्रामाण्याभ्युपगमाभावस्य कस्यचिद्विरहः । वेदप्रामाण्याभ्युपगमस्तत्प्रागभावस्तद्ध्वंसस्तदत्यन्ताभावो वा सविशिष्टत्वं शिष्टपदप्रवृत्तिनिमित्तं यदा यस्मिन्नात्मनि । पूर्वोक्त - विशेषणविशिष्टवेदप्रामाण्याभ्युपगमाभावविरहस्तदाशिष्ट इत्यर्थः । अत्र वेदप्रामाण्याभ्युपगमाभावस्य विरहस्य तत्प्रागभावविरहवति घटादौ सत्त्वात्त त्रातिव्याप्तिवारणाय समविहतान्तम् । उत्तरप्रतीकं तत्रापि यावद्वे - दाप्रामाण्याभ्युपगमाभावविरहस्य क्वाप्यसत्वादसंभववारणाय समानकालीनान्तम् । तत्रापि तस्मिन्जन्मनि भूतपूर्ववेदाप्रामाण्याभ्युपगमे शिष्टव्यवहारस्याव्याप्तिवारणाय स्वसमानकालीनेति । जन्मान्तरीयवेदाप्रामाण्याभ्युपगमानन्तरं शिष्टपुत्रत्वापन्ने अनुत्पन्नवेदप्रामाण्याभ्युपगमे विद्यमानवेदप्रामाण्याभ्युपगमाभावविरहस्य प्राग्जन्मनीवत्तज्जन्मन्यपि तदात्मनिष्टस्वसमानकालीन - यावद्वेदप्रामाण्याभ्युपगमानाद्यभावसमवधानाभावादव्याप्तिवारणाय तदात्मनिष्ठेत्युपेक्ष्य तच्छरीरनिष्टेत्यादि वृत्यन्तम् । अहरहः शरीरभेदेन पूर्वदानीय वेदाप्रामाण्याभ्युपगमस्य जन्मान्तरीयतुल्यत्वेन द्वितीयदिने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तच्छरीरावच्छेदेनानुत्पन्नवेदाप्रामाण्याभ्युपगमे शिष्टत्वापत्तिवारणाय तच्छरीरावच्छिन्नेत्युपेक्ष्य तच्छरीरमिष्टत्याद्यवच्छिन्नान्तं तच्छरीरनिष्टद्रव्यत्वादिजातिमत्पाखण्डादिशरीरावच्छेदेनोत्पन्नवेदाप्रामाण्याभ्युपगमप्रागभावानां स्वसमानकालीनानां शिष्टात्मन्यवर्तमानत्वेनाव्याप्तिवारणाय समानकालीना नेकावृत्तीति जातिविशेषणम् । एवमपि नास्तिकपुत्रेऽनुत्पन्नवेदाप्रामाण्याभ्युपगमेऽतिव्याप्तिवारणाय सत्यन्तम् । तत्रापि नास्तिकपौत्रादौ शिष्टपुत्रेऽव्याप्तिवारणाय प्रयोजकान्तम् । तत्रापि शिष्टतापन्न नास्तिकपौत्रशरीरस्य वेदप्रामाण्याभ्युपगमावच्छेदकत्वेन नास्तिकशरीरस्य वेदप्रामाण्याभ्युपगमावच्छेदकशरीरप्रयोजकत्वात् तत्पुत्रेऽनुत्पन्नवेदाप्रामाण्याभ्युपगमेऽपि नास्तिकव्यवहारस्यातिव्याप्तिवारणाय स्वप्रयोजकेति व्यधिकरणानां समानाधिकरणानामपि भिन्नकालीनानां वेदप्रामाण्याभ्युपगमप्रागभावानां बौद्धदशायां अभावात्तत्पुत्रेऽतिव्याप्तिवारणाय समानाधिकरणसमानकालीनेति विशेषणद्वयम् । संजातवेदप्रामाण्याभ्युपगमे बौद्धपुत्रे अव्याप्तिवारणाय स्वावच्छिन्नाद्यनवच्छिन्नान्तम् । उत्पत्स्यमानवेदप्रामाण्याभ्युपगमध्वंसविरोधि प्रागभावावच्छिन्नत्वात् वेदप्रामाण्याभ्युपगमात्पूर्वबौद्धपुत्रेऽतिव्याप्तिवारणायानादीति । वेदाप्रामाण्याभ्युपगमानन्तरोत्पन्नके घटज्ञानध्वंसादिकमादाय शिष्टपुत्रे बौद्धदशायामतिव्याप्तिवारणाय वेदप्रामाण्याभ्युपगमविरहपदम् ।

। इति श्रीमत्तानभट्टकृत श्रीशिष्टलक्षणं समाप्तम् ।

। श्रीमदच्युतचरणार्पणमस्तु ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

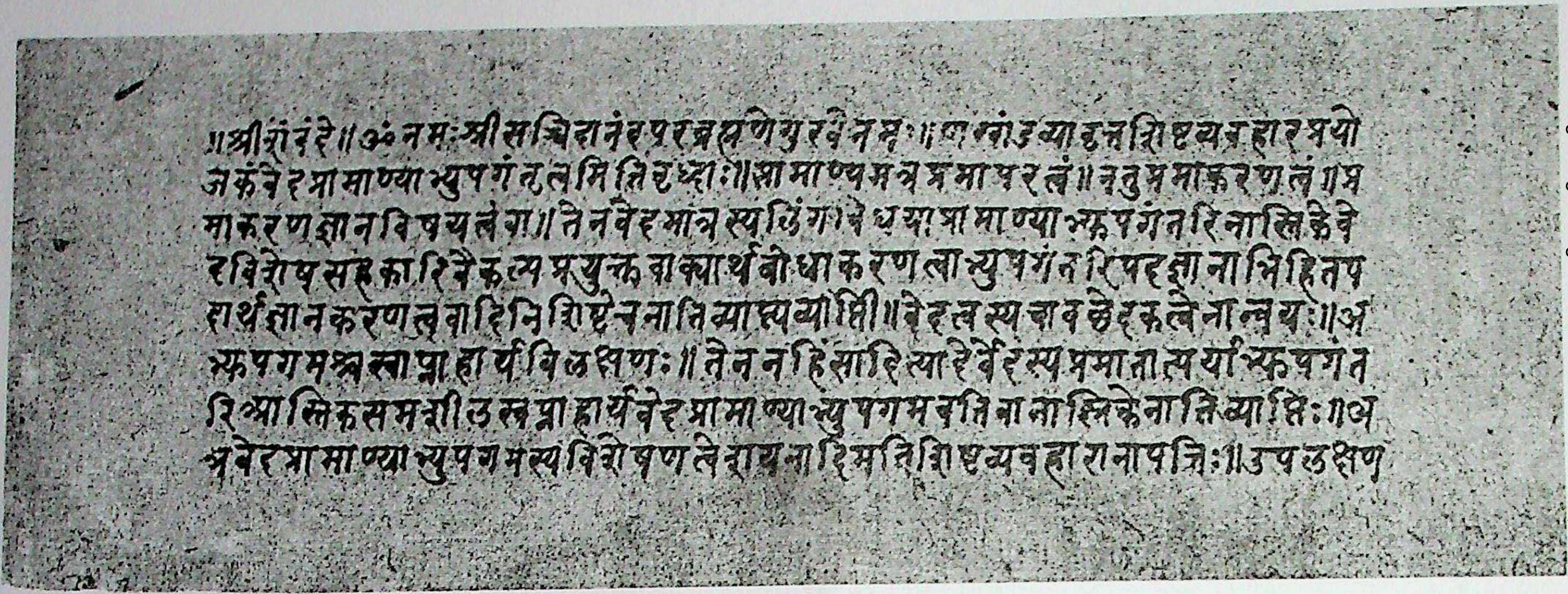
॥श्रीगुं वंदे॥ ॐ नमः श्रीसच्चिदानंदपरब्रह्मणे गुरवे नमः॥ [illegible] व्यावृत्तशिष्टव्यवहारप्रयो
जकं वेदप्रामाण्याभ्युपगंतृत्वमिति तद्धाः॥ प्रामाण्यमत्र प्रमापरत्वं॥ ननु प्रमाकरणत्वं॥ प्र
माकरणज्ञानविषयत्वं वा॥ तेन वेदमात्रस्य लिंगादेः प्रामाण्याभ्युपगंतरि नास्तिके वे
दविशेषसहकारिवैकल्यप्रयुक्तवाक्यार्थबोधाकरणत्वाभ्युपगंतरि पदज्ञानाभिहितप
दार्थज्ञानकरणत्ववादिनि शिष्टे च नातिव्याप्त्यव्याप्ती॥ वेदत्वस्य चावच्छेदकत्वेनान्वयः॥ अ
भ्युपगमश्च स्वाप्राहार्यविलक्षणः॥ तेन न हिंसादिस्थले वेदस्य प्रमात्वपर्यभ्युपगंत
रि आस्तिकसमयशीलस्याप्राहार्यवेदप्रामाण्याभ्युपगमवति नास्तिके नातिव्याप्तिः॥ अ
प्रवेदप्रामाण्याभ्युपगमस्य विशेषणत्वे न्यायनादिमति शिष्टव्यवहारानापत्तिः॥ उपलक्षण

शिष्टलक्षणवादार्थः, प्राच्यविद्यामंदिर, हस्तप्रत - क्रमांक : १२३४५

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

આનંદાનંદનાથ વિરચિત રાજયોગામૃતસાર – અપ્રકાશિત ગ્રંથ

વિપુલ પટેલ*

યોગ એ ભારતની પ્રાચીનતમ વિદ્યાઓમાંની શ્રેષ્ઠ વિદ્યા છે. જે મનુષ્યને શારીરિક, માનસિક અને આધ્યાત્મિક બળ પૂરું પાડી, કાર્ય કરવાની નવી ઊર્જા પૂરી પાડે છે. યોગ મનુષ્યના સ્વાસ્થ્યને અનેક લાભો પણ પ્રદાન કરે છે. ભારતીય પ્રાચીન ષડ્દર્શનશાસ્ત્રોમાં યોગ પોતાનું આગવું સ્થાન ધરાવે છે. પતંજલિના યોગસૂત્રમાં યોગ શબ્દને દાર્શનિક પદ્ધતિ સાથે સાંકળવામાં આવ્યો છે, જેમાં માનવીય શક્તિનું દૈવીશક્તિ સાથેનું એકીકરણ એ સંદર્ભમાં થયેલો જોવા મળે છે.[૧] શ્રીકૃષ્ણ શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતામાં યોગ શબ્દને વર્ણવતાં કહે છે કે, ''મનુષ્યના કાર્યમાં ખલેલ પહોંચાડતી ઇન્દ્રિયોને સંતુલિત કરી મન પર ધ્યાન કેન્દ્રિત કરવાને[૨] તથા કાર્યમાં કુશળતાને (૨.૫૦)[૩]'' જ યોગ કહ્યો છે. યોગના મહત્ત્વને દર્શાવતી અનેક હસ્તપ્રતો ભારતના વિવિધ હસ્તપ્રત ગ્રન્થાગારોમાં સચવાયેલી છે.

New Catalogus Catalogorum (N.C.C.)[૪] માં રાજયોગામૃતસાર નામના સમાન શીર્ષકથી બે હસ્તપ્રતો નોંધાયેલી છે. જેમાં પ્રસ્તુત હસ્તપ્રત અનુક્રમે ૧૩૬૨૦ નંબરથી વડોદરા સ્થિત પ્રાચ્યવિદ્યામંદિરમાંથી પ્રાપ્ત થાય છે, જ્યારે સમાન શીર્ષકથી નોંધાયેલી બીજી હસ્તપ્રત લોનાવલા (મહારાષ્ટ્ર) સ્થિત, કૈવલ્યધામ યોગ રિસર્ચ સેન્ટર ખાતે નોંધાયેલી છે, જેનો અનુક્રમ નંબર ૫૧૪ છે. લોનાવલાની રાજયોગામૃતસાર નામની હસ્તપ્રત મેળવવા માટે પ્રયત્ન કર્યો હતો પરંતુ પ્રાપ્ત કરી શકાઈ નથી.[૫]

'સ્વાધ્યાય' – પુ. ૫૬, વર્ષ ૨૦૧૯, પૃ. ૩૭-૪૫. ISSN 2250-0391

* પ્રાચ્યવિદ્યામંદિર, મહારાજા સયાજીરાવ વિશ્વવિદ્યાલય, રાજમહેલ દરવાજા પાસે, રાજમહેલ રોડ, વડોદરા - ૩૯૦ ૦૦૧ M: 9898656871 Email: vipul.1063@rediffmail.com

૧ विद्यालंकार, सुभाष, योग-शब्दकोश, प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली, भारत, २००५, पृ. १४८

૨ समत्वं योग उच्यते (२.४८) - શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતા, સંપા: શાન્તિકુમાર પંડ્યા, પાર્શ્વ પબ્લિકેશન, અમદાવાદ, ચોથી આવૃત્તિ ૨૦૦૮, પૃ. ૧૩૮

૩ योगः कर्मसु कौशलम् (२.५०)- શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતા, એજન, પૃ. ૧૩૯

૪ *Dash, Siniruddha (Ed.), New Catalogus Catalogorum*, University of Madras, Chennai, Vol.XXIII, 2011, p. 261.

૫ લોનાવલા સ્થિત કૈવલ્યધામ રિસર્ચ સેન્ટરના નિયામકશ્રી ડૉ.રાજેશ્વર મુખર્જી સાથે તા. ૨૮/૦૫/૨૦૨૦ ના રોજ ટેલિફોનિક ચર્ચા પણ થયેલ હતી. પરંતુ દુર્ભાગ્યવશ લોકડાઉનના કારણે આ હસ્તપ્રત પ્રાપ્ત થયેલ નથી.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

પ્રાચ્યવિદ્યામંદિરના કેટલોગ[૬] પ્રમાણે આ હસ્તપ્રતનો ક્રમાંક ૧૩૬૨૦ છે, લિપિ દેવનાગરી છે તેમજ ભાષા સંસ્કૃત છે. હસ્તપ્રતનું પરિમાણ ૧૧.૬ X ૨૪.૪ સે. મી. છે. હસ્તપ્રતના દરેક શબ્દો સુવાચ્ય છે તથા ભાષા અત્યંત સરળ છે. ૭ (સાત) પૃષ્ઠોમાં લખાયેલી આ હસ્તપ્રત અનુષ્ટુપ છંદમાં આબદ્ધ છે. છેલ્લા પૃષ્ઠને બાદ કરતાં પ્રતના દરેક પૃષ્ઠમાં આઠ પંકિતઓનું લખાણ છે. દરેક પંક્તિમાં ૨૩ થી ૨૪ અક્ષરોનો સમાવેશ થયેલો જોઈ શકાય છે. પૃષ્ઠ નં ૩ અને ૬ ના હાંસિયામાં ત્રુટિઓ સુધારવામાં આવી છે. આ હસ્તપ્રતમાં ક્યાંક વ્યાકરણગત તો ક્યાંક હ્રસ્વ અને દીર્ઘની અશુદ્ધિઓ જોવા મળે છે. જેમ કે, गुरुवे - गुरवे, नदी - नदि, स्वेत - श्वेत, रुपकम् -रूपकम् વગેરે. આ હસ્તપ્રતમાં લહિયાએ ''व'' ના સ્થાને ''ब'' નો ઉપયોગ કરેલો જોવા મળે છે. અહીં પ્રાદેશિક ભાષાનો પ્રભાવ જોઈ શકાય છે. લહિયાએ જે તે વર્ગના અનુનાસિક શબ્દના સ્થાને અનુસ્વાર મૂકેલો છે. તદુપરાંત હસ્તપ્રતમાં સન્ધિના નિયમો પણ સ્ખલિત થતા જોવા મળે છે.

પ્રસ્તુત લેખમાં ''રાજયોગામૃતસાર'' ઉપરોક્ત એકમાત્ર હસ્તપ્રતના આધારે સંપાદન કરવાનો પ્રયત્ન કરવામાં આવ્યો છે. આ ગ્રંથ મુખ્યત્વે ત્રણ ઉચ્છ્વાસમાં વહેંચાયેલો છે. (૧) નાડી-નદી મુદ્રા (૨) સગુણ-નિર્ગુણ બ્રહ્મ અને (૩) બુદ્ધિનિરૂપણ. પ્રથમ ઉચ્છ્વાસમાં ઈડા, વામ અને પિંગલા નાડી ભારતની કઈ પવિત્ર નદીઓ સાથે સંબંધ ધરાવે છે તથા મુલબંધ મુદ્રાનાં લક્ષણોનું ટૂંકમાં વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. દ્વિતીય ઉચ્છ્વાસમાં સગુણ અને નિર્ગુણ બ્રહ્મ તથા પંચીકરણ પ્રક્રિયાનું વર્ણન પ્રાપ્ત થાય છે. તૃતીય ઉચ્છ્વાસમાં બુદ્ધિનાં લક્ષણોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે. ગ્રંથના દરેક ઉચ્છ્વાસને અંતે કવિએ પુષ્પિકા આપેલી છે. આ પુષ્પિકાના નિર્દેશ અનુસાર આ ગ્રન્થના કર્તા કવિશ્રી આનંદાનંદનાથ છે. આ હસ્તપ્રતનું લેખનકાર્ય ગુજરાતના નર્મદા જિલ્લાના કરનાળી ગામમાં થયું હતું તેવો ઉલ્લેખ હસ્તપ્રતના અંતે જોઈ શકાય છે. જેમ કે, ''क्षेत्रकर्णाळिमध्ये'' પરંતુ આ હસ્તપ્રતનો સમયગાળો કયો છે તેની કોઈ પણ માહિતી પ્રાપ્ત થતી નથી. પ્રસ્તુત ગ્રંથનો પ્રારંભ ગણેશવંદનાથી કરવામાં આવ્યો છે. આ કૃતિનો પાઠ નીચે પ્રમાણે છે.

॥ राजयोगामृतसारः ॥

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

ॐ नमो देवाधिदेवाय सच्चिदानन्दरूपिणे ।
आदिमध्यान्तशून्याय गुरु(र)वे परमात्मने ॥१॥

---

૬ Nanavati, Rajendra I., Ed. & Compiled by Siromani, Raghavan Nambiyar, *An Alphabetical List of Manuscripts in the Oriental Institute, Vadodara,* Pub: Oriental Institute, The Maharaja Sayajirao University of Baroda, Vadodara, Vol. I, Second Edition 1999, p. 624

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ पार्वत्युवाच ॥

देव देव जगन्नाथ सर्वभूतहिते रतः ।
यद्रहस्यमिदं पुण्यं योगमार्गात्प्रशस्यते ॥२॥

करुणासागरो(रः) शान्तो लोकानुग्रहकारणात् ।
गुह्याद् गुह्यतरं साक्षात् परंज्योतिप्रकाशकः ॥३॥

कथं नाडी नदी गङ्गा कथं बन्धः त्रयं वाधः (?) ।
कथं पञ्चविधा मुद्रां(द्रा) सत्यं मे वद शङ्कर ॥४॥

॥ ईश्वर उवाच ॥

इडा च वामनिवासः गङ्गा भागीरथी नदी ।
पी(पि)ङ्गला सव्यनाडी च यमुना नदि(दी) केवलम् ॥५॥

सुषुम्णा अङ्गदा प्रोक्ता गण्डकी च महानदी ॥
प्रसन्ननाडी जी(जि)ह्वाग्रे कृष्णवेणी सरस्वती ॥६॥

गान्धारी वामकर्णे च कावेरी तुङ्गभद्रयोः ।
हस्तीनि दक्ष(क्षि)णे कर्णे सी(सि)न्धुनदी तथैव च ॥७॥

वामनेत्रे पु(पू)षा नाडी ताम्रपर्णी महानदी ।
लम्बुषा दक्षी(क्षि)णे नेत्रे गोमती नदी केवलम् ॥८॥

कुहुनालगुदस्थाने रेवा च नर्मदा नदी ।
लम्बुषा दक्षिणे नेत्रे गौतमी नदी केवलम् ॥९॥

कुहुनालगुदस्थाने रेवा च नर्मदा नदि(दी) ।
' वारुणी मूत्रद्वारान्ते गौतमी नदी केवलम् ॥१०॥

लीं(लिं)गीमिन्द्रियशंकिन्या तापी नदी ततः परम् ।
सर्वाङ्गरोमकु(कू)पान्ते पूर्णात् पूर्णपयस्विनी ॥११॥

पञ्चाशत्कोटिविस्तिर्णेऽवस्थिते महिमण्डले ।
सार्द्धत्रिकोटितीर्थान्ते रामकुप(कूपं) प्रवाहयेत् ॥१२॥

नाडि(डी) सरि(शरी)रान्ते सर्वदा स्नानमाचरेत् ॥
अन्तस्नानविहि(ही)नस्य बहि(:)स्नानेन किं फलम् ॥१३॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अमलं निर्मलं देहे कायस्थं तेज उच्यते ।
अन्तर्बहिश्च तत्सर्वं ज्ञानं स्नानं च मोक्षदम् ॥१२॥

॥ अथ बन्धनमुद्रामूललक्षणम् ॥

॥ ईश्वर उवाच ॥

मु(मू)लबन्ध्वात्यदेवा मे वामो मूले तु दक्षिणे ।
हृदीस्य(व) चुम्बकं प्राप्ये(प्राप्य) बन्धत्रयविधिरमे(?) ॥१३॥

मु(मू)लबन्धस्तथा उरुः वय्यांणं(?) बन्धः केवलम् ।
जालेन्द्रहृदयं प्रोक्तं सुषुम्णा गुरुमाश्रयेत् ॥१४॥

भूचरिमूद्रभूदृष्टी(ष्टि)स्ती(ति)र्यक् दृष्टी(ष्टि)स्तु चाचरी ।
खेचरी दृष्टि ऊर्ध्वान्ते सम्मुखं दृष्टिः सा(शा)म्भवी ॥१५॥

साधनं दृष्टी(टिः) नासाग्रे अन्तर्बहिश्च मध्यमम् ।
उन्मनी त्रयलक्षं तु षण्मुखी सर्वसाधनात् ॥१६॥

कर्णौ बध्वा तु अङ्गुष्टाः(ठाः) तर्जनी नेत्रबन्धयेत् ।
नासी(सि)कं मध्यमं प्रोक्ता(क्तं) षण्मुखी ज्योतिरुच्यते ॥१७॥

दशनादशमुत्पन्ना मनसा तत्र लीयते ।
नवनादं परित्यज्य घण्टानादं सदा शृणु ॥१८॥

इति श्रीउमामाहेश्वरसंवादे राजयोगाऽमृतसारे आनन्दानन्दनाथविरचिते नाडीनदीमुद्रा नाम प्रथमो(मः) (उ)स(ल्ल)वासः ॥

॥ पार्वत्युवाच ॥

के तु योगविधा नाम के मार्गविधातन ।
कथं श्रेष्ठपदप्राप्ती(प्तिः) के(किं) योगं ब्रूहि शङ्कर ॥१॥

॥ ईश्वर उवाच ॥

मन्त्रयोगलयश्चैव हटयोगेषु कुण्डली ।
लम्बी(म्बि)का राजयोगश्च पञ्च योगाः प्रकीर्तिताः ॥२॥

पिपि(पी)लिको विहंगश्च कपिमार्गो हि मीनक(कः) ।
शेषमार्गो हि विख्याता(तः) पञ्चमार्गः पुरातनः ॥३॥

अजपा मन्त्रयोगश्च दर्शनादलस्मृतः ।
उ(अ)थाप्युरगषण्मुद्रा वायुधारणहाटका ॥४॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आहारक्षीरमौनस्तु जिह्वा केवलसाधनात् ।
उ(ऊ)र्ध्वद्वारामृतं प्राप्ये(प्य) बोधानन्देन लम्बिका ॥५॥

राजयोगविधा त्रिणि(तिस्रः) तस्य लक्षणं त्वं शृणु ।
सावधानमिति ज्ञेया जन्मकर्मनिवारणम् ॥६॥

राजयोगेषु नामश्च साङ्ख्यं च तारकाकृति ।
अमनस्कमिति ज्ञात्वा योगत्रयमुदाहृतम् ॥७॥

साङ्ख्ययोगेषु त्रिगुणं पञ्चविंशति तत्त्वतः ।
सर्वसाक्षी परं ब्रह्मा चन्द्रार्काग्निधृवेक्षणा ॥८॥

॥ अथ पञ्चीकरणम् ॥

पृथ्वीव्यापस्तथा तेजो वायुराकाशमेव च ।
पञ्च पञ्च विधा ज्ञेया पञ्चविंशति तत्त्वतः ॥९॥

स्थु(थू)लसूक्ष्मं कारणं च महाकारणमेव च ।
चतुर्थं देहसङ्ख्या च शततत्त्वं प्रकीर्तिताः ॥१०॥

पञ्च पञ्च विधास्तेषां छृ(व्य)ष्टिसमष्टिमेव च ।
सर्वतत्त्वमयः(यं) सारं साङ्ख्ययोगाः प्रकीर्तिताः ॥११॥

अन्तर्लक्षबहिर्लक्ष्यं मध्यलक्ष्यस्तथैव च ।
नानाकारकला ज्ञेया तारकं योगलक्षणम् ॥१२॥

ये कान्ते शुचिस्थानेषु सर्वासनसमुद्रयः ।
नानासाधनमार्गे च दृश्यादृश्ये स्वयं लयम् ॥१३॥

सगुणं निर्गुणं साक्षि अखण्डाकारमाश्रयेत् ।
नादबिन्दुकलातीता अमनस्कप्रकीर्तिताः ॥१४॥

॥ पार्वत्युवाच ॥

कथं ज्योतिः त्रयं नादं सोमसूर्याग्निमण्डलम् ।
सगुणं निर्गुणं मेधा ब्रूहि मे परमेश्वर ॥१५॥

॥ ईश्वर उवाच ॥

सगुणं चक्षुमध्ये तु अङ्गुष्टं(ठं) पर्वमात्रकम् ।
मसूरार्द्धप्रमाणेन तस्याग्रे सूक्ष्मकं ध्रुवम् ॥१६॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गुह्याद् गुह्यतरं साक्षान्नारायणमनामयम् ।
यन्मूर्ति लभते नित्यं चिन्मयं सूत्रधारिणम् ॥१७॥

जगं नाटळव्यापारं जगदाधारमूर्तये ।
स्वर्णज्योतिर्मणिर्ज्योति आपोज्योतिर्मयं परम् ॥१८॥

ज्योतित्रयप्रधानेन शिखावह्निप्रकीर्तिताः ।
सूर्यचन्द्राग्नि वर्तन्ते गङ्गायमुन(ना)सङ्गमे ॥१९॥

सरस्वतीप्रसादेन योगविद्याफलं लभेत् ।
नादबिन्दुकलाज्योतिः नानाकारं प्रदर्श(ये)त् ॥२०॥

प्रख्यातकुण्डली द्वारे वटविजानिरन्द्रयेत् ।
तन्मध्ये सर्वसञ्चारं दृष्टिर्वायुमनत्रयम् ॥२१॥

सार्द्धत्रयं तु कुण्डल्यां प्रमाणं विसु(विस)तन्तुवत् ।
मु(मू)र्ध्नि गछां(ङ्गा?)मृतं पि(पी)त्वा बोधानन्देन विस्मयेत् ॥२२॥

तत्त्वमसि महावाक्यरेच(क)पूरककुम्भकैः ।
अकारं च उकारं च मकारं च त्रिमात्रकम् ॥२३॥

राजसं रक्तवर्णं च सात्त्विकं स(श्)वेतवर्णयोः ।
तामसं नीलवर्णं च वर्णत्रयं गुणत्रयम् ॥२४॥

उष्णशीतप्रकाशेन मण्डलत्रयरु(रू)पकम् ।
अहर्निशि(शं) तदाकारं नक्षत्रं च ऋषिग्रहम् ॥२५॥

इत्येवं सगुण(णं) ज्ञात्वा मात्रा हृदयपङ्कजम् ।
अन्तर्बहिश्च तत्सर्वं व्याप्तान्ते सकलं जगत् ॥२६॥

॥ अथ निर्गुणम् ॥

निर्गुणं ब्रह्मरन्ध्रान्ते सहस्रं दलं पङ्कजम् (सहस्रदलपङ्कजम्) ।
नादबिन्दुकलातीतम् अवाग(ङ्)मनसगोचरम् ॥२७॥

कोटिसूर्यप्रतीकाशं चन्द्रकोटी(टि)सुशीतलम् ।
स्वयंज्योतिप्रकाशेन चिदाकाशमयं शिवः ॥२८॥

निराकारं स्मरेत् सर्वं निराकाशं निरामयम् ।
निरालम्बं पदप्राप्ते तत्र चितलयं गतः ॥२९॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आत्मानं गगनं ध्यात्वा ध्यानमाकाशजीवनम् ।
सर्वमेव परित्यज्य येको(एकं) देवं स्वयं जपेत् ॥३०॥

सदा ध्यानगुरोर्मूर्तिः सदा पूजा गुरोः पदम् ।
सदा मन्त्रर्गुरोर्वाक्यं सदा मुक्तिर्गुरोकृपा ॥३१॥

इत्येवं निर्गुणं ध्यात्वा सदा पश्यन्ति योगिनः ।
गुरुमुखेन ज्ञातव्यं नान्यथा ग्रन्थकोटिभिः ॥३२॥

अकस्माद् गुरुसन्तोषो साक्षात्कारं तु तत्क्षणात् ।
यथाकाशे तथा सत्यं परब्रह्ममयो विदुः ॥३३॥

इति श्रीउमामाहेश्वरसंवादे राजयोगाऽमृतसारे आनन्दानन्दनाथविरचिते
सगुणनिर्गुणो नाम द्वितीयः (उ)स(इ)वासः ॥

॥ अथ बुद्धिनिरु(रू)पणम् ॥

॥ ईश्वर उवाच ॥

स्तब्देस्तमुखमान्योति परब्रह्म मनोलयम् ।
त्यजेऽहङ्कारदुर्भावो कर्माकर्मविवर्जितः ॥१॥

कथं स्थित्वा तदा ध्यानं मौनं सत्यं वदाचरेत् ।
ज्ञानोत्कपो(?) पुरुषं यस्य कवाग्रेन(?) कदाचन ॥२॥

जले मध्ये तु पाषाणं स्वयस्यं सर्वदेहिनाम् ।
स्वयं शै(शि)वो स्वयं शक्तिः स्वयं नारायणो गुरुः ॥३॥

स्वयमादि अनादिस्व (स्व)यं सर्वत्र देवता ।
नानावर्णं स्वयं पूजा नानाध्यानं स्वयं लयम् ॥४॥

केलिविलासयोर्मध्ये तदश्यं दिष्टिमुर्ध्निजेत्(?) ।
स्रवजलामृतं प्राप्य पिप(पीत)(?)जिह्वा निरन्तरम् ॥५॥

दृश्यं सर्वं स्वयंमूर्ति भु(र)ग्रे विश्वं मयार्पितम् ।
तिष्ठन्तु कुण्डलिमध्ये अखण्डाकारमाश्रयेत् ॥७॥

लोकानां डजरु(रू)पाय स्वयंप्रा(प्र)काशगोप्यवत्
मूढानां मु(मू)ढरु(रू)पाय मु(मू)र्खाणां मु(मू)र्खरुपिणे ॥८॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बालानां बालरुपाय गु(गू)ढाणां(नां) गोप्यरूपिणे ।
निन्दको वञ्चको धूर्तो मूर्खो कलहवादिने ॥९॥

निंदास्यु(स्तु)तिकृतानेकं धारयेत् भेदं बुधयेत् ।
स्वयं भावजगत्सर्वं स्वयमेव निरामयम् ॥१०॥

मनसा भिन्नवक्तव्यं शोकहर्षद्वयं न च ।
सी(शी)तोष्णसुखदुःखानां तथा मानापमानयोः ॥११॥

तत्सर्वं गुरुरूपस्य पञ्चाशद्वर्णं पूजयेत् ।
यथा भावकरं शान्तिमुत्कोहमिति भावयेत् ॥१२॥

यति(ती)नां यतिरूपाय पतितानां पतितयोः ।
मतानां मतमार्गाय व्रतानां व्रतचारिणे ॥१३॥

योगी(गि)नां योगी विद्याय भोगी(गि)नां भू(भो?)गभूषणे ।
त्यागी(गि)नां त्यागी सर्वाय वृद्धानां वृद्ध मार्गयेत् ॥१४॥

विवेकी(कि)नां विवेकाय विमर्शाय विमर्शिनो(णे) ।
प्रकाशी(शि)नः प्रकाशाय ज्ञानी(नि)नां ज्ञानीरु(रू)पीणे ॥१५॥

सततं सहजं कर्मा चिद्विलासदृढं व्रतम् ।
योगभोगपरित्यागी सदान्तर्योगचारिणे ॥१६॥

आसनं स(श)यनं स्थाने गच्छ तिष्ठति योऽपि वा ।
आन्धोलिका स्वमूढाये(?) गजरूढाय साक्षिणे ॥१७॥

जाग्रत्(स्व)प्नषु(सु)षुप्त्यादि गुरुमूर्ति(र्तिं) सदा जपेत् ।
गुरुमूल(ला) तदा दृष्टि एकाग्र मूढधारणात् ॥१८॥

आसनं योगमुद्राय वायुधारणमेव च ।
जनमध्ये न कर्तव्यं डा(द्रा)बिकेन(?) कदाचनम् ॥१८॥

न क्रोधो न च मात्सर्यो न लोभो नासिमोहयोः ॥१९॥

एको मार्गमेकमन्त्रं एका निष्ठा परन्तपः ।
एको गुरुपदप्राप्ये मुक्तो भवती(ति)(?) पार्वती ॥२०॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ पार्वत्युवाच ॥

साष्टाङ्गो(ऽ)यं प्रणामस्य कृतार्थोऽहं सदा शिवः ।
विवर्जित अहंभावं साक्षात्कारात्मरु(रू)पिणि(णे) ॥२१॥

ब्रह्मसायुज्यमाप्नोति अनिर्वाच्यभवाऽम्यहम् ॥२२॥

इति श्रीउमामाहेश्वरसंवादे राजयोगाऽमृतसारे आनन्दानन्दनाथविरचिते बुद्धिनि(रू)पणो नाम तृतीयः उच्छवासः ॥

॥ शुभं भूयात् ॥
॥ कल्याणं ब्रूयात् ॥
॥ इदं पुस्तकं गणपति बावा(बा) भक्तियुक्तं सङ्ग्रहेत् ॥
॥ क्षेत्रकर्णाळिमध्ये ॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

श्रु

१ ॥श्रीगणेशायनमः॥ॐनमोदेवाधिदेवायसच्चिदानंदरूपिणे॥आ
दिमध्यांतशून्यायगुरवेपरमात्मने॥१॥पार्वत्युवाच॥देवदेवजग
न्नाथसर्वभूतहितेरत॥यद्रहस्यमिदंपुण्यंयोगमार्गंप्रशस्यते॥
२॥करुणासागरोशंभोलोकानुग्रहकारणात्॥गुह्यातगुह्यतरंस
सातपरंज्योतिप्रकाशकः॥३॥कथंनाडीनदीगंगाकथंबंधःत्रयं
बाधः॥कथंपंचविधामुद्रांसत्यमेववदशंकर॥ईश्वरउवाच॥इडाच
वामनिवासःगंगाभागीरथीनदी॥पींगलासव्यनाडीचयमुना १
नदिकेवलं॥५॥सुषुमणाअंगदाप्रोक्तागंडकीचमहानदी॥प्र

राजयोगामृतसारः, પ્રાચ્યવિદ્યામંદિર, હસ્તપ્રત - ક્રમાંક : ૧૩૬૨૦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पूर्वपक्षमञ्जूषा - આશાધર ભટ્ટની એક અપ્રકાશિત કૃતિ

હર્ષલ ભટ્ટ*

પૂર્વપક્ષ અને ઉત્તરપક્ષ દ્વારા શાસ્ત્રોને સમજવાની પરંપરા સંસ્કૃત ગ્રંથોમાં જોવા મળે છે. જેવી રીતે આજના સમયમાં દરેક વિષયોમાં પરીક્ષાલક્ષી પ્રશ્નોત્તર કે બીજા મહત્ત્વના મુદ્દાઓને અલગ તારવી તેનો સંગ્રહ પ્રકાશિત થાય છે, તેવી જ રીતે પહેલાં પણ શાસ્ત્રપઠન કરતા વિદ્યાર્થીઓ માટે મૂળ કૃતિઓમાંથી મહત્ત્વના મુદ્દાઓ અલગ તારવી તેનો પ્રશ્નોત્તર સ્વરૂપે હસ્તપ્રતોમાં સંગ્રહ થતો. આશાધર ભટ્ટ વિરચિત पूर्वपक्षमञ्जूषा નામની આ કૃતિ પણ કંઈક આવા જ હેતુથી લખાઈ હોય તેવું તેનાં લખાણ અને વિષયવસ્તુ પરથી જણાય છે.

કર્તા પરિચયઃ-

સંસ્કૃતકાવ્યશાસ્ત્રની પરંપરામાં આશાધર ભટ્ટ નામના બે વિદ્વાનોનાં નામોનો ઉલ્લેખ મળે છે.[1] त्रिषष्टि-स्मृतिशास्त्रम्, अष्टाङ्गहृदयोद्योतः અને काव्यालङ्कारटीका નામની કૃતિઓ પ્રથમ આશાધર ભટ્ટે (૧૩મી સદીમાં) લખી હોવાનું મનાય છે. જ્યારે कोविदानन्द, त्रिवेणिका અને अलङ्कारदीपिका (અપ્પયદીક્ષિતકૃત कुवलयानन्द પરની ટીકા) નામની કૃતિઓ દ્વિતીય આશાધર ભટ્ટે (૧૬મી સદીના ઉત્તરાર્ધમાં) લખી હોવાનું મનાય છે. થિયોડોર ઓફ્રેટના મતે આ બંને આશાધર ભટ્ટ એક જ છે.[2] તેમ છતાં તેમની કૃતિઓના સમયના આધારે તે બંને અલગ છે તેવો બહુમત છે. પ્રસ્તુત કૃતિ દ્વિતીય આશાધાર ભટ્ટની જ હોવાનો સંભવ છે કારણ કે, તેમણે લખેલાં कोविदानन्द અને अलङ्कारदीपिकाની જેમ અહીં પણ કૃતિના અંતે પુષ્પિકામાં તેના પિતા રામજી ભટ્ટના નામનો ઉલ્લેખ મળે છે.[3]

કૃતિ પરિચયઃ-

પ્રસ્તુત કૃતિમાં આશાધર ભટ્ટે પ્રશ્ન-ઉત્તર, સંદેહ અને સમાધાન દ્વારા વ્યાકરણ વિષયક કેટલાક મુદ્દાઓને ઉદાહરણ સહિત પ્રસ્તુત કર્યા છે. કાવ્યશાસ્ત્ર તેમનો મૂળ વિષય હોવા છતાં વ્યાકરણશાસ્ત્રમાં પણ शब्दत्रिवेणिका

'સ્વાધ્યાય' - પુ. ૫૬, વર્ષ ૨૦૧૯, પૃ. ૪૭-૫૫. ISSN 2250-0391

* સંસ્કૃત, પાલિ અને પ્રાકૃત વિભાગ, કલાસંકાય, મહારાજા સયાજીરાવ વિશ્વવિદ્યાલય, વડોદરા -૩૯૦૦૦૨
Email: harshalbhatt23@gmail.com

1. De, *Hindu Poetics*, Vol. 1, p.99
2. Aufrecht, Theodor, *Catalogus Catalogorum*, Vol. 1, p.54
3. ॥ इति श्रीरामजीभट्टात्मजाशाधरभट्टविरचिता पूर्वपक्षप्रश्नोत्तरा सम्पूर्णा ॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

જેવી કૃતિ રચી શબ્દશક્તિ વિષયક વૈયાકરણોના મતને સ્પષ્ટ કર્યો છે. પ્રસ્તુત કૃતિમાં કાલિદાસ વિરચિત રઘુવંશમ્, કુવલયાનન્દ, સૌન્દર્યલહરી, કુમારસમ્ભવમ્ અને બીજા સંસ્કૃત સાહિત્યનાં વિવિધ ઉદાહરણો આપી ભટ્ટોજી દીક્ષિતકૃત સિદ્ધાન્તકૌમુદી અને વૈયાકરણભૂષણઃ જેવા ગ્રંથોના આધારે સકર્મક-અકર્મક ધાતુઓ, વિવિધ પ્રત્યયો, કારક, સમાસ અને લક્ષણા જેવા વિષયો પ્રશ્નોત્તર દ્વારા સમજાવવામાં આવ્યા છે.

કૃતિનું પઠન કરતાં પ્રથમ દષ્ટિએ એવું લાગે કે, આશાધર ભટ્ટે પોતે પોતાના અભ્યાસકાળ દરમ્યાન કેટલાક મહત્ત્વના મુદ્દાઓને યાદ કરવા આ લખાણ લખ્યું હોય અને ત્યારબાદ કોઈએ તેની પ્રતિલિપિ કરાવી હોય. તેથી વિશેષ એવું પણ શક્ય છે કે કોઈ શાસ્ત્રપઠન કરતાં વિદ્યાર્થીઓને અનુલક્ષીને તેમણે આ કૃતિ લખી હોય. કારણ કે કૃતિનું લખાણ પ્રૌઢ નથી અને દરેક વિષયનાં પોતે જ પ્રશ્ન-ઉત્તર, શંકા-સમાધાન આપી, અત્યંત સરળ વાક્યો લખી દરેક મુદ્દાઓને બે કે ત્રણ પંક્તિઓમાં જ સમજાવવામાં આવ્યા છે. આ કૃતિની ખાસિયત તેમાં વિષય નિરૂપણ માટે અપાયેલાં ઉદાહરણો છે. જેમાં સૌથી વધુ ઉદાહરણો રઘુવંશમ્ માંથી અપાયાં છે.

કેટલાક ધાતુઓ સકર્મક છે કે અકર્મક તેવો સંશય દર્શાવી તેનાં સમાધાન આપ્યાં છે. જેમકે નમ્ ધાતુ સકર્મક છે કે અકર્મક છે તેવા સંશયના ઉત્તરમાં કહ્યું કે, જ્યારે નમ્ ધાતુ આરાધન અર્થમાં હોય ત્યારે સકર્મક પ્રયોગ થાય અને માત્ર નમન અર્થમાં હોય ત્યારે અકર્મક પ્રયોગ થાય છે. સ્થા ધાતુમાં ગમન ક્રિયાના અંતે પ્રાપ્તિ સંભવ હોય તો તેનો અકર્મક પ્રયોગ કરવો અન્યથા સકર્મક પ્રયોગ કરવો. ત્યારબાદ રઘુવંશના પ્રસિદ્ધ શ્લોક **विस्मापयन्विस्मितमात्मवृत्तौ....**માં **विस्मापयन्** વ્યાકરણ વિરુદ્ધ પાઠ છે તેવું દર્શાવ્યું છે. **निवापः पितृतर्पणम्** વાક્યમાં **निवापः** શબ્દથી પિતૃતર્પણ અર્થ પ્રતીત થાય છે તો **निवापाञ्जलिः** એવો પ્રયોગ શા માટે, રઘુવંશનો શ્લોક **रघोः पाण्डयाः....** ટાંકીને **पाण्डूनां राजानः पाण्डवः** સમાસ છતાં **पाण्डयाः** શબ્દપ્રયોગ શા માટે, વૃત્ ધાતુ સકર્મક છે કે અકર્મક જેવા પ્રશ્નોના ઉત્તર આપ્યા છે. વૈયાકરણભૂષણસારના આધારે સકર્મક ધાતુની વ્યાખ્યા આપી છે. સપ્તમી વિભક્તિ કહેતાં અધિકરણ કારકનું સિદ્ધાંતકૌમુદીના આધારે નિરૂપણ કરી અંતમાં શબ્દશક્તિ લક્ષણાનું પ્રસિદ્ધ ઉદાહરણ **गङ्गायां घोषः** વિશે ચર્ચા કરી છે.

હસ્તપ્રત પરિચયઃ-

પ્રસ્તુત કૃતિની એકમાત્ર હસ્તપ્રત પ્રાચ્યવિદ્યામંદિર, મહારાજા સયાજીરાવ વિશ્વવિદ્યાલય, વડોદરાના હસ્તપ્રત ભંડારમાં સંરક્ષિત છે. ત્યાંની હસ્તપ્રત સૂચીમાં તેનો પ્રાપ્તિ ક્રમાંક ૧૦૩૦૦ છે. સંસ્કૃત ભાષા અને દેવનાગરી લિપિમાં લખાયેલી આ પ્રતિકૃતિનો સમય સંવત્ ૧૮૨૫, શક સંવત્ ૧૭૬૧, વૈશાખ શુક્લ દ્વાદશી, રવિવાર છે. હસ્તપ્રતનાં પાનાંઓ પર પૂર્વપક્ષમઞ્જૂષા તેમજ પુષ્પિકામાં પૂર્વપક્ષપ્રશ્નોત્તરા એવું નામ મળે છે. પ્રતિકૃતિનાં લહિયાનું નામ ચક્રરામ છે જે ગુજરાતી છે તેવું તેના શરૂઆત અને અંતના લખાણ પરથી સ્પષ્ટ જણાય છે.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

જેમકે: श्रीस्वामिनारायणाय नमः...........अहिछत्रज्ञातीरेवासि वारणाना भटपीताम्बरात्मज चक्ररामेण लिखितमिदं पुस्तकं स्वार्थाय ॥

આ કૃતિ સિવાયની આવી જ ઘણી બધી નાની-નાની કૃતિઓની એકમાત્ર હસ્તપ્રતો વિવિધ હસ્તપ્રત ભંડારોમાં સચવાયેલી છે જેના પર સંશોધન થઈ તેનો વ્યવસ્થિત સંગ્રહ કરી તેનું પ્રકાશન પણ થાય તો શાસ્ત્રપઠન કરનારને જ્ઞાનલાભ થાય.

पूर्वपक्षमञ्जूषा

॥ श्रीस्वामिनारायणाय नमः ॥

पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणि व्यवस्थायामसंज्ञायामिति (अष्टाध्यायी.1.1.13) सूत्रेण यत्र संज्ञात्वमस्ति तत्र सर्वादिकार्यं न भवति । कथं तर्हि गङ्गाभगीरथेनैव पूर्वेषां (पावनक्षमा?)मिति । **श्रुतस्य यायादवमन्तमर्भकस्तथा परेषां युधि चेति पार्थिव** इति (रघुवंशम् 3.21) । पूर्वो ज्येष्ठे पूर्वज्येष्ठ्यादिति कोशात्पूर्व इत्यभिधीयते परदेशस्थितत्वात्पर इत्यभिधीयते । न तु संज्ञात्वमिति दिक् । इतरशब्दस्य सर्वादिगणे पाठाद्वन्येतराजानपदो पदाभिरित्यत्र सर्वादिकार्यं कथं न स्यात् । अत्र समाधानं तु बहुव्रीहिसमासेन भवति । [वन्या?] इतरे येषामिति ।

स्मर्यते **रातो ञौ पुक् च** इति सूत्रेण स्मर्यतेरात्मनेपदे **पुक्** स्यात् । कथं तर्हि **विस्मापयन्विस्मितमात्मवृत्तौ भूपालसिंहं निजगाद सिंह** इति (रघुवंशम् 2.33) । अत्र विस्मापयन्निति साधीयान् पाठः । विस्मापयन्निति व्याकरणविरुद्ध एव पाठः ।

सकीचकैर्मारुतपूर्णरन्ध्रैः कूजद्भिरापादितवंशकृत्यमिति (रघुवंशम् 2.12) । अत्र कीचकावेणवस्ते स्युः ये स्वनन्त्य निलोद्धताः इत्यभिधानात् मारुतपूर्णरन्ध्रैः कुजद्भिरितिपदद्वयं सङ्घटते इति चेन्मैवम् । अनेनाभिधानेन यदि न स्वनेयुस्तदपि कीचक इत्यभिधीयते । इदं विशेषणद्वयमापादितवंशकृत्यमित्यत्र हेतुत्वात् घटत एव अन्यदपि समाधानं भवति ।

निवापः पितृतर्पणमित्यभिधानात् एभ्यो निवापाञ्जलिः पितृणामिति(तॄ) कथं भवति । निवापशब्देन पितृतर्पणं कथ्यते चेत् अञ्जलिपदं किमर्थम् । इक्षुछायानिषादिन्य इति कथं न स्यात् । अत्र आङ्पूर्वः पाठो बोध्यम् इति समाधानम् । इक्षुछाये आसमन्तात् निषीदन्तिता इति ।

कुरुनादिभ्यो ण्यः (अष्टाध्यायी.4.1.172) इति सूत्रेण कौरव्यः नैषध्याः इति भवति । कथं तर्हि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सनैषधस्यार्थपतेः सुतायामुत्पादयामास निषिद्धशत्रुरिति । नैषध इत्यादौ तु शैषिकोऽण् बोध्यः ते तद्राजा न्यादय एतत्संज्ञाः स्युः । तद्राजस्य बहुषु तेनैवास्त्रियाम् । बहुषूर्थेषु(बहुषु अर्थेषु) तद्राजस्य लुक् स्यादिति [सूत्रेण ?]

तस्यामेव **रघोः पाण्ड्याः प्रतापं न विषेहिरे** (रघुवंशम् 4.49) इत्यत्र पाण्डूनां राजानः पाण्डवः इति कथं भवति । अत्र समाधानं **पाण्डोर्ड्यण्** [?] इति सूत्रेण पाण्डो राजा पाण्ड्य इति कृत्वा पाण्डो साधवः पाण्ड्या इति तत्र साधव इत्यनेन यत्प्रत्यये भवतीति समाधेयम् ।

कथं. तर्हि **रघूणामन्वयं वक्ष्ये** निरुध्यमाना यदुभिः कथञ्चित् । इत्यत्रापत्यार्थप्रत्ययस्य लुक् न स्यात् कथं तर्हि लुक् जातः । अत्र समाधानं रघुयदुशब्दयोस्तदपत्यलक्षणया । प्रिया-मनोज्ञा-कल्याणी-सुभगा-दुर्भगा-श्यामा-भक्तिः कान्ताश्वसा-क्षान्ता-सचिवा-चपला-बला-दुहिता-तनया-वामा एते प्रोक्ताः प्रियादयः (गणपाठे) । एषूत्तरेषु पूर्वस्य पुंवद्भावो न जायते ।

तर्हि कथं **दृढा भक्तिरिति ज्येष्ठे राज्यतृष्णापराङ्मुख** इति (रघुवंशम् 12.19) । ननु कुसुमभारनतेति रघुवंशे । **अम्बां प्रणत्योपनता नताङ्गी नलेन भैमी पथि योगमापेति नैषधे** (6.48) ॥ **नमन्ति सन्तस्त्रैलोक्यादपि लघु समुन्नतमिति** कुवलयानन्दे ॥ **(हरिस्त्वामाराध्य) प्रणतजनसौभाग्यजननीमिति** (सौन्दर्यलहरीस्तोत्रे ५) ॥ **कृष्णाय नो नमति यच्छिर एकदापि** इति भागवते । **नमन्ति फलभारेण रम्भाभूरितरश्रिय** इति च सर्वत्र [अमुत्र द्वी?] भावे इति च सर्वत्र भावे इति धातोरकर्मकत्वं दृश्यते । न च अविवक्षितकर्मतया अकर्मकत्वम् । धातोरर्थान्तरे वृत्तेर्धातौ अर्थेनोपसङ्ग्रहात् । प्रसिद्धेरविवक्षातः **कर्मिणोऽकर्मिका क्रियेति** वृद्धवचनादिति वाच्यम् । अविवक्षायाः प्राप्तिपूर्वकत्वेनासम्भवात् । यत्र प्रमाणान्तरलभ्यत्वं कर्मणः स्यात् तत्रैवाविवक्षा । यथा पश्येत् कश्चिच्चपल **चलरे** इत्यत्र चपलेति सम्बोधनेन **चलरे** इति निर्भ [र्त्स?] ने चापलरूपस्य पश्यति कर्मणो गम्यमानतयाऽविवक्षकुसुमभारनतेत्यादौ तु तथा सम्भवादकर्मकत्वमेव । नमतेः सम्भवति चैतत् नमनं हि [प्रद्वी?] भावः । स चाङ्गस्य नीचैर्भवनं तयोरपि कर्तृनिष्ठत्वेन नमतेरकर्मकत्वमेव

फलव्यापारयोरेकनिष्ठतायामकर्मकः ।

धातुस्तयो धर्मिभेदे सकर्मक उदाहृतः ॥

इति **वैयाकरणभूषणे** उक्तम् । कुत्रचित्सकर्मकत्वं नमतेर्दृश्यते । तथाहि **नत्वा वरदराजश्री गुरून् भट्टोजिदीक्षितान्** इति । **नमन्ति यत्पादनिकेतमात्मन** इति । शिवं नम वराकत्वं ज्ञानं **मोक्षं यदीच्छसीति । प्रणम्य परमात्मानमिति** । अत्र सर्वत्रसकर्मकत्वं दृश्यते एवं नम् धातोः कुत्रचिदकर्मकत्वं

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दृश्यते कुत्रचित् सकर्मकत्वं दृश्यते इति संशयः । संशयो मा कर्तव्यः । समाधीयताम् । नम् धातोरकर्मकत्वं विवेचनानुपूर्वं कृतम् । कुसुमभारतनेत्यादौ नमतेर्नतौ लक्षणा कर्तव्येति । अत्र तु सर्वत्र नमतेराराधनार्थत्वं सकर्मकता न सम्भवेत् । स चार्थौ लाक्षणिक एव नत्वा आराध्येत्यर्थः । यत्र नमतेराराधनार्थत्वं तत्र सकर्मकत्वं यत्र नमनमात्रं तत्राकर्मकत्वमेव हि सिद्धान्तः ।

ननु **निववृते महार्णवरोधसः सचिवकारितबालसुताञ्जलीन् । समनुकम्प्य सपत्नपरिग्रहाननलकानलकानवमां पुरीम्** ॥ (रघुवंशम् 9.14) इत्यत्र वृतु वर्तने इति धातोः सकर्मकत्वं कथं स्यात् । सर्वत्राकर्मकत्वं दृश्यते । तथाहि **रसवर्जं रसोप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते** इति । गृहान्निववृते धीर इति । निवृत्तत...रुपगीयमानादित्यादिषु नि पूर्वस्य वृतु धातोरकर्मकत्वं दृश्यते इति प्रश्नः । अत्र समाधीयते । पुरीमिति गम्यमानप्रतियोगे द्वितीया । धात्वर्थव्यापारव्यधिकरणफलशालित्वस्य कर्मणोऽत्रासम्भवात् । **निवर्तनं हि पश्चादभूयवर्तनम्** । तत्र पश्चात् भवनानुकूलश्चलनादिव्यापारः । ननु हरिहरिप्रस्थमथप्रतस्थे इत्यत्र **ततः प्रतस्थे कौबेरीं भास्वानिव रघुर्दिशमित्यत्र**। भुजविजितविमानरत्नाधिरूढः प्रतस्थे पुरीमित्यत्र । ष्ठा गतिनिवृत्ताविति धातोः सकर्मकत्वं दृश्यते । **पारसीकांस्ततो जेतुं प्रतस्थे स्थलवर्त्मनेति** । प्रस्थातुं समयोऽयमेव भवतामिति प्रस्थितायां प्रतिष्ठेथाः स्थितायां स्थानमाचरेः इत्यादौ स्था धातोरकर्मकत्वं दृश्यते । अत्र संशयः । स्था धातुः किं सकर्मकः वाऽकर्मकः इति प्रश्नः । अत्र समाधीयते । हरिप्रस्थं प्रतस्थे इत्यादावध्याहृतप्रतियोग एव द्वितीया । अन्यथा द्वितीयान्तपदं वृथा स्यात् । यत्र प्राप्तिः सम्भवति । तत्र सकर्मकत्वम् । प्रतस्थे स्थलवर्त्मनेत्यादिषु प्रस्थानं हि चलनमात्रं न तु प्राप्तिसंवलितं गमनमित्यकर्मकत्वम् । हरिः प्रस्थं प्रतस्थे इत्यादिषु न च **देशकालो भावोध्वागन्तव्य** इति वार्तिकेन कर्मत्वादत्र द्वितीया वक्तुं युक्ता दूरदेशस्य कुरून् स्वपिति...दिवत्धात्वर्थेऽयोगसम्भवात् ।

परिस्वीकृतसागरामित्यत्र **अभूत तद्भावे** इति सूत्रेण **च्वि** प्रत्ययः । ननु **अभूत तद्भावे च्विरित्यत्र** अभूतपदं किमर्थम् । भवनं हि अभूतस्यैव जायते न तु भूतस्य । अथ च तत्पदं किमर्थम् अथवा अभूतस्य तद्भावोऽभूतभावम् इत्येवं सुपेऽर्थः कथं न स्यात् । ननु कटं करोतीत्यत्र कटी करोतीत्येवं कथं न स्यात् इति प्रश्नः । अत्रोच्यते । एतत्पदद्वयं विना विवक्षितार्थो न सिध्येत । तथाहि । अभूतस्य यस्माच्छब्दात् च्वि प्रत्यय उत्पद्यते तदर्थरूपेण अभूतभवनमभूततद्भावः । तस्माच्वि प्रत्ययो विधीयते तत्पदं च्वि प्रकृतिरित्यर्थः । न चात्र तच्छब्दस्य सन्निहितं परत्वं शक्यम् । तथा सति अभूतसन्निहिततया अभूतस्य । अभूतभाव इत्यर्थो क्रियमाणे वाक्यार्थोऽसङ्गतः स्यात् । एवं चार्थः । कीदृशः प्रश्नश्च सम्पन्नः । उच्यते । अभूतभावो विशिष्टस्य विशिष्टी भवनमिति विकारवाचका च्वि प्रत्यय इति विकारो ह्यत्र विशेषणमेव । रूपान्तरेण विधीयमानं हि विशेषणमेव सम्भवति । न तु विशेष्यम् । तेन कटं करोति कारुक इत्यादौ च्वि प्रत्यय इति दिक् । इति च्वि प्रत्यय विचारः ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ननु **कर्मधारयान्मत्वर्थीयो बहुव्रीहिश्चेत्तदर्थप्रत्ययः कः** इति सूत्रेण कर्मधारयात्तत्पुरुषं कृत्वा मत्वर्थीयः प्रत्ययो वत्विनादिर्न स्यात् । कथं तर्हि अर्द्धाङ्गीकृत दाम्पत्यमपि गाढानुरागि यदित्यत्र गाढश्चासावनुरागश्च गाढानुराग इति स्यात् । कर्मधारयतत्पुरुषं विधाय... अस्ति अस्येति गाढानुरागीति एवं समासो न स्यात् । कुतः? पाणिनीयसूत्रविरोधात् । अत्र गाढोऽनुरागो यस्येति गाढानुरागमिति बहुव्रीहि समासेन वाक्यार्थस्तु सिध्यति । बहुव्रीहिरर्थप्रत्यायको न भवति । एवमुच्यते तन्मैवम् अत्र बहुव्रीहिरर्थप्रत्यायकोऽत्र न भवति कथमत्र संयोगसम्बन्धज्ञापनत्वेन कर्मधारयान्मत्वर्थीयो भवेत् । तदुक्तं मनोरमायाम् । **भूमिनिन्दाप्रशंसासु नित्ययोगेऽतिशायने । सम्बन्धेऽस्तिविवक्षायां भवन्ति मतुबादयः** । इति एष्वर्थेषु मतुबादयः प्रत्यया भवन्ति । अत्र इन्प्रत्ययफलं तु संयोगसम्बन्धज्ञापनमेव तस्मात्फलमुखं गौरवं न दोषायेति । निष्प्रत्यूहमुपास्महे भगवतः । कौमोदकीं लक्ष्मणः कोकप्रीतिचकोरपाटनपटुज्योतिष्मतिलोचने इति मुरारिनाटकः । कोकप्रीतिचकोरपाटनपटुज्योतिष्मति । अत्र तु महाकवि प्रयोगो येन केन प्रकारेण समाधेयः । अथ **लघ्वान्तरा सावरणेऽपि गेहे योगप्रभावो न च लक्षते । बिभर्षि चाकारमनिर्वृतानां मृणालिनी-हैममिवोपरागम्** (रघुवंशम् 16.7) इत्यत्र चकारद्वयं किमर्थमिति प्रश्नः । समुच्चयार्थं न भवति भिन्नवाक्याभावात् । अत्र तु साकांक्षाणि वाक्यानि सन्ति । त्वं सावरणेऽपि गेहे लघ्वान्तराऽसिते योगप्रभावश्च योगप्रभावस्तु न लक्षते । अत्र चकारस्त्वर्थे । बिभर्षि चाकारमनिर्वृतानामित्यत्र च शब्दो **यत** इत्यर्थे **च** शब्देन यतः यद्यस्मात्कारणात् त्वम् अनिर्वृतानामाकारं बिभर्षि इति समाधानम् । अथ **लग्नद्विरेफं परिभूय पद्मं समेघलेखं शशिनश्च बिम्बम् । तदाननश्रीरलकैः प्रसिद्धैः विच्छेदसादृश्यकथाप्रसङ्गम्** (कुमारसम्भवम् 7.5) इत्यत्र लीनद्विरेफं पद्मं परिभूय समेघलेखं शशिनश्च बिम्बं परिभूयेत्यत्र **परेर्भूवोऽवज्ञाते** इति सूत्रेण पर्युपसर्गसहितो यत्र भू धातुस्तिष्ठति तत्रावज्ञारूपोऽर्थो भवति । तर्हि परिभूय अवज्ञायेत्यर्थः ।

अत्र संशयः । स्वतः किञ्चिदुपमाने न्यूनं स्यात्तदाऽवगणना सम्भवति । अत्र तु न्यूनं किमपि नास्ति केशभ्रमरयोः साम्यम् । आननपद्मयोः साम्यमस्ति पूर्णोपमाऽत्र शुद्धा एव स्वतो न्यूनाभावादवगणना न सम्भवतीति प्रश्नः ।

अत्र समाधीयते । तदाननश्रीः प्रसिद्धैरलकैः लीनद्विरेफं पद्मं परिभूयसादृश्यकथाप्रसङ्गं चिच्छेदेत्यत्र लीनद्विरेफ यस्मिन्निति लीनशब्देन अदृश्यत्वं जातम् । उपमेये तु प्रसिद्धैरिति विशेषणं [प्सि?] द्धाऽदृश्ययोः कथं तुल्यत्वमतोऽवगणनास्थानम् । **समेघलेखं शशिनश्चबिम्बमि**त्यत्र मेघलेखायाः शशिबिम्बस्य च कदाचित्कं सहावस्थानं भवति । भवति चेत् क्षणं तिष्ठति तेन मेघलेखाशशिबिम्बयोः क्षणिकसम्बन्धो भवति । उपमेये तु प्रसिद्धकेशानां मुखस्य नित्यमेव सहावस्थानं भवति । अनयोः समवायसम्बन्धोऽस्ति नित्योऽयं सम्बन्धः समवायः क्षणिकनित्ययोः कथं तुल्यत्वमतोऽवगणना घटत एव इति समाधानं सम्यक् जातम् ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कथं **शरीरमात्रं विकृतिं प्रपेदे तथैव तस्थु फणरत्नशोभा** (कुमारसम्भवम् 7.34)इत्यत्र शरीरमेव शरीरमात्रमिति मात्र [प्रत्ययेन?] शरीरादन्यत् किमपि न विकृतम् । **मात्रं कात्स्न्येऽवधारणे** इत्यभिधानात् । फणरत्नशोभाः तथैव तस्थुरित्यत्र शोभापदं व्यर्थम् । फणरत्नानां विकृतत्वापत्ते फणरत्नानि तथैव तस्थुरेवं वक्तव्यम् । यदा रत्नानि तथैव स्थितानि तदा शोभापि स्थिता एव । तस्माच्छोभापदं न घटते इत्यर्थ इति प्रश्नः । अत्र समाधीयते । सविशेषणे हि विधिनिषेधो सति विशेष्यबाधे विशेषणमुपसङ्क्रामतः सति विशेषणे बाधे विशेष्यमुपसङ्क्रामतः । अत्र तु रत्नानां शोभा रत्नशोभा इत्यत्र भेद्यं विशेष्यमित्याहुर्भेदकं तु विशेषणमिति । भेद्यभेदकयोः श्लिष्टिः सम्बन्धोऽन्योन्यमिष्यते । श्लिष्टो यद्यपि सम्बन्धः...व्युत्पत्तिस्तु भेदकात् । यथा राजपुरुषः । राज इति विशेषणं भवति । पुरुष इति पदं विशेष्यं भवति । तद्ववदत्रापि रत्न इति पदं विशेषणं भवति । शोभा इति पदं विशेष्यं भवति । विशेष्ये तु यदा बाधः समायास्तदा(?) विशेषणमुपसङ्क्रामति तदा यद्विशेषणं तद्विशेष्यं भवति यद्विशेष्यं तद्विशेषणं भवति तदर्थः । कियान् सम्पन्नः शोभापदं रत्नपदस्य विशेषणं तदा शोभाविशिष्टरत्नानि तथैव तस्थुरित्यर्थः । इति समाधानम् ।

ननु निरास्पदं प्रश्नकुतूहलत्वं निरास्पदं यत् प्रश्नकुतूहलम् तदस्ति अस्येति प्रश्न कुतूहली तस्य भावः प्रश्नः कुतूहलित्वम् । मल्लिनाथेन तु आगमनप्रश्नो निरास्पदं इति भावः एवं लिखितम् । कुतूहलित्वस्य पर्यायस्तु न धृतः कुतूहलित्वपदं नोचेत्तदासम्यक् । तस्मात्कुतूहलित्वपदं न घटते इति प्रश्नः । एवं च समाधीयते । अत्रापि सविशेषणे विधिनिषेधाविति वामनसूत्रेणैव समाधानं प्रश्नपदं विशेषणं भवति कुतूहलित्वपदं विशेष्यं भवति । विशेष्ये बाधः समायातश्चेद्विशेष्ये विशेषणं सङ्क्रामति तदा यद्विशेषणं तद्विशेष्यं यद्विशेष्यं तद्विशेषणम् । एवमर्थः । एतेन मुनेर्महत्वं सूचितम् । अस्मात् प्रश्नस्य कुतूहलित्वं नाम कुतूहलशब्देनेच्छा न जायते तर्हि प्रश्नस्तु कुत एवेति अस्मासु निःस्पृहाणामधीनं किमिति हेतुत्वात् इति प्रश्नभङ्गः ।

अथ **जनेनमेने शरदः कृतार्थतेत्यत्र त्वतलोर्गुणवचनस्य पुंवद्भाव** इति सूत्रेण गुणवचनस्य पुंवद्भावः शुक्लाया भावः शुक्लत्वमिति जायते परन्तु कृतार्थाया भावः कृतार्थता इति न तु जायते इति महान् संशयः । अत्र समाधानं तु सामान्ये नपुंसकं विधाय समासः कर्तव्यः । अथ **तपनभं दलदीपितमेकतः सततनैषतमोवृतमन्यतः हसितभिन्नतमिस्रचयं पुरः शिभमिवानुगतं गजचर्मणोत्यत्र** ओजः [सहोंभस्तम?] सस्तृतीयाया अलुक् स्यादिति सूत्रेणाम्भः ? शब्दस्य तृतीया अलुक्स्यात् । तदा नैषतमसावृतं नैषतँमोवृतमिति न स्यात् एवं पूर्वपक्षः ।

अत्र समाधानं तु भारविप्रयोगस्तु इत्थं समाधेयः । वृत्तं वृत्तिः नैषतमसो वृत्तिरिति षष्ठीसमासः नपुंसकभावात्तस्य योगे शेषविवक्षायां षष्ठी । सततं नैषतमोवृतं यस्मिन्निति बहुव्रीहिः । यद्वा वृतु वर्तने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

घञर्थेकविधानमिति भावे क्तः शेषं प्राग्वत् इति दिक् । अथ स्पृहणीयगुणैर्महात्मश्चरिते वर्त्नियच्छतां मनः विधि हेतुरहेतुरागसंविनिपातोपि समः समुन्नतेरित्यत्र विधिहेतुरित्यनेन यस्य विनिपातस्य दैवं कारणम् आगमसा..हेतुरित्नेन अपराधानाम् अकारणमत्र विरुद्धं यस्य विनिपातस्य अपराधः कारणं न एवमर्थः ।

कथ्यते समीचीनम् अत्र हेतुमाह । अपराधानन्तरं विनिपातस्य...सन्नत्वात् इति प्रश्नः । अत्र समाधानं तु आगः शब्दस्य आगः ख्यातौ लक्षणाविनिपातनन्तरभागः ख्यातिर्भवति येन विनिपातेन आगः ख्यातर्भवति इति । सानन्दतनुजाविवाहे तु मतेभीमः(?) सभूमीपति वैदर्भीनिषधेश्वरौ नृपजना निष्ठोक्ति संमृषये स्वानिधराधिपाश्च....दृश्ययान्तः क्रमादेको द्वौ बहवश्चकारसृजतः स्मातेनिरे मङ्गलमित्र(?) सभूमिपतीत्यनेन वैदर्भी निषधेश्वरादीत्यनेन धराधिपा इत्यनेन एक द्वि बहुवचनन्तु आगतमेव किमर्थमेक द्वौ बहव इति प्रश्नः ।

स्वर्गं सङ्गच्छति यदि नाधिपम् इत्यत्र **समोगमादिभ्यश्च** इत्यनेन सूत्रेण सङ्गच्छति इत्यत्र आत्मनेपदं कथं न स्यात् इति प्रश्नः । अत्रोच्यते **समोगमादिभ्यश्च** इति सूत्रे अकर्मकत्वं विवक्षाविषयम् इति दिक् । अथ **वागर्थाविव संपृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये । जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ** (रघुवंशम् 1) इत्यत्र पार्वतीपरमेश्वरयोः वागर्थयोरुपमानत्वं न सम्भवति । कुतः पार्वतीपरमेश्वरयोः सम्पृक्तत्वं वरीवर्त्ति वागर्थयोः सम्पृक्तत्वं नास्ति । वागुच्चरितः शब्दस्तु सुखे तिष्ठति । अर्थस्तु अन्यस्थले वर्तते । घट इत्युच्यते चेत् घटशब्दस्तु मुखे घटशब्दस्यार्थस्तु कालगेहे इति प्रश्नः । किञ्च अस्तु नाम । वागर्थप्रतिपत्तये इत्यत्र अर्थशब्दग्रहणं किमर्थं वाक्शब्देनैवासिद्धे सति । अथ तमब्ग्रहणं किमिति अतिशयार्थद्योतनार्थं तत् ।

ननु प्रकारान्तरेणाप्यतिशयार्थ...मः स्यात् । किं तेनेति चेन्न तथाहि कारकेत्यधिकारादस्मिन् सूत्रेण कारके इति तस्य तमनुवर्तते च **तच्चार्थवशाद्विभक्ति विपरिणामम्** इति परिभाषया प्रथमान्त सह साधकपदस्य विशेषणं भवति तेन साधकं कारकं करणमित्यर्थं सम्पद्यते । तत्र च साधककारकयोः समानर्थकत्वादेकेनैव निर्वाहे द्वितीयं पदमिति शपार्थद्योतनेनैव सार्थकं भवति । एवं सत्यपि तमब्ग्रहणं कुर्वताचार्येणास्मिन्नधिकारे सामर्थ्यगम्यः प्रकर्णेनाश्रियते इति सूचितम् इति ज्ञापनफलमुदाहरति ।

गङ्गायां घोष इति यदिदं ज्ञापनं न स्यात्तर्हि **आधारोऽधिकरणम्** (अष्टाध्यायी 1.4.45) इति सूत्रे कारकपदानुवृत्या अतिशयार्थनात् यत्र अव्ययेनाधारत्वं तत्रैव सप्तमी स्यात् तण्डुलेषु पाक इत्यादौ न तु कर्तृकर्मव्यवहिताधरि कटे आस्ते देवदत्तः स्थाल्यामन्नं पचतीत्यादौ गङ्गायां घोषः तटे गावः सुशेरते इत्यादौ सामीपिके आधारे तु कर्त्रलक्षार्थयोरुभयोर्व्यवधानेन क्रियाया विद्यमानत्वात्सप्तमी शङ्कापि निरवकाशेति न च तण्डुलेषु पाक इत्पापि कृदभिहितो भावो द्रव्यवत् प्रकाशते इति न्यायात् क्रियायाः कर्तृव्यवहितत्वं शक्यं द्रव्यवत् प्रकाशते इत्यत्रातिदेशात् द्रव्यकार्याणि लिङ्गसङ्ख्यादीति लभते ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ननु क्रियात्वं जहतीति तात्पर्यात् न च गङ्गायां घोष इत्यत्र गङ्गापदस्य लक्षणया तीरपरत्वात् कर्तृमात्रव्यवधानमस्तीति वाच्यम् । लक्षणया तीरपरत्वेऽपि प्रवाहप्रतीतेरसम्भवादुभयव्यवधानं तुल्यमिव वस्तुतस्तु तण्डुलेषु पाक इत्युदाहरणं कटे आस्ते स्थाल्यामोदनं पचतीत्यादीनि प्रत्युदाहरणानि इत्येव सुवचनं यन्नामा(?) यत्र चैत्यादिविषयेऽपि तादृशः । येन लिङ्गेन यो देशो युक्तः समभिलक्षते तेनैव नाम्ना......षिणः । इति लक्षणया विनापि सामीपिकाधारस्य वाच्यत्वेन स्वीकारात् ।

अत एवोक्तं वाक्यपदीये । **कर्तृकर्मव्यवहितां साक्षाद्धारये क्रियाम् । उपकुर्वत्क्रियासिद्धौ शास्त्रेऽधिकरणं स्मृतमिति** । अस्मिन् श्लोके साक्षादाधारये क्रियामिति पाठस्तु प्रामादिकः पुनरुक्तिदोषायतेरिति दिक् ।

॥ इति श्रीरामजीभट्टात्मजाशाधरभट्टविरचिता पूर्वपक्षप्रश्नोत्तरा सम्पूर्णा ॥ ॥श्रीरस्तु॥ ॥कल्याणमस्तु॥ ॥ शुभं भवतु ॥ संवत् १८२५ना शाके १७६१ प्रवर्तमाने वैशाखमासे शुक्लपक्षे तिथौ १२ रविवासरे ॥ अहिछत्रज्ञातीरेवासि वारणाना भटपीताम्बरात्मज चक्ररामेण लिखितमिदं पुस्तकं स्वार्थाय ॥ ॥यावत् दृष्टं तल्लिखितं न मे दोषः॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

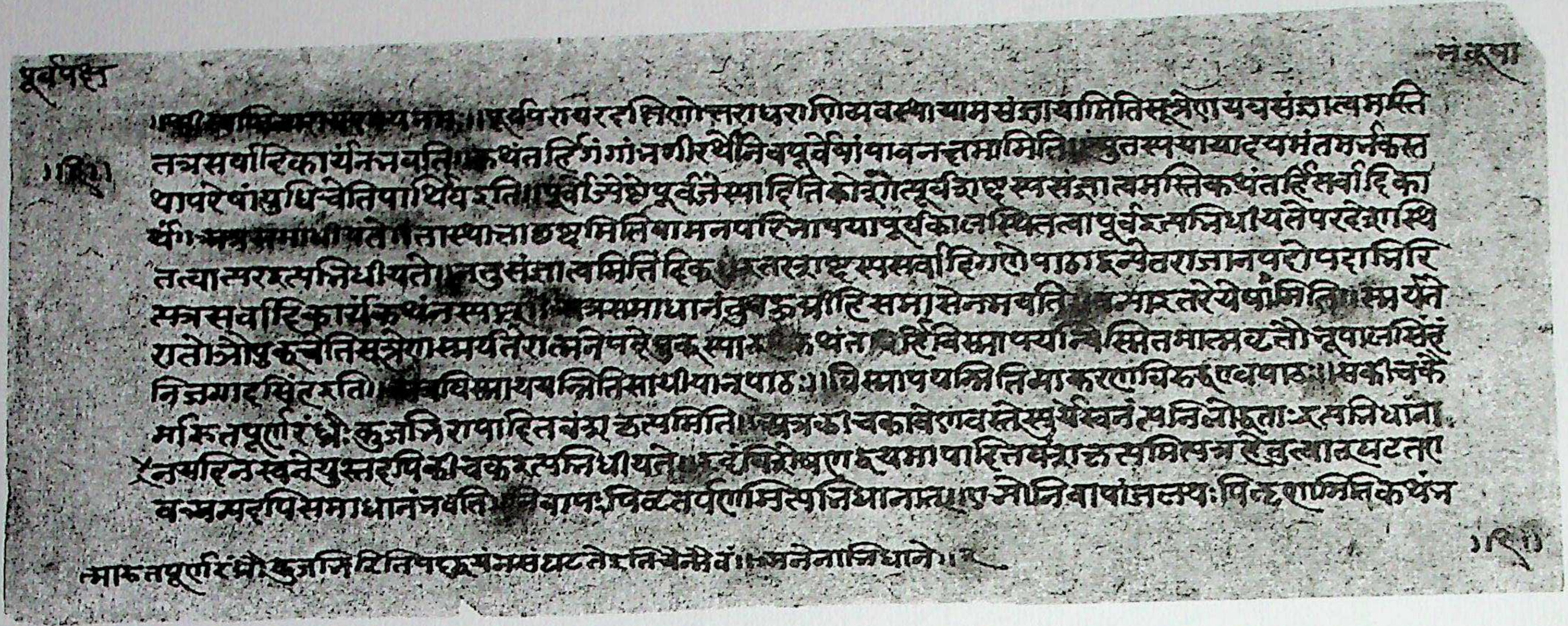

पूर्वपक्षमञ्जूषा, प्राच्यविद्यामंदिर, हस्तप्रत - क्रमांक : १०३००

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

કવિ મયૂરકૃત रसाष्टकम्

વંદના લેલે*

'સૂર્યશતક'ના રચયિતા કવિ મયૂરથી ભાગ્યે જ કોઈ સંસ્કૃતના અભ્યાસુ અજાણ હશે કારણ કે આ કૃતિ દ્વારા સૂર્યની ઉપાસના કરવાથી કુષ્ઠરોગના શાપથી પીડિત કવિ મયૂર રોગમુક્ત થયાની આખ્યાયિકા સંસ્કૃત સાહિત્યમાં પ્રચલિત છે. કવિ મયૂરનો સમય ઈ.સ. ૭મી સદી ગણાય છે અને તેઓ કાશીના પૂર્વભાગના નિવાસી હતા.[૧] જૈન દંતકથાઓ, ઉત્તરવર્તી ભાષ્યકારોનાં નિવેદનો અને કાવ્યસંગ્રાહકોની પરંપરાના આધારે કવિ મયૂર, બાણભટ્ટ સાથે હર્ષની સભામાં તેમના સાહિત્યિક પ્રતિસ્પર્ધી અને વૈવાહિક સંબંધોના આધારે બાણના જમાઈ અથવા સસરા હતા.[૨] કવિ મયૂરે સૂર્યશતક, મયૂરાષ્ટક અને સુભાષિતસંગ્રહોમાં સંકલિત થયેલાં થોડાં પદ્ય સિવાય બીજા કોઈ ગ્રંથ લખ્યા નથી.[૩] સૂર્યશતક અને મયૂરાષ્ટકની રચનામાંથી મયૂરાષ્ટક એ તેમની પ્રથમ રચના માનવામાં આવે છે. મયૂરાષ્ટકની રચનામાં કવિએ આઠ શ્લોકોમાં પોતાની પુત્રી, જે કવિ બાણની પત્ની હતી તેના સૌંદર્યનું અશ્લીલ વર્ણન કર્યું છે. જેનાથી કુપિત થઈ પુત્રીએ પિતાને કુષ્ઠરોગનો શાપ આપ્યાની કિંવદંતી પ્રચલિત છે જેની નોંધ મધુસૂદનની સૂર્યશતક પર લખેલી ભાવબોધિની ટીકામાં ઉદ્ધૃત થયેલી છે[૪] અને એક જૈન સંસ્કરણ પણ આ જ કિંવદંતીનો ઉલ્લેખ કરે છે.[૫] ત્યારબાદ ઘણા સંપાદકો દ્વારા તેનું પુનરાવર્તન થયેલું જોવા મળે છે. બીજી પ્રચલિત કિંવદંતી જણાવે છે કે એક વખત રાત્રિ લગભગ સમાપ્ત થવા આવી હતી ત્યારે મયૂર કોઈ કારણવશાત્ પોતાના જમાઈ બાણના ઘરે ગયા. બહારથી જ તેમણે બાણ અને તેની પત્ની, એટલે કે પોતાની પુત્રી કે જે બાણ પર અપ્રસન્ન થઈ હતી, તેમની વચ્ચેનો પ્રણયકલહ સાંભળ્યો. બાણ તેને સંસ્કૃતમાં શ્લોક રચીને મનાવવાનો પ્રયત્ન કરી રહ્યા હતા. ત્રણ પંક્તિ બાણે કહી સંભળાવી અને ચોથી પંક્તિ બાણથી રચાતી ન હતી તે દરમ્યાન મયૂરે તે તૈયાર કરી કહી સંભળાવી જે અશ્લીલ હતી.

'સ્વાધ્યાય' - પુ. ૫૬, વર્ષ ૨૦૧૯, પૃ. ૫૭-૬૬. ISSN 2250-0391

* ૨૦૧, કેશવ, ગુરુપ્રસાદ સોસાયટી, અકોટા, વડોદરા - ૩૯૦ ૦૦૭, Email : vandana.lele1@gmail.com

૧. वर्णेकर, श्रीधर भास्कर, संस्कृत वाङ्मयकोश, प्रथम खण्ड (ग्रंथकार), भारतीय भाषा परिषद, कलकत्ता, १९८८, पृ. ४०९-४१०

૨. Dasgupta, S. N., *A History of Sanskrit Literature and Classical Period*, Vol. I, University of Calcutta, 1947, pp. 188-189.

૩. त्रिपाठी रमाकान्त, श्रीमयूरभट्टविरचितं सूर्यशतकम् 'कला' - हिन्दीव्याख्योपेतम्, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, १९६४, पृ. १२

૪. એજન, પૃ. ૧૪-૧૫

૫. Quackenbos, G. P., *The Sanskrit Poems of Mayūra*, Columbia University Press, New York, 1917, p. 69

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

તે સાંભળી કુપિત થયેલી પુત્રીએ પોતાના પિતા મયૂરને કુષ્ઠરોગનો શાપ આપ્યો.[૬] આ શાપના નિવારણ માટે મયૂરે સૂર્યશતકની રચના કરી. તે સંદર્ભના આધારે મયૂરાષ્ટકને કવિ મયૂરની પ્રથમ રચના ગણી શકાય. સૂર્યશતકના ટીકાકાર રમાકાન્ત ત્રિપાઠી કહે છે કે, મયૂરાષ્ટકની ભાષા તથા શૈલીના આધાર પરથી પણ તેને તેમની પ્રારંભિક રચના માની શકાય.[૭]

ઉપર જણાવ્યા પ્રમાણે મયૂરના નામે સૂર્યશતક, મયૂરાષ્ટક અને થોડાં સુભાષિત નોંધાયેલાં છે. આ સંશોધનાત્મક લેખમાં અષ્ટક રચનાના આધારે ઉલ્લેખિત કવિ મયૂરકૃત રસાષ્ટકમ્ અને મયૂરાષ્ટકમ્ વચ્ચેનો સંબંધ શું ? આ બંને એક જ કૃતિ છે કે ભિન્ન ? આ બે રચનાઓનો કવિ મયૂર એક જ છે કે ભિન્ન ? ઇત્યાદિ પ્રશ્નોના ઉત્તર પ્રાપ્ત કરવાનો પ્રયત્ન કરવામાં આવેલ છે.

હસ્તપ્રતનું વિવરણ :

વડોદરાના પ્રાચ્યવિદ્યામંદિરના હસ્તપ્રત વિભાગમાં રસાષ્ટકની પ્રત સંગ્રહિત છે અને તે અદ્યાવધિ અપ્રકાશિત છે.[૮] તેનું વિવરણ નીચે મુજબ છે.

ક્રમાંક	:	૧૭૪૨	ગ્રંથ સંખ્યા	:	૩૯
વિષય	:	કાવ્ય	પરિમાણ	:	૨૭.૫ × ૧૧.૫૦
શીર્ષક	:	રસાષ્ટક	ભાષા	:	સંસ્કૃત
લેખક	:	મયૂરકવિ	લિપિ	:	દેવનાગરી
પૃષ્ઠ સંખ્યા	:	૨			

આ હસ્તપ્રતની પુષ્પિકામાં સમય, સ્થળ તથા લહિયા વિષે કોઈ પણ પ્રકારની માહિતી ઉપલબ્ધ થતી નથી. પરંતુ, તેમાં સ્પષ્ટપણે આ કૃતિના કર્તા તરીકે કવિ મયૂરનો ઉલ્લેખ છે. હસ્તપ્રતનું લખાણ સ્પષ્ટ અને સુવાચ્ય છે. કોઈ કોઈ સ્થળે લહિયાથી જે અક્ષરો લખવાના રહી ગયા છે તેની નોંધ હાંસિયામાં અથવા તો પંક્તિની ઉપર યોગ્ય

---

૬. गतप्राया रात्रिः कृशतनु शशी शीर्यत इव
प्रदीपोऽयं निद्रावशमुपगतो घूर्णत इव ।
प्रणामान्ते मानं त्यजसि न यथा त्वं क्रुधमहो
कुचप्रत्यासत्त्या हृदयमपि ते चण्डि कठिनम् ॥ त्रिपाठी रमाकान्त, श्रीमयूरभट्टविरचितं सूर्यशतकम्, पृ. १२

૭. એજન, પૃ. ૧૪

૮. *An Alphabetical List of Sanskrit Manuscripts in the Oriental Institute of Baroda*, Vol. II, Compiled by Raghavan Nambiar, Oriental Institute, Baroda, 1999, pp. 290-291.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

પ્રકારનાં ચિહ્નો દ્વારા દર્શાવેલ છે. હસ્તપ્રત માટે વપરાયેલ કાગળની સ્થિતિ ઘણી જ સારી છે. આ બધાં નિરીક્ષણોના આધારે હસ્તપ્રતના લખાણના સમયગાળાનું અનુમાન આશરે ૧૮/૧૯મી સદી કરી શકાય.

વડોદરાના પ્રાચ્યવિદ્યામંદિરની આ હસ્તપ્રત *New Catalogus Catalagorum* (NCC) Vol. XXIIIમાં રસાષ્ટકના શીર્ષક હેઠળ નોંધાયેલી છે. અને તેની સાથે, આ જ શીર્ષક હેઠળ કવિ મયૂરના નામે વડોદરા સ્થિત છાણી જૈન ભંડારમાં તેની વધુ એક પ્રતની પણ નોંધ છે. આ બે પ્રત સિવાય રસાષ્ટકની ત્રીજી પ્રત 'R. A. Sastri, 1, p. 60' ના નામ હેઠળ સંગ્રહિત છે.[૯] આ પ્રમાણે રસાષ્ટકની કુલ ત્રણ હસ્તપ્રત છે. વડોદરા સ્થિત છાણી જૈન ભંડારમાંથી આ પ્રત મેળવવા પ્રયત્નો કરેલ પરંતુ હસ્તપ્રત મેળવી શકાઈ નથી. આ સંસ્થાના પ્રતિનિધિના નિવેદન મુજબ આ પ્રત ભંડારમાંથી ખોવાઈ ગઈ છે.[૧૦] આ દુર્ભાગ્યની બાબત છે.

આ ઉપરાંત NCC ના બીજા ખંડો પણ રસાષ્ટકની જુદાં જુદાં શીર્ષક હેઠળ, કવિ મયૂરના જ નામે દેશના વિવિધ હસ્તપ્રત ભંડારોમાં ઉપલબ્ધિ દર્શાવે છે. જેની માહિતી નીચે મુજબ છે.

NCC, Vol. XVIII - મયૂરાષ્ટક, શૃઙ્ગારાષ્ટક અને રસાષ્ટક[૧૧]

NCC, Vol. XXXV - શૃઙ્ગારરસાષ્ટક અને મયૂરાષ્ટક[૧૨]

મયૂરકવિનું બીજું નામ મયૂરશર્મન પણ છે અને મયૂરાષ્ટક એ શૃઙ્ગારરસાષ્ટક તરીકે પણ ઓળખાય છે તેવી નોંધ NCC, Vol. XVIII અને NCC, Vol. XXXVમાં છે.[૧૩]

ઉપર જણાવેલ વિવરણ સ્પષ્ટપણે નિર્દેશ કરે છે કે મયૂરાષ્ટક, શૃઙ્ગારાષ્ટક, રસાષ્ટક અને શૃઙ્ગારરસાષ્ટક મયૂરકવિની જુદાં જુદાં શીર્ષકો હેઠળની એક જ રચના છે.

મયૂરાષ્ટકની હસ્તપ્રતનો પ્રથમ સંદર્ભ :

સંસ્કૃત સાહિત્યમાં મયૂરાષ્ટકની હસ્તપ્રતનો સૌપ્રથમ ઉલ્લેખ George Payn Quackenbos દ્વારા કરવામાં આવ્યો છે તેમ વિવિધ સંદર્ભો અને એકમાત્ર પૂર્ણપણે ઉપલબ્ધ પ્રકાશિત આવૃત્તિ (પ્ર. આ.)ના આધાર પરથી

---

૯. *NCC,* Vol. XXIII, Ed. Siniruddha Dash, University of Madras, Chennai, 2011, pp. 290-291.

૧૦. ટેલીફોનિક સંવાદ તા. ૬-૭-૨૦૧૯ અને છાણી-દેરાસરની મુલાકાત ૬-૭-૨૦૧૯, ૨૦-૭-૨૦૧૯

૧૧. *NCC,* Vol. XVIII, 2007, pp. 274

૧૨. એજન, Vol. XXXV, 2014, p. 101

૧૩. એજન, Vol. XVIII, 2007, p. 270, Vol. XXXV, 2014, p. 101

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

તારવી શકાય છે. તેમણે સન ૧૯૧૧માં કવિ મયૂર વિષે અને મયૂરાષ્ટકનો અનુવાદ (Journal of American Oriental Society, Vol. 31, pp. 343-354માં 'The Mayūrāṣṭaka, an unedited Sanskrit poem by Mayūra' શીર્ષક હેઠળ) કર્યો છે. અને સન ૧૯૧૭માં થોડા સુધારાઓ સાથે તે Columbia Universityથી ફરી પ્રકાશિત કરવામાં આવ્યું છે[૧૪]. આ પુસ્તકમાં તેઓ જણાવે છે કે તેમણે શારદા લિપિમાં ભૂર્જપત્ર પર લખાયેલી Tübingen Universityમાં સંગ્રહિત હસ્તપ્રતના આધારે મયૂરાષ્ટકનું લિપ્યંતર, તેનો અનુવાદ અને આવશ્યક ટિપ્પણીઓ લખી છે. આ હસ્તપ્રતના લખાણના સમયનું અનુમાન તેઓ લગભગ ૧૭મી સદીનું કરે છે. તેઓ વધુમાં જણાવે છે કે આ હસ્તપ્રત Prof. Garbeના સન ૧૮૯૯ના 'સંસ્કૃત હસ્તપ્રતનું સૂચિપત્ર', જે Tübingen Universityમાં છે તેમાં નોંધાયેલી છે.[૧૫] આ જ હસ્તપ્રતની નોંધ Theodor Aufrecht દ્વારા ૧૯૦૩માં પ્રકાશિત થયેલા Catalogus Catalogorm (CC)માં પણ છે.[૧૬]

આ લેખમાં પ્રાચ્યવિદ્યામંદિરની હસ્તપ્રતના આધારે रसाष्टकम् કાવ્યને સંપાદિત કરવાનો પ્રયત્ન કરવામાં આવ્યો છે. George Payn Quackenbosની ઉપર નિર્દિષ્ટ મયૂરાષ્ટકની પ્રથમ આવૃત્તિને જોતા સ્પષ્ટપણે જણાય છે કે બંને હસ્તપ્રતોના મૂળ સ્રોત ભિન્ન છે. તેથી માત્ર પ્રાચ્યવિદ્યામંદિરની એક જ હસ્તપ્રતના આધારે रसाष्टकम् નું સંપાદન કર્યું છે અને George Payn Quackenbosની સંપાદિત આવૃત્તિમાંથી અત્યંત આવશ્યક જણાતા પાઠભેદોને પાદટીપમાં નોંધ્યા છે. હસ્તપ્રતનાં લખાણમાં 'બ' ની જગ્યાએ 'વ' અને 'શ' ની જગ્યાએ 'સ' નો ઉપયોગ અને કોઈ કોઈ સ્થળે શબ્દોમાં દ્વિત્વ ભારતના પૂર્વ ભૌગોલિક પ્રદેશની લાક્ષણિકતાના દર્શન કરાવે છે.

રસાષ્ટક કાવ્ય વિષે :

રસાષ્ટકમ્ નું શીર્ષક ભ્રાંતિ ઉપજાવનારું છે કારણ કે તેના પરથી સંસ્કૃત સાહિત્યમાં વર્ણવેલા શૃઙ્ગાર ઇત્યાદિ આઠ રસોની પ્રતીતિ થઈ શકે છે. આ કાવ્યમાં નારીના સૌંદર્યનું શૃંગારિક વર્ણન છે. આ નારી તેના પ્રિયતમને મળીને પાછી ફરતી અભિસારિકા જણાય છે. અભિસારિકાની વ્યાખ્યા, તેના વિવિધ પ્રકાર અને પ્રેમીઓના મળવાનાં સ્થાનોની સાહિત્યદર્પણમાં (સા. દ.) વિશ્વનાથે વિસ્તારથી સોદાહરણ ચર્ચા કરી છે (સા. દ. ૩.૭૬-

---

૧૪. Quackenbos, G. P., એજન, p. 69

૧૫. એજન, પૃ. ૬૯

૧૬. *CC*, Part III, Theodor Aufrecht, Leipzig, Otto Harrassowitz, 1903, p. 93

૧૭. साहित्यदर्पणः, व्याख्याकार-सत्यव्रतसिंह, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, २०१५, पृ. १६९-१७१

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

૨.૮૧).[૧૭] આ વ્યાખ્યાઓના આધારે શ્લોક-૧ ને અહીં ઉદ્ધૃત કર્યો છે જે વિશ્વનાથે વર્ણવેલી ત્રણ પ્રકારની અભિસારિકાઓ કુલજા, વેશ્યા અને પ્રેષ્યામાંથી બીજા પ્રકારની એટલે કે વેશ્યા-અભિસારિકા[૧૮]નાં વર્ણન બંધબેસતાં છે.

का एषा नूतनाङ्गी प्रचलितनयना हंसलीला व्रजन्ती ।
द्वौ हस्तौ कुङ्कुमार्द्रौ कनकविरचितौ नूपुरौ शब्दयन्ती ॥

इत्थं मार्गे(र्गं) गतां(ता) सा व(ब)हुकुसुमलसा व(ब)द्धवेणी लुठन्ती ।
ताम्वूलम्वामहस्ते(ताम्बूलं वामहस्ते) प्रहसितवदना गुह्यशालां प्रविष्टा ॥१॥

આ શ્લોક પ્રમાણે કાવ્યની નાયિકા કોઈ સુંદરી છે કે જે નૂતનાંગી છે. તેની નજર આમતેમ ફરે છે. હંસની લીલા પ્રમાણે ચાલતી, તેના બંને હાથ કુમકુમથી રંગાયેલા છે અને તે સુવર્ણ ઝાંઝરોનો ઝંકાર કરે છે. માર્ગમાંથી પસાર થતા તેની ફૂલોથી સુશોભિત વેણી આમતેમ હલાવતી, પાન ડાબા હાથમાં રાખી, મુખ પર હાસ્ય સાથે તે એકાંત સ્થાને પ્રવેશી.

તદુપરાંત સાહિત્યદર્પણમાં દર્શાવેલા અભિસરણનાં આઠ સ્થાન[૧૯]ના નિદર્શન પ્રમાણે કાવ્યની નાયિકા એકાંત સ્થળ પસંદ કરે છે. કાવ્યના શ્લોક નં ૬ અને ૭માં આ જ પ્રકારનું વર્ણન જોવા મળે છે. સંપાદક રમાકાન્ત ત્રિપાઠી અને એસ. એન. દાસગુપ્તાએ પણ મયૂરાષ્ટકના સંદર્ભમાં આ જ મત પ્રદર્શિત કર્યો છે.[૨૦] કાવ્યની રચનામાં પ્રયોજાયેલા અત્યંત સરળ લઘુ સમાસ આ કાવ્યની વિશેષતા છે. કાવ્યના શ્લોક નં ૧, ૫ અને ૬ સ્રગ્ધરા વૃત્તમાં નિબદ્ધ છે. જ્યારે શ્લોક નં. ૨, ૩,

---

૧૮. विचित्रोज्ज्वलवेषा तु रणन्नूपुरकङ्कणा । प्रमोदस्मेरवदना स्याद्वेश्याऽभिसरेद्यदि ॥ सा द. ३.७८

૧૯. क्षेत्रं वाटी भग्नदेवालयो दूतीगृहं वनम् । मालापञ्चः श्मशानं च नद्यादीनां तटी तथा ॥ सा द. ३.८०
एवं कृताभिसाराणां पुंश्चलीनां विनोदने । स्थानान्यष्टौ तथा ध्वान्तच्छन्ने कुत्रचिदाश्रये ॥ सा द. ३.८१

૨૦. त्रिपाठी रमाकान्त, श्रीमयूरभट्टविरचितं सूर्यशतकम्, पृ. १४-१५
Dasgupta, S. N., એજન, pp. 188-189.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

૪, ૭ અને ૮ શાર્દૂલવિક્રીડિતમાં છે.

रसाष्टकम्

श्रीगणेशाय नमः ॥[१]

का[२] एषा[३] नूतनाङ्गी[४] प्रचलितनयना हंसलीला व्रजन्ती
द्वौ हस्तौ कुङ्कुमार्द्रौ कनकविरचि[५]तौ नूपुरौ शब्दयन्ती ।
[६]इत्थं मार्गे(र्गं) गतां(ता) सा बहुकुसुमलसा[७] बद्धवेणी[८] लुठन्ती[९]
ताम्बूलं वामहस्ते प्रहसितवदना[१०] गुह्यशालां प्रविष्टा ॥१॥

का एषा स्तनपीनभारकठिना मध्ये दरिद्रावती[११] ।
विभ्रान्ता हरिणी विलोलनयना सत्यक्तयूथावली (संत्रस्तयूथोद्गता) ॥
मतश्चैक(अन्तःस्वेद)[१२] गजेन्द्रगण्डगलिता जङ्गम्यते[१३] लीलया[१४] ।
दृष्ट्वा रूपमिदं जनङ्ग(प्रियाङ्ग)गहनं वृद्धोऽपि कामयते(कामायते) ॥२॥

[१५]का एषा ललिता सकान्तितिलका बन्धूकपुष्पाधरा ।
[१६]गात्रं चम्पकपुष्पवर्णसदृशं यस्यास्ति(?) पीनस्तनी (पीनस्तनौ) ॥
वक्त्रं वामृतपूरितं[१७] शशिमुखी[१८] क्षामोदरी सुन्दरि(री)
[१९]त्रैलोक्यस्त्रयकान्तियूथजघिनी(?) रूपं परं बिभ्रती ॥३॥

का एषा (परिपूर्ण)चन्द्रवदना [२०]गौरी मृगाक्षी [२१]शिवालीला(शिवा) ।

---

१. प्र. આ. ॐ नमः श्रीहरिहराभ्याम् ॥ २. प्र. આ શ્લોક નં. ૧, ૨, ૩, ૪, ૫, ૭ અને ૮ एषा ३. का ४. प्र. આ. प्रस्तुतांगी ५. प्र. આ. 'कनकविरचित् ....' त्रुटित. ६. प्र. આ. '... [गां] गेगता' त्रुटित. ७. प्र. આ. बहुकुसुमयुता ८. प्र. આ. बद्धवीणा ९. प्र. આ. हसन्ती १०. प्र. આ. मदनवशगता. ११. प्र. આ.માં સંપાદક જણાવે છે કે આ શબ્દ શબ્દકોશોમાં મળ્યો નથી. १२. प्र. આ. अम्तःस्वेद १३. प्र. આ. सलीलया १४. प्र. આ. गच्छति १५. प्र. આ. एषा का जघनस्थली सुललिता प्रोन्मत्तकामाधिका १६. प्र. આ. भूभङ्गं कुटिलं त्वनङ्गधनुषः प्र. આ. प्रख्यं प्रभाचन्द्रवत् १७. प्र. આ. राकाचन्द्रकपोलपङ्कजमुखी १८. प्र. આ. દર્શાવતું નથી. १९. प्र. આ. वीणीदण्डमिदं विभाति तुलितं वेलम्भुजं गच्छति २०. प्र. આ. गौरीमृगा २१. प्र. આ. क्षोभिनी २२. लीलामत्त-गजेन्द्रहंसगमना......त्रुटित.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

[૨૨](लीला)मत्तगजेन्द्रहंसगमना स्वर्गाङ्गना भूतले ॥

[૨૩]रूपैरङ्गसुगन्धशीतलमुखी वाचामृतभाषिणी
श(सा) श्लाघ्या पुर(रु)षस्य[૨૪] [૨૫]जीवितमिदं यस्या(स्य) प्रिया [૨૬]तादृशी ॥४॥

का एषा भुक्तयुक्ता[૨૭] प्रहसितवदना[૨૮] खे(स्वे)दलग्नाङ्गवस्त्रा
प्रत्यूषे याति बाला [૨૯]चलितमृगदृशी सर्वतः प्रेक्षयन्ती[૩૦] ॥
केनेदम्वक्त्रपद्मं (केनेदं वक्त्रपद्मं) स्म(स्फु)रदधरपुटं[૩૧] षट्पदेनैव पीतं
स्वर्गाः (र्गः) केनाद्य भुक्तो हरिहरनमितः(तो)[૩૨] मन्मथः कस्य तुष्टः ॥५॥

वामेनावेष्टयन्ती प्रचलितकुसुमा(मं)[૩૩] केरि(श)भारं क्रमेण(करेण)
प्रभ्रष्टश्(ष्टं) चोत्तरीयं रतिगृहशिथिली(लीं)[૩૪] मेखला(लां) दक्षिणेन ॥
ताम्वूलं चर्व्वयन्ती[૩૫] प्रहसिता(त)वदना मुक्तकेशा[૩૬]नुरागा ।
निष्क्रान्ता गुह्यदेशान्मदनवशगता मारुतं प्रार्थयन्ती ॥६॥

का एषा नवयौवना शशिमुखी [૩૭]कान्ता पथे निर्गता[૩૮] (पथान्निर्गता)
निद्राव्याकुल(लि)ता विघूर्णनयना संपक्वबिम्बाधरा ॥
केशैर्व्याकुलिता नखै[૩૯]र्व्विकचिता दन्त(न्तै)श्च खण्डीकृता

---

૨૩. प्र. આ. निःश्वासाधरगंधशीतलमुखी वाचा मृदूल्लासिनी ૨૪. प्र. આ. पुरुषस्स ૨૫. प्र. આ. जीवति वरो ૨૬. प्र. આ. हीदृशी ૨૭. प्र. આ. भुक्तमुक्ता ૨૮. प्र. આ. प्रचलितनयना ૨૯. प्र. આ. मृग इव चकिता ૩૦. प्र. આ. शंकयन्ती ૩૧. प्र. આ. स्फुरदधररसं ૩૨. प्र. આ. हरनयनहतो ૩૩. प्र. આ. प्रविरलकुसुमं ૩૪. प्र. આ. रतिपतितगुणां ૩૫. प्र. આ. ताम्बूलं चोदवहन्ती ૩૬. प्र. આ. मुक्तकेशा नरागा ૩૭. प्र. આ. कान्तापथी ૩૮. प्र. આ. गच्छति ૩૯. प्र. આ. विदलिता ૪૦. प्र. આ. रमिता

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

केनेदं रतिराक्षसेन रचिता४० शार्दूलविक्रीडिता ॥७॥

४१का एषा ४२कदलीसमानजघना प्रोन्मत्तकामाधिका
भूभङ्गैर्द्धनुषाररङ्गकुटिला(?) पुष्पैस्सका(पुष्पैश्च सा) मोदिनी ॥
श्रोणीकाञ्चनमेखलाकटितटे(?) मध्ये सपुष्टिग्रहाः(?)
तां दृष्ट्वा परिपूर्णचन्द्रवदना(नां) तुष्यंति के(चे)न्द्रादयः ॥८॥

॥ ४३इति श्रीमयूरकविरचितं रसाष्टकं समाप्तम् ॥

નિરીક્ષણો :

रसाष्टकम् ની પ્રતનો અભ્યાસ કરતાં જણાય છે કે,

1) NCCના વિવિધ ખંડો અને CC માં સંકલિત કરેલી માહિતીના આધારે મયૂરાષ્ટક, શૃઙ્ગારાષ્ટક, રસાષ્ટક અને શૃઙ્ગારરસાષ્ટક મયૂરકવિની જુદાં જુદાં શીર્ષકો હેઠળ એક જ રચના છે તેવું જણાય છે. આ હસ્તપ્રતોનું વિવિધ પ્રદેશોમાં સંક્રમણ થવાને લીધે તેનાં શીર્ષકોમાં અને પાઠમાં લહિયાઓ દ્વારા પરિવર્તનની શક્યતાઓને નકારી શકાય નહીં.

2) Theodor Aufrecht દ્વારા 1903માં પ્રકાશિત થયેલા CCમાં, મયૂરાષ્ટકના શીર્ષક હેઠળ, મયૂરના નામે Tübingen University માં જે પ્રત સંગ્રહિત છે તેની જ નોંધ છે નહિ કે રસાષ્ટકમ્ની. પરંતુ તે પછી પ્રકાશિત

---

૪૧. પ્ર. આ.માં આ શ્લોકની પંક્તિઓ ભિન્ન છે અને તેનો પાઠ આ પ્રમાણે છે
एषा का रतिहावभावविलसच्चन्द्राननं बिभ्रती
गात्रं चम्पकदामगौरसदृशं पीनस्तनालंबिता
पदभ्यां संचरती प्रगल्भाहरिणी संलीलया स्वेछया
किं चैषा गगनांगना भुवितले संपादिता ब्रह्मणा

૪૨. હાલની હસ્તપ્રતની શ્લોક ૮(અ) નો પાઠ, પ્ર. આ.ના શ્લોક નં. ૭ (અ)ની પંક્તિ एषा का जघनस्थली सुललिता प्रोन्मत्तकामाधिका સાથે આંશિકતયા સાદશ્ય ધરાવે છે. જેમાં कदलीसमानजघना ના સ્થાને जघनस्थली सुललिता એવા બે સામાસિક શબ્દો યોજવામાં આવેલ છે.

૪૩. પ્ર. આ. इति श्रीमयूराष्टकं समाप्तम् ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

થયેલા NCCના વિવિધ ખંડો, મયૂરાષ્ટક ઉપરાંત વિવિધ નામોનો નિર્દેશ કરે છે. તે એવું માનવા માટે પ્રેરિત કરે છે કે આ બધાં પરિવર્તનો પરવર્તી હોઈ શકે છે.

3) રસાષ્ટકમ્ ની ફક્ત ત્રણ જ પ્રત નોંધાયેલી છે અને તેમાંથી બે પ્રત વડોદરામાં સંગ્રહાયેલી જોવા મળે છે. ત્રીજી પ્રત જે 'R. A. Sastri, 1, p. 60' ના સંગ્રહમાં નોંધાયેલી છે તે સ્થળનો નિર્દેશ નથી કરતી.

4) અભ્યાસ હેઠળની આ પ્રતમાં પાદટીપોમાં નોંધવામાં આવેલ અસંખ્ય પાઠભેદો, પાઠમાં ખામીઓ, નવા શબ્દોનાં ઉમેરા, ઘણી જગ્યાએ પ્ર. આ. ની પંક્તિની જગ્યાએ નવી પંક્તિની રચના, શબ્દોના સ્થાનની અદલાબદલી (एषा काના સ્થાન પર का एषा), અસંખ્ય વ્યાકરણદોષો, સમાસરચનામાં ખામી ઇત્યાદિ પરથી એવું તારવી શકાય કે આ પ્રત પ્ર. આ. થી ઘણી જ દૂર છે. ઉપરાંત, હસ્તપ્રત અને પ્ર.આ.ના શ્લોકક્રમાંકોમાં પણ પરિવર્તન જણાયાં છે. આ તારણો ઉપરથી એવું અનુમાન કરી શકાય કે આ કૃતિનો કવિ મયૂર અતિપ્રસિદ્ધ કવિ મયૂર નહીં પણ અન્ય જ કોઈ હોઈ શકે. તેણે મૂળ કવિની કૃતિનું અનુસરણ કરીને કદાચ પોતાની એક સ્વતંત્ર રચના કરી હશે ! કવિ, લગભગ તેની કારકિર્દીના પગથિયા પર હોઈ શકે. તદુપરાંત, આ હસ્તપ્રત નિ:સંદેહ એક અયોગ્ય લહિયાના હાથે લખાઈ છે. આ નિરીક્ષણો અને પ્રસ્તુત કરેલ અનુમાનના સમર્થન રૂપે, નીચે દર્શાવેલ કોષ્ટકમાં પરિવર્તિત શ્લોક ક્રમાંકની સાથે બંને કૃતિની ફક્ત પ્રથમ પંક્તિ દર્શાવવામાં આવી છે.

શ્લોક નં.	હસ્તપ્રતમાં ઉદ્ધૃત શ્લોકની પંક્તિ	શ્લોક નં.	પ્ર. આ.માં ઉદ્ધૃત શ્લોકની પંક્તિ
૧.	का एषा नूतनाङ्गी प्रचलितनयना हंसलीला व्रजन्ती	૧.	एषा का प्रस्तुताङ्गी प्रचलितनयना हंसलीला व्रजन्ती
૨.	का एषा स्तनपीनभारकठिना मध्ये दरिद्रावती	૨.	एषा का स्तनपीनभारकठिना मध्ये दरिद्रावती
૩.	का एषा ललिता सकान्तितिलका व(ब)न्धूकपुष्पाधरा	૩.	- -
૪.	का एषा (परिपूर्ण)चन्द्रवदना गौरी मृगाक्षी शिवालीला(शिवा)	૪.	एषा का परिपूर्णचन्द्रवदना गौरीमृगा क्षोभिनी
૫.	का एषा भुक्तयुक्ता प्रहसितवदना स्वे(स्वे)दलग्राङ्गवस्त्रा	૫.	एषा का भुक्तयुक्ता स्वेदलग्नांगवस्त्रा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

શ્લોક નં.	હસ્તપ્રતમાં ઉદ્ધૃત શ્લોકની પંક્તિ	શ્લોક નં.	પ્ર. આ.માં ઉદ્ધૃત શ્લોકની પંક્તિ
6.	वामेनावेष्टयन्ती प्रचलितकुसुमा(मं) केरि(श)भारं क्रमेण(करेण)	6.	वामेनावेष्टयन्ती प्रविरलकुसुमं केशभारं करेण
7.	का एषा नवयौवना शशिमुखी कान्ता पथे निर्गता (पथान्निर्गता)	7.	एषा का नवयौवना शशिमुखी कान्तापथी गच्छति
8.	का एषा कदलीसमानजघना प्रोन्मत्तकामाधिका	-	-

નિષ્કર્ષ :

સન ૧૯૧૭માં પ્રકાશિત મયૂરાષ્ટકની આવૃત્તિ પછી તેની બીજી કોઈ પણ પ્રકાશિત આવૃત્તિ ધ્યાનમાં આવી નથી સિવાય કે કોઇક પુસ્તકોમાં તેનાં છૂટાછવાયા સંદર્ભો. તેથી, રસાષ્ટકના હાલના સંશોધનને ધ્યાનમાં લેતા, વિવિધ શીર્ષકો ધરાવતી, અનેક હસ્તપ્રત ભંડારોમાં સંરક્ષિત આ લઘુ હસ્તપ્રતની સમીક્ષિત આવૃત્તિની જરૂર જણાય છે. જેનાથી હસ્તલેખનના ક્ષેત્રમાં વૈજ્ઞાનિક પરિપ્રેક્ષ્યમાં તેનો યથાર્થ અભ્યાસ થઈ શકે.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ગુજરાતનાં પ્રાચ્યવિદ્યા સંશોધનમંદિરો– શિખરથી અસ્તાચલ ભણી

મણિભાઈ પ્રજાપતિ*

આપણાં પ્રાચ્યવિદ્યા સંશોધનમંદિરો તો ભારતીયવિદ્યા - Indologyનાં અધ્યયન - અધ્યાપન - સંશોધન - પ્રકાશનનાં ઊર્જાશીલ કેન્દ્રો છે. આપણાં ફેફસાં પણ છે, આપણું મસ્તિક પણ છે, અને આપણું હૃદય પણ છે. એક જમાનો હતો કે સમગ્ર દેશમાં ગુજરાત સહિત દેશનાં વિવિધ રાજ્યોમાં પ્રાચ્યવિદ્યા મંદિરો - Oriental Research Institutes / Manuscript Librariesની સ્થાપના અને સંવર્ધનમાં રાષ્ટ્રનું ગૌરવ ગણીને તત્કાલીન દષ્ટિપૂત શાસકો અને પ્રજ્ઞાવાન શ્રેષ્ઠીઓ / જૈનમુનિ ભગવંતો દ્વારા ભારે મોટો રસ લેવામાં આવતો હતો. પરિણામસ્વરૂપે, આજે સમગ્ર દેશમાં અર્ધશતાધિક ક્રિયાશીલ - Vibrant સંસ્થાઓ અસ્તિત્વમાં છે, જેમકે એશિયાટિક સોસાયટી (કોલકતા), ભાંડારકર ઓરિએન્ટલ રિસર્ચ ઇન્સ્ટિટ્યૂટ (પૂના), અડ્યાર લાઈબ્રેરી એન્ડ રિસર્ચ સેન્ટર (અડ્યાર, ચેન્નઈ), ઓરિએન્ટલ રિસર્ચ ઇન્સ્ટિટ્યૂટ (મૈસૂર), ઓરિએન્ટલ રિસર્ચ ઇન્સ્ટિટ્યૂટ એન્ડ મેન્યુસ્ક્રિપ્ટસ લાઈબ્રેરી (ત્રિવેન્દ્રમ), વિશ્વેશ્વરાનંદ વૈદિક રિસર્ચ ઇન્સ્ટિટ્યૂટ (હોશિયારપુર, પંજાબ), ખુદાબક્ષ ઓરિએન્ટલ પબ્લિક લાઈબ્રેરી એન્ડ રિસર્ચ ઇન્સ્ટિટ્યૂટ, પટણા વગેરે. આ બધી સંસ્થાઓ આજે પણ પ્રાચ્યવિદ્યા ક્ષેત્રે રાષ્ટ્રનાં ગૌરવશિખરો બની રહી ભારતીયવિદ્યાના દેશ-વિદેશના જિજ્ઞાસુઓને પોતાની સેવાઓ આપી રહી છે.

આ સાથે જ ગર્વપૂર્વક નોંધવું રહ્યું કે ગુજરાત પણ પ્રાચ્યવિદ્યાનાં સંસ્થાનો ક્ષેત્રે એક સમયે અગ્રણી રાજ્ય રહ્યું હતું. આ અંતર્ગત ૧. પ્રાચ્યવિદ્યા મંદિર = ઓરિએન્ટલ ઇન્સ્ટિટ્યૂટ, વડોદરા (૧૯૨૭) અને ૨. લાલભાઈ દલપતભાઈ ભારતીય સંસ્કૃતિ વિદ્યામંદિર = એલ. ડી. ઇન્સ્ટિટ્યૂટ ઓફ ઇન્ડોલોજી, અમદાવાદ (૧૯૫૬) જેવી વિશ્વવિખ્યાત સંસ્થાઓએ પોતાની બહુઆયામી મૂઠી ઊંચેરી વિદ્યાકીય પ્રવૃત્તિઓ થકી પોતાની આગવી ઓળખ પ્રસ્થાપિત કરી છે. આ બંને અનુદાનિત સંસ્થાઓ ઉપરાંત ૩. ગુજરાત વિદ્યાસભા હવે, ભો. જે. અધ્યયન - સંશોધન વિદ્યાભવન (અમદાવાદ), ૪. દ્વારકાધીશ સંસ્કૃત એકેડેમી એન્ડ ઇન્ડોલોજિકલ રિસર્ચ ઇન્સ્ટિટ્યૂટ (દ્વારકા) અને ૫. મહર્ષિ વેદ-વિજ્ઞાન અકાદેમી (અમદાવાદ - આ અકાદેમી સંભવતઃ તાજેતરમાં બંધ કરવામાં આવી છે) પણ અનુદાનિત સંસ્થાઓ તરીકે કાર્યરત છે. આ સાથે ઉલ્લેખ કરવો રહ્યો કે આચાર્યશ્રી પદ્મસાગરસૂરિ મહારાજ

'સ્વાધ્યાય' - પુ. ૫૬, વર્ષ ૨૦૧૯, પૃ. ૬૭-૭૩. ISSN 2250-0391

* કડી સર્વ વિશ્વવિદ્યાલય, એઈ.ડી.આર.પી. એન્જિનિયરિંગ કોલેજ કેમ્પસ, સેક્ટર-૧૫, ગાંધીનગર-૩૮૨ ૦૧૫,
M: 9601273836

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

સાહેબ અને આચાર્યશ્રી વિજય શીલચંદ્રસૂરિજી મહારાજ સાહેબની પ્રેરણાથી અનુક્રમે 'આચાર્ય કૈલાસસાગરસૂરિ જ્ઞાનમંદિર' (કોબા-ગાંધીનગર) અને 'આચાર્ય વિજય નેમિસાગરસૂરિ ગ્રંથાલય' (હઠીસિંહ જિનાલય, અમદાવાદ) રાજ્યની સહાય વગર સમૃદ્ધ સંગ્રહ થકી ઉદાહરણસ્વરૂપ સેવાઓ પૂરી પાડી રહ્યાં છે, જે માત્ર ગુજરાતનું જ નહી પણ રાષ્ટ્રનું ગૌરવ છે. આ બધી સંસ્થાઓનું રાષ્ટ્રના - વિદ્યાજગતના વિકાસમાં મહિમાવંતુ પ્રદાન રહ્યું છે. આગળ ઉપર ઉલ્લેખિત ગુજરાતની પ્રથમ ત્રણ સંસ્થાઓ સંસ્કૃત, પ્રાકૃત, ગુજરાતી વગેરે ભાષાઓની આશરે સવા લાખથી અધિક અલભ્ય અને બહુમૂલ્ય હસ્તપ્રતો, જૈનચિત્રકળાના ઉત્તમોત્તમ નમૂનાઓ પૂરા પાડતી સચિત્ર હસ્તપ્રતો ઉપરાંત મોટી સંખ્યામાં અલભ્ય મુદ્રિત પુસ્તકો, દસ્તાવેજો, શિલ્પકૃતિઓ વગેરેનો સમૃદ્ધ ખજાનો ધરાવે છે. લા. દ. ભારતીય સંસ્કૃતિ વિદ્યામંદિરનો ગ્રંથસંગ્રહ તો રાષ્ટ્રીય જૈનસાહિત્યના ગ્રંથાલયનું બિરૂદ પામે તેવો સમૃદ્ધ છે, જ્યારે ભો. જે.ના ગ્રંથાલયમાં ગુજરાતી ભાષા-સાહિત્યનાં અલભ્ય એવાં પુસ્તકો અને પત્ર-પત્રિકા ઉપરાંત ભારતીયવિદ્યાનાં અણમોલ પુસ્તકો સંગૃહીત છે.

પ્રકાશન પ્રવૃત્તિ : આ સંસ્થાઓ દ્વારા પ્રકાશિત કરવામાં આવેલ વિદ્વત્પ્રકાશનોએ તો વિશ્વભરના વિદ્વાનોનું ધ્યાન ખેંચ્યું છે, જેના પરિણામે વિશ્વભરનાં ગ્રંથાલયોમાં સ્થાન પણ પામ્યાં છે. 'પ્રાચ્યવિદ્યા મંદિર' દ્વારા 'Gaekwad's Oriental Series' હેઠળ આજદિન સુધી ૧૯૦+ તથા અન્ય ગ્રંથમાળાઓ હેઠળ એક હજારથી વધુ પુસ્તકો પ્રકાશિત કરવામાં આવ્યાં છે. આ ગ્રંથમાળાનાં બહુમૂલ્ય પ્રકાશનોને ધ્યાને લઈ Prof. Sylvain Levi એ ''Standing at the head of the many collections now published in India'', The Asiatic Review, London એ ''It is one of the best series issued in the East'' વગેરએ ભૂરિ ભૂરિ પ્રશંસા કરીને તેની નોંધ લીધી છે. આ અંતર્ગત 'રામાયણ'ની સમીક્ષિત આવૃત્તિ ઉપરાંત, શાંતરક્ષિત કૃત 'તત્ત્વસંગ્રહ : કમલશીલની ટીકા પંજિકા સહિત', 'સાધનમાલા', 'સાબરભાષ્ય', 'સમરાંગણસૂત્રધાર', 'અપરાજિતપૃચ્છા', 'નાટ્યશાસ્ત્ર : અભિનવ ગુપ્તની ટીકા સહિત', 'સંગીતચૂડામણિ', 'બૃહસ્પતિસ્મૃતિ', 'કૃત્યકલ્પતરુ', વિવિધ હસ્તપ્રત ભંડારોનાં સૂચિપત્રો વગેરે સમાવિષ્ટ છે. આ પૈકી ઘણી કૃતિઓ સૌ પ્રથમ વખત પ્રકાશિત છે. આવાં જ વિદ્વત્ત પુસ્તકો L . D. Series હેઠળ ૧૫૧+ તથા અન્ય ગ્રંથમાળાઓ હેઠળ કેટલાંક પ્રકાશિત છે. જેમાં 'તત્ત્વાર્થસૂત્ર ઉપર પંડિત સુખલાલજીની ટીકાનો અંગ્રેજી અનુવાદ', મુનિ પુણ્યવિજયજી સંપાદિત પુસ્તકો અને હસ્તપ્રત સૂચિપત્રો, ઉમાકાંત શાહ સંપાદિત 'Treasures of jain Bhandaras', 'નગીનભાઈ શાહ કૃત 'Akalank's Criticism of Dharmakirtis Philosophy : A Study' તથા સંપાદિત ગ્રંથ 'ન્યાયમંજરી', તપસ્વી નાન્દી કૃત 'સહૃદયાલોક', 'જૈન રામાયણ', વિખ્યાત કલાવિવેચક રતન પરિમૂ કૃત ગ્રંથો, 'Treasures from the Lalbhai Dalpatbhai Museum' વગેરે સમાવિષ્ટ છે. પૂર્વ રાષ્ટ્રપતિ ડૉ. એ. પી. જે. અબ્દુલ કલામે આ સંસ્થાની મુલાકાત લઈ રાજીપો વ્યક્ત કરતાં નોંધેલ શબ્દો : 'Delighted to visit L. D. Institute of Indology and Museum, inspires to see rich jaina history' ધ્યાનાર્હ બની રહે છે. ભો. જે. દ્વારા

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'શ્રીમદ ભાગવતપુરાણ'ની ચિકિત્સક આવૃત્તિ, એસ્તર સોલોમન કૃત 'ઇન્ડિઅન ડાયલેક્ટિક્સ' (૨ ભાગ), 'ગુજરાતનો રાજકીય અને સાંસ્કૃતિક ઇતિહાસ' (૯ ભાગ), હસ્તપ્રતોનાં વિવરણાત્મક સૂચિપત્રો વગેરે શતાધિક પુસ્તકો પ્રકાશિત છે. ચુનિલાલ ગાંધી વિદ્યાભવન, સૂરત દ્વારા પણ 'નવલ ગ્રંથાવલિ' સહિત ૩૮ પુસ્તકોનું પ્રકાશન કરવામાં આવ્યું છે. આ ઉપરાંત આ બધી સંસ્થાઓ દ્વારા વિશુદ્ધ સંશોધનાત્મક અભિગમ સાથે અંગ્રેજી અને ગુજરાતી ભાષામાં નિયમિત રીતે પ્રકાશિત કરવામાં આવતાં જર્નલ્સ જેમકે 'Journal of Oriental Institute', 'સ્વાધ્યાય', 'સંબોધિ', 'સામીપ્ય' અને શારદાપીઠપ્રદીપ' પણ ભારતીયવિદ્યા જગતમાં ખ્યાતિપ્રાપ્ત રહ્યાં છે.

આ બધી સંસ્થાઓના ઘડતર અને વિકાસમાં તેના આર્ષદૃષ્ટા નિયામકોનો અસાધારણ ફાળો રહ્યો છે. જેમાં ડૉ. વિનયતોષ ભટ્ટાચાર્ય, ડૉ. ભોગીલાલ સાંડેસરા, ડૉ. અરુણોદય જાની, ડૉ. આર. ટી. વ્યાસ, ડૉ. રાજેન્દ્ર નાણાવટી (પ્રાચ્યવિદ્યા મંદિર); શ્રી દલસુખ માલવણિયા અને શ્રી નગીનભાઈ શાહ (એલ. ડી.); શ્રી રસિકલાલ પરીખ, ડૉ. હરિપ્રસાદ શાસ્ત્રી, ડૉ. ભારતી શેલત (ભો. જે.); ડૉ. પ્રતાપરાય મોદી, ડૉ. જેટલી, ડૉ. રમેશ બેટાઈ, ડૉ. મણિભાઈ આઈ. પ્રજાપતિ અને ડૉ. જયપ્રકાશ દ્વિવેદી (શ્રી દ્વારકાધીશ - આ એકેડેમીના બધા જ નિયામકો રાષ્ટ્રપતિ દ્વારા પુરસ્કૃત વિદ્વાનો છે) વગેરે વિશેષ ઉલ્લેખનીય છે. આ બધી સંસ્થાઓના સ્થાપનાકાળથી પ્રાયઃ બે દશક પૂર્વે સુધી નિયામકો ઉપરાંત રીડર, વ્યાખ્યાતા, સંશોધન અધિકારી, ગ્રંથપાલ, સૂચિકાર વગેરે અને શ્રેણીબંધ સહાયક કર્મચારીઓની નિયમિત રીતે નિયુક્તિ કરવામાં આવતી હતી. પરિણામસ્વરૂપે આ બધી સંસ્થાઓએ પોતાનાં નિર્ધારિત લક્ષ્યોને વળોટી જઈને સવાઈ કાર્ય સિદ્ધિ હાંસલ કરતાં પોતાના અસ્તિત્વની આગવી ઓળખ રાષ્ટ્રીય અને વૈશ્વિકસ્તરે ઊભી કરી હતી. દુઃખ તો એ છે કે આજે, આ બધી સંસ્થાઓમાં ક્યાંક પટાવાળા, કારકૂન, ગ્રંથપાલ, સંશોધન અધિકારી જેવી એકલ-દોકલ જગ્યાઓ ઉપર કાયમી કર્મચારીઓ કાર્યરત છે. પરિણામે, અર્જિત કરેલ અધીતનાં ઓજસ દિનપ્રતિદિન ઓસરતાં જાય છે. વધુમાં, આઘાત લાગે એવી બાબત એ કે થોડાક માસ પૂર્વે 'ગુજરાત સમાચાર'ની વડોદરા આવૃત્તિમાં એવા મતલબના સમાચાર પ્રગટ થયા હતા કે પ્રાચ્યવિદ્યા મંદિરને સરકારે સંભવતઃ સંસ્કૃત મહાવિદ્યાલય સાથે મર્જ કરી દઈ તેમાં ક્યુરેટર મૂકવાનું સૂચન એમ. એસ. યુનિવર્સિટીને કર્યું છે. જો આ સૂચનનો અમલ થશે તો સંશોધન પ્રવૃત્તિ બંધ થઈ જશે, અને ક્રમશઃ આ વિશ્વવિખ્યાત સંસ્થાને નામશેષ થઈ જતાં ઝાઝી વાર લાગશે નહીં. અહીં યુનિવર્સિટીની સ્વાયત્તતા પણ ક્યાં રહી ? 'સબકો સન્મતિ દે ભગવાન'.

આ બધી સંસ્થાઓ પૈકી 'લાલભાઈ દલપતભાઈ ભારતીય સંસ્કૃતિ વિદ્યામંદિર'નું વિશાળ પરિસર કેટલું ભવ્ય અને રળિયામણું દીસી રહ્યું છે. શતાધિક મયૂરોનાં નૃત્યગાન અને પક્ષીઓના કલરવથી સતત ગુંજતું રહેતું,

---

* આ લખનાર દ્વારા દશક પૂર્વે ભારતનાં પ્રાયઃ મોટા ભાગનાં પ્રાચ્યવિદ્યા સંશોધનમંદિરોની રૂબરૂ મુલાકાત લેતાં 'એલ.ડી.'નું પરિસર બહુવિધ રીતે શ્રેષ્ઠ જોવા મળ્યું હતું અને આજે પણ શ્રેષ્ઠ જ છે.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

વિવિધ જાતનાં વૃક્ષો અને ફૂલછોડ – પુષ્પોથી સદાય આચ્છાદિત અને હર્યું ભર્યું રહેતું નંદનવન સમ, તેમજ શિલ્પ-સ્થાપત્યની દષ્ટિએ બેનમૂન એવા ભવનનો આ ત્રિવેણી સંગમ આ જ્ઞાનમંદિરને ગુજરાતના જ નહીં પણ દેશના ગૌરવશિખરે પ્રસ્થાપિત કરે છે. આ સંસ્થાના પ્રેરણાદાતા આગમપ્રભાકર મુનિ પુણ્યવિજયજી, સંસ્થાપક આર્ષદષ્ટા શ્રેષ્ઠી શ્રી કસ્તૂરભાઈ અને સંવર્ધક શ્રેષ્ઠી શ્રી શ્રેણિકભાઈનો આત્મા એક સમયે વિદ્યાકીય પ્રવૃત્તિઓથી સતત ધમધમતી આ સંસ્થાને આજે વિલાતી જતી જોઈને શું વિચારતો હશે ?

દુઃખ તો એ છે કે છેલ્લાં કેટલાંક વર્ષોથી માધ્યમિક શાળાઓમાં ત્રિભાષા ફોર્મ્યુલા અમલીકૃત કરવાથી શાળાઓમાં સંસ્કૃત ભણવાવાળા વિદ્યાર્થીઓની સંખ્યા દિનપ્રતિદિન ઘટતી જાય છે. આ સ્થિતિના કારણે કોલેજો અને યુનિવર્સિટીઓનાં અનુસ્નાતક ભવનોમાં પણ હવે જૂજ વિદ્યાર્થીઓ સંસ્કૃત પસંદ કરે છે. સંસ્કૃતના વિદ્યાર્થીઓના અભાવે સંસ્કૃત શિક્ષકો/અધ્યાપકોની ભરતીમાં પણ ઓટ આવતી જાય છે અર્થાત્ વ્યવસાયિક તકો પણ ઘટતી ગઈ. હવે, સંસ્કૃત ભણનાર વર્ગ નથી રહ્યો – કોલેજો/યુનિવર્સિટીઓમાં સંસ્કૃતના વિદ્યાર્થીઓની નહિવત સંખ્યા રહે છે ત્યારે પ્રાચ્યવિદ્યા મંદિરોનો નિભાવ શા માટે કરવો ? આ સંસ્થાઓ કેટલી પ્રસ્તુત ? તેની શી ઉપયોગિતા ? આવા મનઘડંત ખ્યાલો સાથે પ્રાચ્યવિદ્યા મંદિરોને આવશ્યક કર્મચારીઓની ભરતીની અનુમતિ પ્રદાન ન કરવી, સંશોધન/પ્રકાશન માટે પર્યાપ્ત અનુદાન ન આપવું કે અન્ય જરૂરી સહાય ન કરવાનું વલણ કેટલા અંશે ઔચિત્યપૂર્ણ ગણાય ? ધ્યાને રહે કે આ વિદ્વત સંસ્થાઓ માત્ર સંસ્કૃત ભાષા-સાહિત્ય તથા ધર્મ-દર્શનના અધ્યયન – અધ્યાપન – સંશોધન માટેની નથી જ. આ વિદ્વત્સંસ્થાઓ દ્વારા હસ્તપ્રતવિદ્યા (manuscriptology), લિપિવિદ્યા (palaeography), અભિલેખવિદ્યા (epigraphy), સિક્કાશાસ્ત્ર (numismatics), પ્રાચીન ભારતીય વિજ્ઞાન અને ટેકનોલોજી વગેરે જેવાં વિષયક્ષેત્રોમાં નોંધપાત્ર પ્રદાન કરવામાં આવ્યું છે. ભો. જે. વિદ્યાભવન દ્વારા અભિલેખો, સિક્કાઓ અને અન્ય ઐતિહાસિક સંસાધનોના આધારે ગુજરાતના રાજકીય અને સાંસ્કૃતિક ઇતિહાસને ઉજાગર કરવામાં ઘણું મૂલ્યવાન પ્રદાન કરવામાં આવ્યું છે. સંસ્કૃત તો એક માધ્યમ છે. આપણી પ્રાચીન સાંસ્કૃતિક ધરોહર હસ્તપ્રતોમાં ધરબાયેલી છે કે જેમાં આપણાં ધર્મ, દર્શન, સાહિત્ય, વિજ્ઞાન, ટેકનોલોજી, રસાયણશાસ્ત્ર, ગણિત, જ્યોતિષ, વૈદક, શિલ્પસ્થાપત્ય વગેરે અનેકાનેક વિષયોનો સમાવેશ થાય છે. આ બધા વિષયોની હસ્તપ્રતો સંસ્કૃત, પાલિ, પ્રાકૃત અને આધુનિક ભારતીય ભાષાઓમાં અને વિવિધ લિપિઓમાં લખાયેલી છે અને આ પૈકીની અસંખ્ય મૂલ્યવાન કૃતિઓ આજે એકવીસમી સદીના બીજા દશકમાં પણ અપ્રકાશિત છે. બહુવિધ વિષયોની અનેક સંસ્કૃત કૃતિઓ ગુજરાતીમાં અનુવાદિત પણ થઈ નથી. આપણો આ જ્ઞાનવારસો ક્યાં સુધી ધરબાયેલો રાખીશું ? જો આપણે આપણી પ્રાચીન ભાષાઓ અને લિપિઓનો અભ્યાસ ચાલુ નહીં રાખીએ તો એક દિવસ એવો આવશે કે આપણી લિપિઓ વાંચવા માટે વિદેશોમાંથી ભારતીય લિપિવેત્તાઓને આમંત્રિત કરવા પડશે. હાલ પૂરતી દેશની વાત બાજુએ રાખીને ગુજરાતની જ વાત કરીએ તો લક્ષ્મણભાઈ ભોજક અને ભારતીબેન શેલતના અવસાન બાદ ગુજરાતમાં આજે માત્ર ડૉ. પ્રીતિબેન પંચોલી (કાર્યકારી નિયામક, ભો. જે.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

વિદ્યાભવન) છે કે જેઓ નાગરી વગેરે લિપિઓનું આધિકારિક રીતે અધ્યાપન કરવાની ક્ષમતા ધરાવે છે. આ સાથે એક અન્ય હકીકત છે કે નવી પેઢીના સંસ્કૃત અને ગુજરાતીના અધ્યાપકો પૈકી સંભવતઃ ૧૦-૧૫ જેટલા અધ્યાપકો પણ દેવનાગરી અને ગુજરાતીલિપિની હસ્તપ્રતો સરળતાથી ઉકેલી શકવાની ક્ષમતા ધરાવતા હશે કે કેમ ? જો આ પ્રચલિત લિપિઓ ઉકેલવાનું સામર્થ્ય ધરાવતા ન હોય તો શારદા, ગ્રંથ વગેરે લિપિઓના ઉકેલની અપેક્ષા જ અસ્થાને બની રહે છે. આ સ્થિતિ આપણા માટે કેટલી ભયાવહ બની રહેશે તે વિશે આપણે સૌએ ગંભીરતાથી ચિંતા અને ચિંતન કરવાની ઘડી આવી ગઈ છે.

સંસ્કૃત હસ્તપ્રતોની લિપિઓ વાંચી/સમજી શકવાની દિનપ્રતિદિન ઘટતી જતી ક્ષમતા સંદર્ભે અત્રે સ્મૃતિ અપાવવી રહી કે દિલ્હીના સુલ્તાન ફિરોજશાહ તુઘલક (૧૩૫૬) દ્વારા ટોપરા અને મેરઠ સ્થિત અશોકના અભિલેખોનું લખાણ જાણવાની જિજ્ઞાસાથી આ અભિલેખોને મહામુસીબતે દિલ્હીમાં તાણી લાવવામાં આવ્યા હતા. પરંતુ ત્યારે કોઈ વાંચી શક્યું ન હતું. આ જ અભિલેખોનું લખાણ જાણવાની ઇચ્છા મહાન મોગલ સમ્રાટ અકબર પણ ધરાવતો હતો, છતાં તેના સમયના પંડિતોએ પણ આ વાંચવાની લાચારી દર્શાવી હતી. – આ બંને ઘટનાઓની નોંધ પંડિત ગૌરીશંકર ઓઝાએ પોતાના ગ્રંથ 'પ્રાચીન ભારતીય લિપિમાલા' (૧૯૧૮)માં કરી છે. આ બંને ઘટનાઓ સ્પષ્ટ ઈશારો કરે છે કે મધ્યકાળમાં આપણે આપણી પ્રાચીન લિપિઓના વાંચનની ક્ષમતા ગુમાવી દીધી હતી. આશ્ચર્ય તો એ છે કે અશોકના અભિલેખો(ઈ.સ. પૂર્વ ૨૭૩-૨૩૭)નું સૌ પ્રથમ વખત આધુનિકકાળમાં વાંચન કોઈ ભારતીય લિપિવેત્તા દ્વારા નહીં, પરંતુ પાશ્ચાત્ય વિદ્વાન જેમ્સ પ્રિન્સેપ (૧૭૯૯-૧૮૪૦) દ્વારા ઈ.સ. ૧૮૩૬માં કરવામાં આવ્યું હતું. ધ્યાને રહે કે આજે પણ આપણે સિંધુલિપિ ઉકેલવામાં ઝાઝી સફળતા હાંસલ કરી શક્યા નથી.

પ્રવર્તમાન સમયમાં પ્રાયઃ સંસ્કૃતના વિદ્યાર્થીઓની ઘટતી જતી સંખ્યાને ધ્યાને લઈને આપણે પૌર્વાત્ય વિદ્યામંદિરો પ્રતિ ઉપેક્ષા સેવી રહ્યા છીએ, જ્યારે આજે પણ પશ્ચિમના દેશોની ઘણી યુનિવર્સિટીઓમાં સંસ્કૃત ઉપરાંત આધુનિક ભારતીય ભાષાઓ, ધર્મ-દર્શન, ઇતિહાસ વગેરેનાં અનુસ્નાતક ભવનો કાર્યરત છે. ઉદા. તરીકે ઈંગ્લેંડની ૪ અને જર્મનીની ૧૪ યુનિવર્સિટીઓમાં સંસ્કૃત અને ભારતીયવિદ્યાના વિષયોનું અધ્યાપન કરાવવામાં આવે છે. આ વિષયો ભણનારાઓની સંખ્યા નહિવત હોવા છતાં આ બધી યુનિવર્સિટીઓએ/વિવિધ દેશોએ આ વિભાગો ચાલુ રાખવાનું મુનાસિબ ગણ્યું છે. ધ્યાને રહે કે વિશ્વવિખ્યાત ફિલસૂફ ડૉ. રાધાકૃષ્ણનને ઑક્સફર્ડ યુનિવર્સિટી દ્વારા Visiting Professor તરીકે ખાસ આમંત્રિત કરવામાં આવતા હતા ત્યારે ભારતીયવિદ્યા ભણનારાઓની કેટલી સંખ્યા હશે ? સભાખંડો ઊભરાતા હશે, પરંતુ વર્ગખંડોમાં વિદ્યાર્થીઓની સંખ્યા ગણતરીની જ હશે. અત્રે આત્મશ્લાઘાનો દોષ વહોરીને પણ નોંધું છું કે આ લખનારે ભારતીય હસ્તપ્રતોનાં સૂચિપત્રો - Catalogues ના સર્વેક્ષણ અર્થે ઈંગ્લેંડનાં ઑક્સફર્ડ યુનિવર્સિટીના ઇન્ડિઅન ઇન્સ્ટિટ્યૂટ, કેમ્બ્રિજ યુનિવર્સિટી

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

લાઈબ્રેરી, ઇન્ડીઆ ઑફિસ લાઈબ્રેરી, બ્રિટિશ મ્યુઝિયમ લાઈબ્રેરી વગેરેમાં વર્ષ ૧૯૮૯-૯૦ માં સતત કેટલાક દિવસો સુધી કાર્ય કરતાં તત્કાલીન સમયે આ સંસ્થાઓમાં ભારતીયવિદ્યાના ગણતરીના સંશોધકો/વિદ્યાર્થીઓને જોયા હતા. આમ છતાં, આ બધી સંસ્થાઓ ભારતીયવિદ્યાનો સમૃદ્ધ ગ્રંથસંગ્રહ ધરાવે છે અને તેને સતત સંવર્ધિત રાખવામાં ભારે નિસબત ધરાવે છે. માત્ર અને માત્ર વિદ્યાપ્રીતિના કારણે આ પાછળ ભારે ખર્ચ વહન કરવામાં આવે છે. એક બાજુ આપણી સરકારો દ્વારા સંસ્કૃત અને સંસ્કૃતિના સંવર્ધન માટે દુહાઈ દેવામાં આવે છે અને બીજી બાજુ 'દ્વિતીય રાષ્ટ્રીય સંસ્કૃત આયોગ'ને સમેટી લઈ તેના અહેવાલને અભરાઈએ ચઢાવી દેવાના વલણને શું સમજવું ? સંસ્કૃત તો આપણી પોતાની ભાષા છે, કે જેમાં આપણો જ્ઞાનવારસો સચવાયેલો છે. સંસ્કૃત વાઙ્મય તો ભારતનો આત્મા છે - ભારતની અને ભારતીય અસ્મિતાની આગવી ઓળખ છે. ભારતને પામવા - જાણવા માટેનો એક પ્રમુખ આધારસ્રોત છે. જો તેની બાદબાકી કરી નાંખીશું તો આપણી પાસે બચશે શું ? સંસ્કૃતની જ્યોત પ્રજ્વલિત રાખવા માટે પ્રાચ્યવિદ્યા સંશોધનમંદિરોનું ક્રિયાશીલ અસ્તિત્વ અનિવાર્ય બની રહે છે. તેનો કોઈ વિકલ્પ નથી. આજે પ્રાચીન ભારતીય વિજ્ઞાન અને ટેકનોલોજીની જાણકારી હેતુ વૈજ્ઞાનિકો સંસ્કૃતનો અભ્યાસ કરી રહ્યા છે ત્યારે આપણી પ્રત્યેક વિદ્યાશાખાની સ્નાતક સુધીની કોલેજોમાં સંસ્કૃત ફરજિયાત વિષય તરીકે દાખલ કરવો જરૂરી બની રહે છે.

આ સંદર્ભે અત્રે નોંધવું રહ્યું કે લોર્ડ મેકોલેની શિક્ષણનીતિને ધ્યાને લઈ કોલકતાની વિખ્યાત સંસ્કૃત કોલેજ બંધ કરવાનાં ચક્રો ગતિમાન થયાં હતાં ત્યારે કોલકતાના પં. પ્રેમચન્દ્ર તર્કવાગિશે આ કોલેજને બચાવવા માટે ઈંગ્લેંડ સ્થિત પ્રાચ્યવિદ્યાવિદ એચ. એચ. વિલ્સનને અપીલ કરતાં વિલ્સને (૧૮૩૫) આપેલ ધ્વન્યાત્મક પ્રતિભાવ દૃષ્ટવ્ય બની રહે છે : ''નિષ્પિષ્ટાપિ પરં પદાહતિશતૈઃ શશ્વદ્ બહુપ્રાણિનાં સંતપ્તાપિ કરૈઃ સહસ્રકિરણેનાગ્નિસ્ફુલિંગોપમૈઃ। છાગાદ્યૈશ્ચ વિચરવિતાપિ સતતં મૃષ્ટાપિ કુદ્દાલકૈર્દૂર્વા ન મ્રિયતે કૃશાપિ નિતરાં ધાતુર્દયા દુર્બલે ।'' (અનેક પ્રાણીઓ દ્વારા ઘાસને સતત ખૂંદવામાં આવતું હોય, સહસ્ર સૂર્યકિરણો દ્વારા અગનજ્વાળાઓ ફેંકવામાં આવતી હોય, ઘેટાં - બકરાં દ્વારા સતત ચર્વણ કરવામાં આવતું હોય કે તેને કોદાળી/પાવડાથી કાપી નાખવામાં આવતું હોવા છતાં પણ ઘાસ કદાપિ નાશ પામતું નથી. અશક્તો પ્રતિ સર્જક દયાળુ છે.) આ શબ્દોનો અર્થ એ જ સમજવાનો છે કે ભારત અને ભારતીય વાઙ્મયમાં સંસ્કૃત શાશ્વત છે અને તે કદાપિ નાશ પામે નહીં.

આ બધી વાસ્તવિકતાઓ અને પ્રાચ્યવિદ્યા સંશોધનમંદિરોની અનિવાર્ય ઉપયોગિતાને ધ્યાને લઈને રાજ્ય સરકાર દ્વારા પ્રાચ્યવિદ્યા મંદિર (વડોદરા), એલ. ડી. ઇન્સ્ટિટ્યૂટ ઓફ ઇન્ડોલોજી (અમદાવાદ), ભો. જે. અધ્યયન - સંશોધન વિદ્યાભવન (અમદાવાદ), શ્રી દ્વારકાધીશ સંસ્કૃત એકેડેમી એન્ડ ઇન્ડોલોજિકલ રિસર્ચ ઇન્સ્ટિટ્યૂટ (દ્વારકા) તથા શક્તિપીઠ અંબાજીમાં આદિવાસી સાહિત્ય - સંસ્કૃતિ - કળા વગેરેના સમાવેશ સાથેની એક નવી જ પ્રાચ્યવિદ્યા સંશોધન સંસ્થાની સ્થાપના કરીને આ બધી સંસ્થાઓને Institutes of State

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

Importanceનો ખાસ દરજ્જો આપવો જોઈએ અને તે પણ કેન્દ્ર સરકાર દ્વારા. એશિયાટિક સોસાયટી (કોલકતા), ખુદાબક્ષ ઓરિએન્ટલ પબ્લિક લાઈબ્રેરી એન્ડ રિસર્ચ ઇન્સ્ટિટ્યૂટ (પટના) વગેરે સંસ્થાઓને Institute of National Importanceનો દરજ્જો પાર્લામેન્ટમાં ઠરાવ પસાર કરીને આપવામાં આવ્યો છે તે ધોરણે ગુજરાત વિધાનસભામાં ઠરાવ પસાર કરીને તેની સ્વાયત્તતાની શતપ્રતિશત જાળવણી સાથે આપવામાં આવે તે આજના સમયની અનિવાર્ય આવશ્યકતા છે. આ સાથે ધ્યાને રાખવું રહ્યું કે જે તે સંસ્થા માટે નિયુક્ત કરવામાં આવનાર નિયામક માત્ર લઘુત્તમ લાયકાત ધરાવનાર નહીં, પરંતુ, ભારતીયવિદ્યા ક્ષેત્રનો ખરા અર્થમાં પ્રતિબદ્ધ વિદ્યાપુરુષ હોવો જ જોઈએ. આ સૂચિત પગલું રાષ્ટ્રની સાંસ્કૃતિક ધરોહરના સંરક્ષણ અને સંવર્ધન માટે સીમાચિહ્નરૂપ બની રહેવાની સાથે સાથે ગુજરાત સરકાર અને તેના કર્ણધારોની દષ્ટિપૂત દીપસ્તંભ સમાન - milestone સમાન દૂરંદેશિતાનું દ્યોતક બની રહેશે અને **'આપણું ગુજરાત, આગવું ગુજરાત'** ના સૂત્રને યથાર્થમાં સાર્થક પણ કરશે.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

અમારાં આગામી પ્રકાશનો...

(૧) ચરકનો સ્વાધ્યાય, ભાગ-૧ (પુનઃ પ્રકાશન)

(૨) દેવર્ષિ નારદ- ગુજરાતી અનુવાદ

(૩) ચાંપાનેર : એક અધ્યયન (પુનઃ પ્રકાશન)

(૪) વડોદરાનો રાજકીય ઇતિહાસ (પુનઃ પ્રકાશન)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

समीक्षित पाठ-सम्पादन के प्रचलित सिद्धान्तों का पुनरावलोकन

वसन्तकुमार म. भट्ट*

भूमिका :

आधुनिक विश्व में यान्त्रिक मुद्रणकला का आविष्कार सार्धशताब्दी-पूर्व ही हुआ था। उससे पहले तो मानवी भूतकाल में लिखे गये और विरासत में मिले ग्रन्थों का अपने हाथ से ही ताडपत्र या भूर्जपत्रादि पर पुनर्लेखन (प्रतिलिपिकरण) करता आया था। अतः प्राचीन काल में हमारे पूर्वजों के द्वारा लिखे गये ज्ञान-विज्ञान के जो ग्रन्थ आज हस्तलिखित पाण्डुलिपियों में उपलब्ध होते हैं, वह बार-बार प्रतिलिपिकरण की प्रक्रिया से गुजरते हुए हम तक पहुँचे हैं। परन्तु मानवकृत प्रतिलिपिकरण के द्वारा पीढी दर पीढी संचरित होने वाले इन ग्रन्थों का पाठ (Text) आकस्मिक कारणों से नष्ट-भ्रष्ट होता रहा है, तथा ये सभी पाठ लिपिकारों के हाथ से अनजाने में या अज्ञानवशात् और कदाचित् जानबूझ कर भी परम्परागत पाठ में परिवर्तन एवं परिवर्धन किया जाता है। जिसके कारण कवियों एवं शास्त्रकारों के द्वारा रचित ग्रन्थों के पाठ अपने मूल रूप से विचलित हुए हैं। अतः पाण्डुलिपियों में सुरक्षित रहे इन ग्रन्थों का पाठ आज कैसे विशुद्ध एवं श्रद्धेय स्वरूप में सम्पादित किया जाय - यह विचारणीय है। यह प्रश्न केवल भारतीय ग्रन्थों के लिये ही नहीं है, यह बाईबल आदि अन्य धार्मिक ग्रन्थों के लिये भी है। यूरोपीय देशों में प्राचीन काल की कृतियों का पाठसम्पादन करने के लिये बहुत चर्चायें हुई हैं। तथा उसी मार्ग पर आगे बढते हुए विदेशी विद्वानों ने संस्कृत साहित्य के ग्रन्थों की भी पाठालोचना का कार्य शुरु किया था। अब प्राचीन काल में लिखे गये ग्रन्थों की पाठालोचना का कार्य न केवल आवश्यक, बल्कि अनिवार्य है - ऐसी प्रतीति दृढ होती जा रही है। अतः

1. प्राचीन काल की ब्राह्मी लिपि से लेकर शारदा, मैथिली, नेवारी, ग्रन्थ, तेलुगु, नन्दिनागरी आदि लिपियाँ सीखने का कार्य,
2. पाण्डुलिपियों का संग्रह करने का,
3. उनकी विवरणात्मक सूचियाँ बनाने का और
4. पाण्डुलिपियों के माध्यम से हम तक पहुँचे इन ग्रन्थों का समीक्षित पाठ-सम्पादन तैयार करने का कार्य संस्कृत विद्या का नया अनुसन्धान क्षेत्र बन गया है, जो नवोदित विद्वानों को दिन-प्रतिदिन आकर्षित कर रहा है।

प्रशिष्ट साहित्य की कृतियों की पाठालोचना करके उनके समीक्षित पाठसम्पादन तैयार करने में यूरोपीय

'स्वाध्याय' पृ. ५६, पृ. ७५-८४. ISSN 2250-0391

* २, सुरभि अपार्टमेन्टस्, सुभाष सोसायटी, ईश्वरभवन के पीछे, नवरंगपुरा, अहमदाबाद - ३८० ००९,
M: 9427700064, Email: v.k.bhatt53@gmail.com

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विद्वानों ने जो मार्ग प्रशस्त किया था, उसी मार्ग पर चल कर हमारे देश के प्रोफेसर वी. एस. सुकथंकर जी एवं गोविन्दलाल. एच. भट्ट जैसे श्रद्धेय विद्वानों ने दो आर्ष महाकाव्य (Epics) ''महाभारत'' तथा ''रामायण'' का समीक्षित पाठसम्पादन (Critical Text-editing) प्रकाशित किया है । समीक्षित पाठसम्पादन के निदर्श रूप ये दो महनीय कार्य हमारे लिये पथदर्शक बन रहे हैं । यूरोपीय विद्वानों ने बाईबल के लिए उपयुक्त वंशवृक्ष पद्धति का अनुसरण/विनियोग इन दोनों महाकाव्यों के पाठसम्पादन में किया गया था । जिससे बहुत अच्छे परिणाम हांसिल भी किये गये हैं । तथापि इसी पद्धति का सर्वत्र अनुसरण हो रहा है-ऐसा दिखता नहीं है । अन्यान्य पाठ-सम्पादकों ने कुछ भिन्न दृष्टि से भी पाठ-सम्पादन किये हैं । अतः पाठ-सम्पादन की एकाधिक प्रविधियों का फैलावा देखते हुए, उन विभिन्न सिद्धान्तों का पञ्चविध भारतीय (संस्कृत-पालि-प्राकृत) वाङ्मय के सन्दर्भ में कहाँ, कैसे विनियोग किया जाना चाहिये ? इसका पुनःपरामर्शन यहाँ प्रस्तुत किया जाता है ।

सबसे प्रथम, प्राचीन भारतीय कृतियों के पाठ (Text) कितने प्रकार के हैं ? तत्पश्चात् उसके पाठसंचरण का क्या इतिहास रहा है ? इन दोनों प्रश्नों का यथासम्भव गहराई से विचार करना चाहिए । क्योंकि हमारे यहाँ साहित्य में भेद होने से पाठ के स्वरूप का भेद होता है । पाठ-स्वरूप में भेद होने के साथ साथ पाठ-कर्तृता का भेद भी ध्यानास्पद है और उसके साथ साथ पाठसंचरण की विभिन्न विधाओं ने भी पाठविकृति की भिन्न-भिन्न समस्याओं को जन्म दिया है । इन तीन बिन्दुओं के साथ, पीढी दर पीढी संचरित हुए पाठ के अभिसाक्ष्यों यानि उपलब्ध पाण्डुलिपियों (witness) की सङ्ख्या में भेद होने से भी, उनकी पाठसम्पादन-विधा में भेद करना अनिवार्य हो जाता है ।

[१]

डॉ. एस. एम. कत्रे जी ने पाठों के तीन प्रकार बताये हैं[१]। १. मूलग्रन्थकार का स्वहस्तलेख, २. स्वहस्तलेख की तुरन्त की प्रतिलिपि, या 3. प्रतिलिपि की प्रतिलिपि की.....प्रतिलिपि की प्रतिलिपि...और उसकी भी वंशज प्रतिलिपियाँ । परन्तु इनको हम ''पाठ के प्रकार'' नहीं कहेंगे । यह तो उपलब्ध पाठों के अभिसाक्ष्यों (witness) के भेद हैं । वस्तुतः भारतीय सन्दर्भ में सोचे तो हमारे यहाँ पाँच प्रकार के संचरित-पाठ विद्यमान हैं । जैसा कि-

(१) दृष्ट-साहित्य :- भारतीय मान्यता के अनुसार वेद अपौरुषेय है...ऋषिमुनियों को वेदमन्त्रों का दर्शन हुआ था । अर्थात् भारत में एक ऐसा साहित्य है कि जिसका कोई कर्ता ही नहीं है क्योंकि वेदसाहित्य एक अकर्तृक-रचना है । वेदमन्त्रों को हमने अपौरुषेय माना है । इन ग्रन्थों में पाठान्तर, या पाठ की अशुद्धि का सवाल नहीं उठा है । (किन्तु वैदिक साहित्य में मन्त्रसंहिताओं को छोडकर, जो उपनिषद् भाग है, उसका पाठ विवादग्रस्त बना है ।)

1. Now texts may be either autographs, or immediate copies of autographs, or copies of copies, and this in any degree. - Chapter 2, Kinds of Texts., S. M. Katre, *Introduction to Indian Textual Criticism*, Pune, 1954, p. 19

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(२) उत्कीर्ण-साहित्य :- सम्राट् अशोक (ईसा पूर्व 283) से आरम्भ करके 18वीं शती पर्यन्त के शैललेख, शिलालेख, स्तम्भलेख और ताम्रलेख पर (ब्राह्मी लिपि या देवनागरी-आदि लिपि में उत्कीर्ण) जो पाठ पढने को मिलता है, उन सभी का पाठालोचन करके उसका समुचित पाठसम्पादन करना आवश्यक है । क्योंकि ऐसे उत्कीर्ण पाठों में भी कालान्तर में पैदा हुई अनेक विकृतियाँ दिखाई पड़ रही हैं । पर्वत या चट्टानो पर उत्कीर्ण किये गये इन लेखों का पाठ स्वहस्तलेख की तुरन्त की प्रतिलिपि कहा जाता है । क्योंकि ऐसे लेखों को खुदवाने के बाद राजाओं के मन्त्रीगण उसकी पुनःपरीक्षा भी कर लेते थे । वेदों का मन्त्रपाठ और उत्कीर्ण लेखों का पाठसंचरण नियन्त्रित रूप से होता रहा है-यह सर्व-स्वीकार्य हकीकत है ।

(३) प्रोक्त-साहित्य :- रामायण, महाभारत एवं अष्टादश पुराणों का पाठ प्रोक्तसाहित्य के नाम से जानना चाहिये । क्योंकि इन कृतियों का पाठ आदिकाल से ही कथा-कीर्तन अर्थात् प्रवचन के माध्यम से प्रवाहित होता रहा है । ऐसी कृति के पारायण के दौरान कथाकारों के द्वारा उसमें बहुविध परिवर्तन एवं प्रक्षेपादि भी किये जाते हैं । परिणाम स्वरूप उसमें मूल पाठ यथावत् रहा ही नहीं है । ऐसे पुराणादि के पाठों को ''अनेक-कर्तृक-पाठ'' कहा जाता है ।

(४) कृत -साहित्य :- कालिदास, बाणभट्ट, भवभूति आदि कवियों, भामह, दण्डी, वामन, आनन्दवर्धन, मम्मट, शङ्कराचार्यादि शास्त्रकारों, तथा उनके अनेक टीकाकारों के द्वारा जो काव्य, नाटक, शास्त्रादि का प्रणयन हुआ है, उनको ''कृत-साहित्य'' कहना चाहिये । ऐसी कृतियों की पुष्पिका में लिखा होता है कि ''*इति कालिदासकृत अभिज्ञानशाकुन्तलं नाम नाटकं समाप्तम्*''। यहाँ पर एक ही निश्चित कर्ता होता है । इसलिए इस कृत-साहित्य के पाठ को हम ''एक-कर्तृक रचना'' भी कहेंगे ।

यहाँ पर प्रोक्त एवं कृतसाहित्य का पाठ हस्तलिखित पाण्डुलिपियों में ही बहुशः संचरित हुआ है और सुरक्षित रहा हैं । लेखकों (लिपिकारों) के द्वारा बार-बार उसका (देश की विभिन्न लिपियों में) प्रतिलिपिकरण होने के कारण, (तथा मूल कवि या शास्त्रकार के दिवंगत हो जाने के कारण) इन के पाठ की यथातथा रूप में सुरक्षा नहीं हुई है । क्योंकि ऐसे पाठों का संचरण अनियन्त्रित रूप से हुआ है । मध्यकालीन संतसाहित्य के रचयिता तुलसी, कबीर, मीराबाई, नरसिंह महेता, तुकाराम, ज्ञानेश्वरादि के पदों का पाठ भी अनियन्त्रित रूप से, पाण्डुलिपियों में एवं मौखिक रूप में संचरित होता रहा है ।

(५) श्रुत -साहित्य :- भगवान् बुद्ध एवं भगवान् महावीर ने जो भी धर्मोपदेश दिये थे वह आम प्रजा के बीच में जा कर मौखिक रूप में दिये थे । उन्होंने कभी भी अपने धर्मोपदेश को कलम उठा कर कागज पर अपने हाथ से लिख कर नहीं दिये थे । बुद्ध तथा महावीर के तत्कालीन प्रत्यक्ष शिष्यों ने उसे सुन सुन कर स्मृतिस्थ रखा था और उसे पीढी दर पीढी संचरित किया है । अतः बुद्ध एवं महावीर की वाणी को हम ''श्रुत-साहित्य''

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कहेंगे । लेकिन इस साहित्य का पाठसंचरण शुरु में मौखिक रूप से हुआ था, लेकिन कालान्तर में उसे भी लिपिबद्ध किया गया है । यानि उन दोनों के उपदेश-वचनों का पाठसंचरण उभयात्मक था । जैसे कि बुद्ध-परिनिर्वाण के बाद बौद्ध साधुओं ने तीन-चार संगीतियों में एकत्रित हो कर (बुद्धवचनों के सामूहिक पारायणों में) अपने अपने स्मृतिस्थ बुद्धवचनों की परीक्षा कर ली थी । अशोक ने तो जिन बौद्धसाधुओं को बुद्धवाणी सही रूप में याद नहीं थी उन सबको संघ से बाहर निकाल दिया था । भगवान् महावीर के परिनिर्वाण के बाद जैन साधु भगवन्तों ने भी ऐसे सम्मेलन बुलाये थे, और अपने अपने स्मृतिस्थ ज्ञान की परीक्षा कर ली थी । यानि इन दोनों श्रवण परम्पराओ में कुछ शताब्दियों तक तो श्रुतज्ञान नियन्त्रित रूप से संचरित हुआ था । परन्तु बाद में यह परम्परा अक्षुण्ण नहीं रही, और भगवान् बुद्ध एवं महावीर के वचनों को भी लिपिबद्ध (ग्रन्थस्थ) कर लिये गये थे । अतः उनकी भी प्रतिलिपियाँ बनाना शुरु हुआ था, परिणाम स्वरूप उस श्रुतज्ञान में भी बहुविध पाठविचलन होना शुरु हो गया था ।

इस तरह से, भारतीय सन्दर्भ में देखा जाय तो-१. दृष्टसाहित्य, २. उत्कीर्णसाहित्य, ३. प्रोक्तसाहित्य, ४. कृतसाहित्य तथा ५. श्रुतसाहित्य - ऐसे पाँच प्रकार के पाठ (Text) हमारे सामने विद्यमान हैं । इन पाँचों तरह के साहित्य का पाठ अलग अलग रूप से पीढी दर पीढी (तथा नियन्त्रित-अनियन्त्रित रूप से) संचरित होता रहा है । अब ध्यातव्य है कि पाठसंचरण का स्वरूप भिन्न भिन्न होने के कारण इन में प्रविष्ट होनेवाली अशुद्धियाँ एवं विकृतियाँ का स्वरूप भी भिन्न भिन्न दिखता है, तथा अतिप्राचीन काल की पाण्डुलिपियाँ भी मिलती ही नहीं है । आज उपलब्ध होनेवाली पाण्डुलिपियों का समय भी तीन सौ या चार सौ साल से अधिक पुराना नहीं है । अतः इन द्विविध परिस्थितियों में, इन पाँचो तरह के पाठों का सम्पादन करने में उपायभेद सोचना चाहिये ।

[२]

प्रशिष्ट भारतीय (संस्कृत, पालि एवं प्राकृत) भाषाओं में लिखे गये विपुल साहित्य का पाठ, जो अद्यावधि पाण्डुलिपियों में प्रवहमान हुआ है और इसलिये वह मूल रूप से विचलित भी हो गया है, उसका ''समीक्षित पाठसम्पादन'' (Critical Text-editing) किस तरह से किया जाय तो अधिक फलदायी होगा -यह विचारणीय है । पश्चिमी देशों में जो विचारधारायें विकसित हुई हैं उनमें से प्रशिष्ट कृतियों के पाठसम्पादन के लिये तीन मार्ग उद्भावित किये गये हैं :-(क) प्रतिलेखन पद्धति से पाठसम्पादन (Copy-text editing) (ख) संदोहन पद्धति से पाठसम्पादन (Eclectic-text editing) तथा (ग) वंशवृक्ष पद्धति से पाठसम्पादन (Stemmatic-text editing) ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(क) प्रतिलेखन पद्धति से पाठसम्पादन (Copy-text editing)

किसी भी कृति का 'पाठ' १. केवल एक ही पाण्डुलिपि में उपलब्ध होता हो, या २. कोई लेख शिला, पर्वत, स्तम्भ, या ताम्रपत्र पर उत्कीर्ण हो, अथवा 3. भाग्यवशात् कोई ग्रन्थकार का स्वहस्तलेख उपलब्ध होता हो तो उपर्युक्त प्रथम प्रकार का ''प्रतिलेखन पद्धति से पाठसम्पादन'' करना चाहिये । यहाँ पर पाठ के जो अवाच्यांश या त्रुटितांश होते हैं, उसका पाठ कैसे पुनःप्रतिष्ठित किया जाय ? यह चर्चा का विषय बनता है । जो रूढिवादी पाठसम्पादक होते हैं वे उपलब्ध पाठ के त्रुटितांश को बिन्दुओं की लकीर(.....) से यथावत् रखने के पक्ष में होते हैं । दूसरे जो उदारतावादी पाठसम्पादक होते हैं वे असम्बद्ध या दुर्बोध या त्रुटित पाठ्यांश को असह्य मानते हैं । अतः वे पूर्वापर सन्दर्भ में जो सुसंगत, सुबोध प्रतीत होता है ऐसे नवीन शब्दों से पाठ का पुनर्गठन कर लेना चाहिये ऐसा सुझाव देते हैं । अर्थात् उदारतावादी पाठसम्पादक पाठ सुधार को तथा पाठ के पुनर्गठन को पहले महत्त्व देते हैं । उनके विरुद्ध, जो रूढिवादी पाठसम्पादक होते हैं वे परम्परागत पाठ को यथावत् रख कर 'स्थितस्य गतिश्चिन्तनीया' के सिद्धान्त पर, उपलब्ध असम्बद्ध पाठ्यांश के अर्थघटन करने के प्रयास को पहले महत्त्व देते हैं । नाट्यशास्त्र की अभिनवभारती टीका का पाठ सम्पादित करते समय श्रद्धेय आचार्य श्रीविश्वेश्वरजी ने त्रुटित पाठों के पुनर्गठन को प्राधान्य दिया है और स्वकल्पित नवीन शब्दों का उपनिवेश करके वाक्यपूर्ति की है और प्रकरणसंगति बिठाई है । उसको हम उदारतावादी पाठसम्पादन कहेंगे । यहाँ पर पुनरुक्ति करके याद दिलाया जाता है कि 'प्रतिलेखन पद्धति' (Copy-text editing) के पाठसम्पादन में केवल एक ही पाण्डुलिपि में सुरक्षित रहे पाठ का सम्पादन करने की बात का समावेश होता है ।

[३]

कदाचित् ऐसा भी होता है कि किसी कृति की शताधिक पाण्डुलिपियाँ विद्यमान होते हुए भी, कोई सम्पादक केवल एक ही पाण्डुलिपि (जो सरलता से, अनायास मिल गई हो उस) के आधार पर उसे पढ कर प्रतिलेखन के तौर पर, उसका प्रकाशन कर देता है तो वह भी 'प्रतिलेखन पद्धति' (Copy text-editing) प्रकार का पाठसम्पादन कहा जायेगा । आलस्य के कारण या प्रसिद्धि के मोह में, उपलब्ध अन्य पाण्डुलिपियों को देखे बिना जब कोई पाठसम्पादन कर देता है तो उसे अनालोचनात्मक पाठसम्पादन कहा जायेगा ।

अब, उपलब्ध अनेक पाण्डुलिपियों को देखे बिना, जब केवल एक ही पाण्डुलिपि के आधार पर जो सम्पादन किया जाता है उसको 'अनालोचनात्मक पाठसम्पादन' (Uncritical text-editing) के नाम का कलङ्क लग जाता है । अतः दूसरे सम्पादक लोग इस कलङ्क से बचने के लिये, केवल एक 'प्राचीनतम पाण्डुलिपि' (Oldest manuscript school) को आधार बनाकर पाठसम्पादन करते हैं, या उपलब्ध अनेक पाण्डुलिपियों में से जो एक 'उत्तम पाण्डुलिपि' (Best manuscript school) होती है उसको (अथवा किसी के द्वारा प्राचीन काल में ही

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

परीक्षित हो ऐसी पाण्डुलिपि को) आधार बना कर पाठसम्पादन कर लेते हैं। इस दृष्टि से जो पाठसम्पादन किया जाता है उस में वस्तुलक्षिता (objectivity) जरूर है। लेकिन पाठ की सचाई का प्रमाण केवल प्राचीनता या उत्तमता ही नहीं होती है। और 'उत्तम' या 'प्राचीनतम' पाण्डुलिपि के आधार पर पाठसम्पादन करने का यह उपक्रम तभी मान्य हो सकता है कि जब उपलब्ध अनेक पाण्डुलिपियों में केवल ''अनुलेखनीय सम्भावना'' वाली यानि प्रतिलिपि-कर्ता के अनवधान से या अज्ञान के कारण पैदा हुई हो ऐसी ही अशुद्धियाँ हो। अतः शताधिक पाण्डुलिपियाँ मिलने पर भी केवल उत्तमता या प्राचीनतमता के आधार पर प्रतिलेखन पद्धति से पाठसम्पादन करने में दोष भी है, और उसमें कुछ मर्यादाएँ भी हैं।

[४]

(ख) संदोहन पद्धति से पाठसम्पादन (Eclectic-text editing)

पाठसम्पादन के क्षेत्र में एक दूसरा दृष्टिकोण भी विचारणीय है। न प्राचीनतम, और न उत्तम पाण्डुलिपि की शरण लेना, क्योंकि यह मार्ग तो जब (उपलब्ध होनेवाली अनेक पाण्डुलिपियों में) केवल ''अनुलेखनीय सम्भावना'' वाली ही अशुद्धियाँ हो तब औचित्य रखता है। लेकिन जब (१) उपलब्ध शताधिक पाण्डुलिपियों में सार्थक पाठान्तर होते हैं तब उस ग्रन्थ के पाठसम्पादन में संदोहन पद्धति अधिक औचित्यपूर्ण लगती है। इस पद्धति में जो पाठ बहुसङ्ख्यक पाण्डुलिपियों (Majority of manuscripts) मे संचरित हुआ है ऐसा देखा जाता है, तब उस सामान्य पाठ का चयन किया जाता है। और जो जो पाठ्यांश अल्पसङ्ख्यक पाण्डुलिपियों में ही संचरित हुआ दिखाई देता हो, उसको अस्वीकार्य पाठान्तर माना जाता है। इस तरह से सामान्य पाठ्यांश के संदोहन करने की दृष्टि से जो पाठसम्पादन किया जाता है उसमें जरूर वस्तुलक्षिता (objectivity) है ऐसा कहना पडेगा। लेकिन यहाँ पर बहुसङ्ख्यक पाण्डुलिपियों में मिलने वाला पाठ अर्वाचीन काल का है या प्राचीन काल का है -यह हम किसी भी तरह से नहीं जान सकेंगे। परिणामतः पाठसम्पादन में प्राचीन से प्राचीनतर पाठ की खोज का उपक्रम विस्मृत हो जाता है। (२) इस तरह की संदोहन पद्धति के पाठसम्पादन में कभी कभी सर्वाधिक पाण्डुलिपियों के सामान्य पाठ का ग्रहण नहीं करके, उसके बदले में, अलग अलग पाण्डुलिपियों में बिखरे हुए गुणवत्तायुक्त पाठान्तरों का चयन किया जा सकता है। यहाँ तरह तरह के सार्थक पाठान्तरों में से जो जो पाठान्तर अत्यन्त काव्यत्वपूर्ण या चमत्कृतिपूर्ण या अपने सम्प्रदाय के जो अनुकूल हो ऐसे अर्थ देनेवाले पाठान्तर हो ऐसे पाठान्तरों का चयन करके भी पाठसम्पादन किया जा सकता है। इसको भी संदोहन पद्धति (या दूसरे यथार्थ शब्दों में कहे तो मधुकर-वृत्ति) से (Eclectic principle) किया हुआ पाठसम्पादन कहा जाता है। परन्तु गुणवत्ता के आधार पर जो पाठ का चयन होता है उसमें सम्पादक की रुचि-अरुचि एवं साम्प्रदायिक अभिनिवेश-बुद्धि भी प्रतिबिम्बित होती है। अर्थात् ऐसा पाठसम्पादन आत्मलक्षिता (subjectivity) से भरा होगा। ऐसे पाठसम्पादनों में यही सब से बडा दोष अन्तर्गर्भित रहता है। (जिसके कारण ऐसे संदोहन या मधुकर-वृत्ति से किये गये पाठ सम्पादन सर्व-स्वीकार्य नहीं बन सकते हैं।) तथा इसमें एक दूसरी मर्यादा यह भी रहती है कि प्रस्तुत कृति की कितनी पाठपरम्परायें (वाचनायें

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

recencions) प्रवर्तमान हैं, या कौन सी पाठपरम्परा प्राचीनतर है या प्राचीनतम है ? यह भी सोचे बिना ही काम निपटाया जाता है ।

नीलकण्ठ ने जब महाभारत पर 'भारतभावदीप' नामक टीका लिखी थी, तब देश के विभिन्न प्रान्तों से अनेकानेक पाण्डुलिपियाँ एकत्र की गई थीं । और उनमें से जहाँ जो भी उत्तम (अग्रगण्य) पाठान्तर मिले, उसका चयन करके (एक तरह से गुणोपसंहार-न्याय से पहले पाठसम्पादन करके, बाद में) उस पर टीका लिखी गई थी[२] । ऐसे संदोहन पद्धति वाले (Eclectic text-editing) पाठसम्पादन में भी पाठान्तरों की गुणवत्ता पर ध्यान दिया जाता है । परन्तु उपलब्ध पाण्डुलिपियों में से प्राचीनतर या प्राचीनतम पाठ्यांश की शोध की ओर ध्यान नहीं होता है । जो कृति का पाठ शताब्दियों से पाण्डुलिपियों में संचरित होता है, उसकी पाठपरम्परायें कितने प्रकार की हैं, तथा प्राचीनतर पाठ्यांश कौन सा है ?- यह 'इदं प्रथमतया' गवेषणीय होता है ।

कृत-साहित्य की कोई कृति का पाठ यदि सन्दोहन पद्धति से सम्पादित किया जायेगा तो उसमें निश्चित ही आत्मलक्षिता प्रविष्ट होती है, और इसी कारण से ऐसा पाठसम्पादन सर्वस्वीकार्य भी नहीं बनता है । इसी तरह से श्रुत-साहित्य का पाठ भी यदि सन्दोहन पद्धति से सम्पादित किया जायेगा, तो वहाँ भी साम्प्रदायिक अभिनिवेश-बुद्धि कार्यरत होगी । तथा प्राचीनतर या प्राचीनतम पाठपरम्पराओं का भी ज्ञान कदापि नहीं होगा । संक्षेप में कहे तो यह दूसरी पद्धतिवाले (Eclectic text-editing) पाठसम्पादन में अनेक भयस्थान दिखाई दे रहे हैं ।

[५]

(ग) वंशवृक्ष पद्धतिवाला पाठसम्पादन (Stemmatic Text-editing)

यूरोपीय देशों में, प्रशिष्ट कृतियों के पाठसम्पादन के लिये जो विभिन्न विधायें विकसित हुई हैं, उनमें एक तीसरा प्रकार है :- वंशवृक्ष पद्धतिवाला (Stemmatic Text-editing) पाठसम्पादन । यह पद्धति सारे संसार में बहुत प्रचलित हुई है । इस पद्धति में १. अनुसन्धान (Heuristics), २. संशोधन (Recensio), ३. पाठसुधारणा एवं संस्करण (Emendatio) तथा ४. उच्चतर समीक्षा (Higher Criticism) - जैसे चतुर्विध सोपान होते हैं। यहाँ पहले सोपान पर विविध भण्डारों में उपलब्ध हो रही पाण्डुलिपियों की प्रतिलिपियाँ (photo-copies) एकत्रित की जाती हैं । तत्पश्चात् पसंद की गई प्रत्येक पाण्डुलिपि का पाठ (अशुद्धियाँ तथा पाठान्तरादि) सन्तुलन-पत्रिकाओं (collation-sheets) में अंकित किया जाता है । जिससे समान अशुद्धियाँ एवं समान स्थान में प्राप्त होने वाले त्रुटितांश के आधार पर, एवमेव, समान अधिक पाठ्यांश वाली पाण्डुलिपियों का पहले वर्गीकरण किया जाता है । तथा उनके आधार

---

२. बहून् समाहृत्य विभिन्नदेश्यान् कोशान्, विनिश्चित्य तु पाठमग्र्यम् ।
प्राचां गुरूणाम् अनुसृत्य वाचमारभ्यते भारतभावदीपः ॥ (महाभारतम्, आदिपर्वन् १-१)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पर उपलब्ध पाण्डुलिपियों के पास्परिक आनुवंशिक सम्बन्ध ढूँढे जाते हैं । जिससे कौन कौन सी पाण्डुलिपियों की पूर्वज आदर्श-प्रति समान होगी या सर्वथा भिन्न होगी यह निश्चित किया जाता है । अर्थात् संतुलन-पत्रिकाओं के सहारे ही एकत्र की गई पाण्डुलिपियों का एक तरह का वंशवृक्ष (genealogical tree/pedigree/stemma codicum) सोचा जाता है । ततः पाठ्यग्रन्थ की कितनी वाचनायें (पाठपरम्परायें) प्रवर्तमान है यह निश्चित किया जाता है । और, अन्त में विभिन्न वाचनाओं में से कौन सी वाचना में प्राचीनतर या प्राचीनतम पाठ्यांश (आर्ष या लघुपाठ के रूप में) संचरित हुआ है - यह सब तय किया जाता है । ऐसे प्राचीनतम पाठ को अधिक श्रद्धेय मान कर, उसके आधार पर पाठसम्पादन किया जाता है । तथा अस्वीकार्य पाठान्तरों को पादटिप्पणी में निर्दिष्ट किये जाते हैं । इस पाठसम्पादन की प्रस्तावना में पसंद की गई पाण्डुलिपियों का विस्तृत विवरण दिया जाता है । पाण्डुलिपियों के प्रथम एवं अन्तिम पृष्ठ का फोटोग्राफ भी दिया जाता है । परिशिष्टों में अमान्य किये गये प्रक्षिप्तांश रखे जाते हैं । एवं तरह तरह की श्लोक-सूचियाँ तथा शब्द-सूचियाँ जोडी जाती हैं, ताकि किसी भी तरह के सन्दर्भ को हमारा पाठक जल्दी से ढूँढ सके । इस तरह की प्रक्रिया से किये गये पाठसम्पादन को 'समीक्षित पाठसम्पादन' (Critically edited text) कहा जाता है । इस पद्धति से किये गये पाठसम्पादन में एक ही ग्रन्थ कितनी वाचनाओं (शाखाओं) में प्रवाहित हुआ है वह जाना जाता है । तथा इसमें नितान्त वस्तुलक्षिता होती है एवं प्राचीन से प्राचीनतर पाठ ढूँढा जा सकता है । अतः यह प्रक्रिया सर्वाधिक वरणीय मानी गई है । यहाँ पर प्रथम तीन सोपान में जो कार्यविधि की जाती है उसको 'निम्न-स्तरीय पाठालोचन' (Lower Criticism) कहते हैं । तत्पश्चात् (समीक्षित पाठसम्पादन का प्रकाशन हो जाने के बाद भी) चतुर्थ सोपान के रूप में 'उच्च-स्तरीय पाठालोचन' (Higher Criticism) का कार्य करना होता है ।

सन्दोहन पद्धतिवाले पाठसम्पादन की अपेक्षा से, यह तीसरे प्रकार का-वंशवृक्ष-पद्धतिवाला-पाठसम्पादन अधिक विश्वसनीय है । क्योंकि इस पद्धति से जो सम्पादन तैयार होता है, उसमें काफी हद तक वस्तुलक्षिता (objectivity) बनी रहती है । तथा अभीष्ट कृति की पाठपरम्पराओं के भेदोपभेद जान कर, उसमें कौन सा अंश प्राचीनतर या प्राचीनतम है - यह भी निश्चित किया जाता है । अतः एकाधिक पाण्डुलिपियों वाले 'प्रोक्त', 'कृत' तथा 'श्रुत' प्रकार के साहित्य कृति के लिये यह तीसरी वंशवृक्ष पद्धतिवाला पाठसम्पादन अधिकतर फलदायी दिखाई पड़ रहा है । यहाँ एक जिज्ञासा होती है कि दूसरी सन्दोहन-पद्धति कहाँ प्रयुक्त की जा सकती है या कहाँ पर वह अधिक उपयुक्त होगी ? इसका उत्तर यह है कि वंशवृक्ष पद्धतिवाले पाठसम्पादन की जो लम्बी प्रक्रिया है, उसके अन्तर्गत (ही) हम इस सन्दोहन पद्धति का विनियोग कर सकते हैं । जैसा कि - वंशवृक्ष पद्धति का अनुसरण करके जब 'प्रोक्त प्रकार' की कोई कृति की पाण्डुलिपियों के पहले पारस्परिक आनुवंशिक सम्बन्ध प्रस्थापित किये जाते हैं, तब प्राचीनतर या बहुसङ्ख्यक-पाण्डुलिपियों के सामान्य पाठ का सन्दोहन ही किया जाता है । (तथा जो जो पाठभेद प्राचीनतर नही हैं, या अल्पसंख्यक पाण्डुलिपियों में मिलने वाले पाठ हैं - वे अस्वीकार्य पाठ के रूप में पादटिप्पणी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में रखे जाते हैं ।)

'प्रोक्त' प्रकार की साहित्यिक कृति में एक बात शुरु से ही साफ रहती है कि जो प्रोक्त-साहित्य है वह अनेक-कर्तृक होते हैं । अर्थात् वहाँ पर मूलभूत रूप से ही एक निश्चित पाठ कदापि नहीं होता है । अतः निम्नस्तरीय पाठालोचना के दायरे में प्रोक्तग्रन्थ की पाण्डुलिपियों में से सामान्य या प्राचीनतर पाठ का सन्दोहन ही करना पडता है । पाठसम्पादन का इतना कार्य हो जाने के बाद, जब उच्चस्तरीय पाठालोचना शुरु की जाती है तब - कौन से ऐतिहासिक घटनाचक्र के कारण कृति का अमुक पाठ्यांश बदला गया है इत्यादि सोचा जाता है । तथा विभिन्न काल खण्ड में (विभिन्न कर्ताओं के द्वारा) जो जो पाठ्यांश में प्रक्षेप या परिवर्तनादि हुआ होगा ऐसा दिखाई देता है, उसका समय निर्धारित किया जाता है ।

एककर्तृक 'कृत' प्रकार के साहित्य में वंशवृक्ष-पद्धति से पहले कृति का पाठ कितने प्रवाहों में विभक्त होता है - यह देख लिया जाता है । यहाँ पर भी प्राचीन से प्राचीनतर पाठ्यांश कौन हो सकता है, तथा प्राचीनतर से भी प्राचीनतम पाठ्यांश कौन हो सकता है - यह ढूँढने का प्रयास किया जाता है । तथापि इस 'कृत' प्रकार के साहित्य में, जहाँ कोई एक ही कर्ता / कवि निश्चित होता है उसमें हमारा लक्ष्य कोई एक ही निश्चित पाठ निर्धारित करने का रखना चाहिये । अतः वंशवृक्ष-पद्धति के द्वारा पाण्डुलिपियों में जो द्विविध पाठपरम्परायें (वाचनाएं) दिखाई देती हो, उन दोनों की सम्मति लेकर, या 'उच्चस्तरीय पाठालोचन' का कोई तर्क या समर्थन प्रस्तुत करके, कोई एक ही पाठ निर्धारित करना चाहिये । तथा 'श्रुत' प्रकार के साहित्य की कृति का पाठ-सम्पादन करने के लिये भी वंशवृक्ष-पद्धति की चलनी से यदि उपलब्ध पाठान्तरों को छांटा जायेगा तो प्राचीन से प्राचीनतर, और प्राचीनतर से भी प्राचीनतम पाठ सरलता से प्राप्त किया जा सकता है । तदनन्तर ही बुद्धवाणी एवं महावीरवाणी के पाठ का पुनर्गठन एवं पुनर्वसन (reconstruction and restoration) करना होगा । यहाँ पर पाठसम्पादन के साथ साथ पाठ का पुनर्गठन एवं पुनर्वसन भी लक्ष्य रूप में अवस्थित है ।

उपसंहार

भारत का प्राचीन एवं मध्यकालीन साहित्य विपुल होने के साथ साथ बहुविध भी है । इन्हीं में भारतीय अस्मिता छिपी हुई है । अतः वह हमारी मूल्यवान् विरासत भी है । इसकी सुरक्षा में हमारा भविष्य है । इसलिये पाण्डुलिपियों की सुरक्षा करना हमारा एक कर्तव्य भी है । तथैव, इन पाण्डुलिपियों में निहित ज्ञान-सम्पदा का हमें पूरा लाभ उठाना चाहिये । लेकिन उसके लिये, इनमें जो पाठ (Text) शताब्दियों से संचरित हो कर हम तक पहुँचा है उसका सम्यक् रूप से पाठसम्पादन करना जरूरी है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रस्तुत आलेख में समीक्षित पाठसम्पादन के त्रिविध मार्ग की चर्चा करके, भारतीय वाङ्मय के वैविध्य के सन्दर्भ में इनकी उपयुक्तता बताने का प्रयास किया गया है । अभी तक इस दिशा के जो पुस्तक या शोध-आलेख देखने को मिले हैं उनमें यूरोपीय देशों के सिद्धान्तों का शुक-पाठ होता रहा है । परन्तु पूर्वोक्त भारतीय सन्दर्भ को शायद किसी ने ध्यान में नहीं लिया है । अतः यहाँ पर, संस्कृत-पालि-प्राकृत भाषा की विभिन्न कृतियों के पञ्चविध पाठ, तथा पाठसंचरण की बहुविधता, पाठ के कर्तृत्व की अनेकरूपता इत्यादि का प्रथम बार निरूपण किया गया है । तथा किस तरह के साहित्य के लिये, कौन सी पाठसम्पादन पद्धति तर्कशुद्ध एवं अधिक फलदायी होगी इसकी उपस्थापना की गई है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रामचन्द्रपण्डित कृत वृत्ताभिराम : छन्दःशास्त्रीय-ग्रन्थ

मनसुख के. मोलिया*

रामचन्द्र पण्डित द्वारा रचित वृत्ताभिराम नामक इस ग्रन्थ का वर्ण्यविषय छन्दःशास्त्र है । इसमें पाँच अध्याय हैं । वृत्ताभिराम की कुल चार पाण्डुलिपियों के आधार पर इस आलेख में इसके पाठ का सम्पादन किया गया है ।

१. पाण्डुलिपियों का विवरण

प्राच्यविद्या मन्दिर, महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, वडोदरा में इस ग्रन्थ की चार पाण्डुलिपियाँ सुरक्षित हैं । इन पाण्डुलिपियों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है ।

(१) क्रमांक ८९०३ (संकेताक्षर -'क' पाण्डुलिपि)

इस पाण्डुलिपि में देवनागरी लिपि में कुल १० पत्र प्राप्त हैं । सामान्यतया पृष्ठ में १२ पंक्तियाँ है । क्वचित् १३ पंक्तियाँ भी मिलती हैं । कुछ पत्रों पर छन्दःशास्त्र के कोष्ठक दिये गये हैं । इन कोष्ठकों के कारण उन पत्रों में ग्रन्थ का लेखन दश से लेकर केवल तीन पंक्तियों में ही हो पाया है । सुवाच्य और स्पष्ट अक्षरों में लिखी गई इस पाण्डुलिपि में जहाँ पाठ्यांश लुप्त हुआ है वहाँ लोपचिह्नांकन (-) किया गया है । कोष्ठक में भी कुछ स्थान रिक्त पाये जाते हैं । और लघु-गुरु के चिह्नांकन में भी एक दो स्थान पर गलत चिह्नों का प्रयोग हुआ है । अन्तिम पत्र में कुछ जगह अवशिष्ट रहने से अन्य ग्रन्थ से कुछ अंश को उद्धृत करके स्थानपूर्ति की गई है । मूल ग्रन्थ के पाठ में संख्यावाचक प्रतीकों का प्रयोग हुआ है । पाण्डुलिपिकार ने कहीं कहीं इन प्रतीकों के साथ अंकों का भी प्रयोग किया है । जैसे,

एवं वसुसप्तत्यायुक् छन्दः शत (१७८) मथो....। ग्रन्थसमाप्ति श्लोक, क्रम ५

शाके रसाब्धिक्ष्माभृद्भूसंमिते (१७४६)....। ग्रन्थसमाप्ति श्लोक, क्रम ६

'स्वाध्याय' - पु. ५६, वर्ष २०१९, पृ. ८५-११५. ISSN 2250-0391

* संस्कृत भवन, सौराष्ट्र विश्वविद्यालय, राजकोट, M: 9687692933, Email: mansukh_moliya@yahoo.com

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(२) क्रमांक १०९४७ (संकेताक्षर - 'ख' पाण्डुलिपि)

इस पाण्डुलिपि में १५ पत्र और देवनागरी लिपि है । अन्तिम पत्र बिलकुल खाली है । इसलिए वास्तव में १४ पत्रों में ग्रन्थ लिखा गया है । यहाँ अध्ययन के लिए स्वीकृत चारों पाण्डुलिपियों में से इसमें अक्षर अधिक स्थूल हैं । कुल मिलाकर २८ पृष्ठों में प्राप्त इस ग्रन्थ में पंक्तियों की संख्या देखे तो १० पृष्ठों में १०, ८ पृष्ठों में १२, ५ पृष्ठों में १३, २ पृष्ठों में ११, २ पृष्ठों में ९ और १ पृष्ठ में ७ पंक्तियाँ मिलती हैं । ऊपर निर्दिष्ट पाण्डुलिपि 'क' से इसका साम्य ध्यानपात्र है । दोनों पाण्डुलिपियाँ किसी एक मूल से लिखी गई प्रतीत होती हैं । दोनों में लोपस्थलों में बिलकुल साम्य है । इसमें भी संख्यावाचक चिह्नों के साथ संख्यादर्शक अंकों का निर्देश हुआ है । जैसे कि स्वर्ग (११), सुगत (२४), इषु (५), नृप (१६) इत्यादि ।

(३) क्रमांक ३०१५२ (संकेताक्षर 'ग' पाण्डुलिपि)

कुल १३ पत्रों में २४ पृष्ठों में इस पाण्डुलिपि में देवनागरी लिपि में अत्यन्त सुवाच्य और मध्यम आकार के अक्षरों में ग्रन्थ मिलता है । इसकी महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि सम्पूर्ण ग्रन्थ में कहीं भी लुप्तांश नहीं है । पाठ की शुद्धि से प्रतीत होता है कि वह मूल ग्रन्थ के स्वहस्तलेख से बिलकुल निकटतम है । प्रत्येक पृष्ठ पर सामान्यतया १२ अक्षर पंक्तियाँ हैं । फिर भी कहीं सात, आठ, नौ, तेरह और चौदह पंक्तियाँ देखी जाती हैं । दूसरी ध्यानाकर्षक विशेषता यह है कि पूरी पाण्डुलिपि में संख्यावाचक प्रतीक के साथ अंकों का प्रयोग कहीं नहीं हुआ है ।

(४) क्रमांक ३०१५३ (संकेताक्षर 'घ' पाण्डुलिपि)

देवनागरी में ही लिखी गई यह पाण्डुलिपि अपूर्ण है । इसमें १ से ७ तक के पत्र मिलते हैं लेकिन बीच में पत्र क्रमांक ४ लुप्त है । इस तरह से कुल मिलाकर छः पत्र ही प्राप्त होते हैं । यहाँ प्रथम अध्याय सम्पूर्ण मिलता है । पत्रांक ४ लुप्त होने से दूसरे अध्याय का अन्त और तीसरे अध्याय का प्रारम्भिक अंश उपलब्ध नहीं हो रहा है । तीसरे अध्याय में बृहती छन्द से लेकर अतिजगती छन्द के कुछ प्रकारों के निरूपण तक का ही पाठ्यांश मिलने से तीसरा अध्याय भी अपूर्ण है । अध्याय चार और पाँच बिलकुल प्राप्त नहीं होते हैं । इसका साम्य उपर्युक्त प्रति 'ग' से देखा जाता है ।

२. ग्रन्थकार का परिचय

वृत्ताभिराम के कर्ता पण्डित रामचन्द्र के पिता का नाम सिद्धेश्वर महाराज था । कोल्हापुर के राजपरिवार ने उनको राजगुरु पद से सम्मानित करके 'गुरुमहाराज' पदवी प्रदान की थी । सिद्धेश्वर के ज्येष्ठ सन्तान होने से पंडित रामचन्द्र भी राजगुरु के स्थान पर नियुक्त हुए थे । कोल्हापुर में ई. स. १८१२ से १८२१ तक शासक रहे छत्रपति शिवाजी राजा या अप्पा साहब ने ग्रन्थकार रामचन्द्र पण्डित को भी राजगुरु के पद पर नियुक्त किया था ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वृत्ताभिराम ग्रन्थ के अन्त में ग्रन्थकार का परिचय मिलता है । इसमें उनकी विद्वत्ता, कुल परिवार और ग्रन्थ के रचनाकाल का निर्देश हुआ है ।

श्रीमान् कृष्णात्रिगोत्रे बुधवरमहितो याजुषो रामसूनु-
र्योगी सिद्धेश्वराख्यः सकलहितकरस्तत्सुतो रामचन्द्रः ।
ग्रन्थो वृत्ताभिरामाभिध इह रचितस्तेन शाके रसाब्धि-
क्ष्माभृद्भूसम्मिते श्रीरघुवरपदयोरर्पितस्तारणेऽब्दे ॥ ग्रन्थसमाप्ति, श्लोक ६

कृष्णात्रि गोत्र में उत्तम विद्वानों द्वारा पूजित, सभी के हितकारक, रामभट्ट के पुत्र, यजुर्वेदी सिद्धेश्वर नामधारी योगी हुए । उनके पुत्र रामचन्द्र थे । उन्होंने वृत्ताभिराम नामक इस ग्रन्थ की रचना की है । शक संवत १७४६ (ई.स. १८२४) में इसकी रचना हुई थी । तारण नामक वर्ष में इसे श्रीरघुपति के चरणों में अर्पित किया गया था।

पण्डित रामचन्द्र के जन्म और समाधि काल के बारे में जानकारी प्राप्त होती है । उनका जन्म वैशाख शुक्ल ६, शक संवत १६९१ (ई.स. १७६९) में हुआ था । उन्होंने वैशाख शुक्ल ४, शक संवत १७५२ (ई.स. १८३९) में समाधि ली थी । इस प्रकार उनकी आयु ७० वर्ष रही है । वृत्ताभिराम की पुष्पिका में वे अपना परिचय इस प्रकार से देते हैं । ''इति श्रीमद्विद्वन्मुकुटालंकारहीरवरश्रीमत्सिद्धेश्वरसूरिसूनुश्रीमद्रामचन्द्रपण्डितविरचितो वृत्ताभिरामनामायं ग्रन्थः समाप्तः ॥''

रामचन्द्र पण्डित ने वृत्ताभिराम के उपरान्त अन्य ग्रन्थों की भी रचना की है । जैसे कि -

(१) ईशावास्यरहस्यवृत्तिः

इस वृत्ति के आरम्भ और अन्त दोनों भागों में रामचन्द्र पण्डित ने अपना निर्देश किया है । पुष्पिका अनुसार वृत्ति का रचनाकाल शक संवत १७३९ है । ई.स. १९०५ में आनन्दाश्रम संस्कृत ग्रन्थावलि क्रमांक ५ में ईशावास्य उपनिषद के कुल मिलाकर सात भाष्य-टीकाओं का प्रकाशन हुआ है । उसमें इस वृत्ति का भी प्रकाशन हुआ है ।

(२) दशोपनिषद्रहस्यम्

इस ग्रन्थ में दश उपनिषदों का सार दश पद्यों में रखा गया है । ग्यारहवे पद्य में उपसंहार किया गया है और बारहवे पद्य में कवि ने अपने बारे में जानकारी दी है । प्राच्यविद्या मन्दिर के पूर्व निदेशक डॉ. मुकुन्द वाडेकर ने इन श्लोको का संपादन किया है । 'उपनिषत्श्री' ग्रन्थ में इसको प्रकाशित किया गया है ।

(३) प्रातिशाख्यज्योत्स्ना

शुक्ल यजुर्वेद की माध्यन्दिन शाखा के वाजसनेयी प्रातिशाख्य की यह टीका है । इसका रचना समय शक संवत १७३९ (ई.स. १८१८) है । इस ग्रन्थ पर पूना युनिवर्सिटी में पीएच.डी. किया गया है । डॉ. जी.यु. थीटे के मार्गदर्शन में श्रीमती सुनन्दा अभ्यंकर ने ई.स. १९८४ में अपने महानिबन्ध में इसका समीक्षित सम्पादन किया है ।

पण्डित रामचन्द्र द्वारा लिखे गये अन्य ग्रन्थों के भी नाम प्राप्त होते हैं । जैसे कि-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(४) बैठ - वैदिक ऋचाओं के संस्मरण के लिए उपयुक्त वेदलक्षण का ग्रन्थ ।

(५) कुण्डेन्दुः - नवग्रहों की पीठ निर्माण करने सम्बन्धित कुण्डलक्षण विषयक ग्रन्थ ।

(६) लीलावती - गणित शास्त्र का ग्रन्थ ।

(७) अधिकरणसङ्ग्रहः - ब्रह्मसूत्रों के अधिकरण पर आधारित वेदान्त का ग्रन्थ ।

(८) श्रीरामलीलासहस्रनाम - वैचित्र्यपूर्ण स्तोत्रकाव्य ।

(९) राममहिम्नस्तोत्रम् - भगवान राम के महिमा का स्तोत्रकाव्य ।

(१०) शयनोत्सवः ।

(११) प्रबोधोत्सवः ।

(१२) भगवद्गीता गीत-अभंग ।

(१३) अष्टावक्रगीता समश्लोकी ।

इन ग्रन्थों के अलावा भी उन्होंने अनेक सुभाषित, आर्या, अभंग, पद, साकी आदि की रचना की है ।

३. ग्रन्थ परिचय

वृत्ताभिराम ग्रन्थ कुल पाँच अध्यायों में विभक्त है । उसके पहले अध्याय में छन्दःशास्त्रीय संज्ञाओं और अन्तिम अध्याय में छन्दःशास्त्रीय प्रत्ययों का निरूपण हुआ है । बीच के तीन अध्यायों में संस्कृत के विविध प्रकार के छन्दों का वर्णन है । दूसरे अध्याय में २४ पद्यों में २४ छन्दों का निरूपण है । यहाँ मात्रिक प्रकार के आर्या, मात्रासमक और मात्राप्रकरण इस प्रकार से कुल तीन प्रभेद के बाद वर्णवृत्त प्रकार के विषम पाद प्रकार के वक्त्र छन्दों को स्थान दिया गया है । अध्याय तीन में वर्णवृत्त प्रकार के उक्ता से लेकर उत्कृति तक के १४० समवृत्तों और तीन दण्डकों को मिलाकर कुल १४३ वृत्तों का निरूपण किया गया है । अध्याय चार में ११ प्रकार के अर्धसमवृत्तों को स्थान दिया गया है ।

वृत्ताभिराम की कुछ विशेषताएँ ध्यानार्ह हैं । जैसे कि -

(१) ग्रन्थ कर्ता ने छन्दों के निरूपण के लिए कहीं भी पिंगलाचार्य प्रयुक्त, अष्टगण म-य-र-स-त-ज-भ-न का प्रयोग नहीं किया है । इन गणों के स्थान पर प्रत्येक गण के लिए तीन अक्षर का एक विशिष्ट प्रयोग किया गया है, जो पिंगलाचार्य ने इन गणों के उदाहरण के लिए प्रयुक्त किया है । अपने छन्दःशास्त्र में आचार्य पिंगल ने अष्ट गण के लिए आठ सूत्र दिये हैं । इन आठ सूत्रों में प्रयुक्त उदाहरण रामचन्द्र पण्डित ने स्वीकार करके वृत्ताभिराम की रचना की है ।

मगण	सर्वगुरु	धीश्रीस्त्री-म्
यगण	आदिलघु	वरासा-य्
रगण	मध्यलघु	कागुहा-र्
सगण	अन्तगुरु	वसुधा-स्
तगण	अन्तलघु	सातेक-त्
जगण	मध्यगुरु	कदास-ज्

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भगण	आदिगुरु	किंवद-भ्
नगण	सर्वलघु	नहस-न्

रामचन्द्र पण्डित ने ऊपर निर्दिष्ट आठ गणों के लिए एकाक्षर संज्ञा के स्थान पर उनके उदाहरण रूप तीन अक्षरों का प्रयोग किया है । अतः जब वे किसी छन्द का लक्षण देते हैं तब उस छन्द में जितने भी अक्षर होते हैं उतने अक्षर लक्षण में भी देखे जाते हैं । पिंगलाचार्य जहाँ य अक्षर का प्रयोग करके लघु-गुरु-गुरु इन तीन अक्षरों का संकेत करते हैं वहाँ रामचन्द्र पण्डित वरासा - इन तीन अक्षरों का प्रयोग करते हैं ।

(२) रामचन्द्र पण्डित द्वारा छन्दों के लक्षण के लिए स्वीकृत यह पद्धति बिलकुल विलक्षण है । वृत्तरत्नाकर और छन्दोमञ्जरी में प्राप्त लक्षण निरूपण पद्धति की तरह यहाँ एक पाद में लक्षण निरूपण सम्भव नहीं है । वृत्त-नाम और यति-निर्देश के लिए अन्य पाद की आवश्यकता रहती है । अतः यहाँ समवृत्त के लिए दो पाद का प्रयोग अनिवार्य हो जाता है । तदनुसार तीसरे अध्याय में समवृत्तो के आलेखन में प्रत्येक वृत्त के लक्षण विधान में दो पाद देखे जाते हैं । अर्धसमवृत्त के लक्षण निरूपण में चार पादों का प्रयोग किया गया है ।

(३) यतिनिर्देश के लिए रामचन्द्र पण्डित ने प्रचलित प्रतीकों का प्रयोग किया है तो कभी संख्यावाचक शब्दों का भी कहीं प्रयोग दृष्टव्य है ।

(४) ग्रन्थ के प्रत्येक अध्यायों में प्रयुक्त पद्यों की संख्या का निर्देश इस ग्रन्थ की विशेषता है । इसी तरह कितने वृत्तों का लक्षण दिया गया है उनकी भी संख्या बताई गई है । इस तरह से स्पष्ट निर्देशों से ग्रन्थ में प्रक्षेप की सम्भावना बिलकुल समाप्त हो जाती है । मूल पाठ में लोप की स्थिति का भी पता चलता है ।

(५) सम्पूर्ण ग्रन्थ में वृत्तों के लक्षण ही हैं । एक भी वृत्त का उदाहरण नहीं है । पूर्व कथनानुसार समवृत्त के लिए दो और अर्धसमवृत्त के लिए चार पाद में लक्षण विधान है । शायद इसलिए उसके उदाहरण की आवश्यकता नहीं रही है । निरूप्यमाण वृत्त का लक्षण ही उदाहरण बन जाता है । ग्रन्थ की रचना का प्रयोजन वृत्तों के लक्षण प्रस्तुत करना ही प्रतीत होता है ।

(६) इस ग्रन्थ की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता उसमें निरूपित कुछ विलक्षण वृत्त हैं । द्वितीय अध्याय में मात्राप्रकरण अन्तर्गत निरूपित विलासिनी, मन्मथतिलक (यति भेद से दूसरा नाम मुक्ताफलमाला) और मन्मथविलसित बिलकुल नये छन्द हैं । तृतीय अध्याय में २२.३ में लक्षित 'सपदिका' वृत्त बहुधा अपरिचित है । मन्दारमरन्दचम्पू में इसे मत्तेभ कहा गया है । सत्ताईस अक्षरों से युक्त सननभनजनसस गणमान युक्त अमृतध्वनि दण्डक अत्यन्त विशिष्ट वृत्त है । वृत्ताभिराम के सिवाय अन्य किसी ग्रन्थ में उसका लक्षण उपलब्ध नहीं है ।

४. मूल संस्कृत ग्रन्थ

४.१ ग्रन्थ का प्रारम्भ

इस आलेख के लिए उपयोग में ली हुई चारों पाण्डुलिपियों में आरम्भ में ग्रन्थ का नाम निर्दिष्ट हुआ है। भारतीय परम्परानुसार ग्रन्थ के प्रारम्भ में विविध देवों को नमस्कार करके मंगलाचरण किया गया है । दो पाण्डुलिपियों में छन्दःशास्त्र के आद्य - प्रवर्तक पिंगलमुनि को भी नमस्कार किया गया है । ग्रन्थ का नाम और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मंगलाचरण के सम्बन्ध में चारों पाण्डुलिपियों में इस प्रकार की स्थिति देखी जाती है ।

(१) 'क' पाण्डुलिपि (क्रमांक ८९०३)

अथ वृत्ताभिरामग्रन्थप्रारम्भो वदले(?) विजयते ॥

इदं पुस्तकं निरन्तरोपाभिधगोविन्दस्यास्ति ॥

श्रीशारदापतये नमः ॥ श्रीपिङ्गलनागाय नमः ॥

(२) 'ख' पाण्डुलिपि (क्रमांक १०९४७)

वृत्ताभिरामः २९

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीपिङ्गलनागप्रसन्न ॥

(३) 'ग' पाण्डुलिपि (क्रमांक ३०१५२)

अथ श्रीबाबामहाराजकृतवृत्ताभिरामप्रारंभः ॥ पत्रें १३ ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥

(४) 'घ' पाण्डुलिपि (क्रमांक ३०१५३)

अथ वृत्ताभिरामप्रारम्भः ॥ श्रीराम ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीरामचन्द्राय नमः ॥ श्रीसिद्धेश्वराय नमः ॥ श्रीकृष्णा नमः ॥

४.२ अध्याय १

इस अध्याय में कुल २५ पद्य हैं । उनमें प्रारम्भिक दो पद्य मात्रा प्रकार के गीति छन्द में निबद्ध हैं और शेष सभी पद्यों में वर्णवृत्त अनुष्टुप् का प्रयोग हुआ है ।

श्रीमत्सीतारमणं सुरनुतचरणं जगत्त्रयीशरणम् ।
प्रणताभीतिवितरणं निरुपमकरणं नमामि भवहरणम् ॥१॥

करुणार्द्रीकृतनयनं सुहसितवदनं स्मरादिरिपुदमनम् ।
दासमनोमलशमनं निजसुखसदनं स्वदैशिकं वन्दे ॥२॥

श्रीपिङ्गलाद्युक्तलक्ष्मछन्दोज्ञानस्य सिद्धये ।
वृत्ताभिरामनामायं ग्रन्थो रामेण रच्यते ॥३॥

छन्दोज्ञानं विना काव्यमुपहासास्पदं भवेत् ।
वृत्तलक्ष्म ततो ज्ञेयं काव्यज्ञै रसिकैः सदा ॥४॥

एकमात्रस्य संज्ञा लोल्लघुर्मात्रेत्यथो लघुः ।
सानुस्वारो विसर्गान्तो युक्ताद्यश्च द्विमात्रकः ॥५॥

स गुरुर्गोगुर्हलन्तोऽन्त्र्यन्तस्थश्च लघुः क्वचित् ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पादादिस्थे तु संयोगे गुरुता न क्वचिल्लघोः[1] ॥६॥

मात्रागणस्तु मात्राणां चतुष्कं स तु पञ्चधा ।
गौ गान्तिमो गमध्यश्च गादिमश्च चतुर्लघुः ॥७॥

सर्वगुरुः	गान्तः	गमध्यः	गादिः	चतुर्लघुः
S S	I I S	I S I	S I I	I I I I

पादो वृत्तचतुर्थांशो गुरुर्वक्रो लघुर्ऋजुः ।
मयौ रसौ तजभना अष्टौ वर्णगणास्त्रिकाः ॥८॥

त्रिगुरुर्मो लादिमो यो मध्यलो रोऽन्तगुस्तु सः ।
लान्तिमस्तो मध्यगो जो गादिर्भस्त्रिलघुस्तु नः ॥९॥

धीश्रीस्त्री मो वरासा यः कागुहा रः कदास जः ।
सातेक्व तः किंवद भो वसुधा सो नहात्स नः ॥१०॥

मगण १	यगण २	रगण ३	सगण ४	तगण ५	जगण ६	भगण ७	नगण ८
S S S	I S S	S I S	I I S	S S I	I S I	S I I	I I I

तदुदाहरणायैतान्यक्षराणि तु पैङ्गले ।
निर्दिष्टानीह तान्येव यद्यत्स्थानस्थितानि च ॥११॥

तत्र तत्रैव तद्वृत्ते ग्रथ्यन्ते बोधसिद्धये ।
छन्दोऽनभिज्ञा अलसास्तदर्थोऽयं मम श्रमः ॥१२॥

मात्राछन्दःसु मात्रैकगणस्यान्यगणस्य या ।
मात्रया यदि युक्ता स्याद्गणभंगः स ईरितः ॥१३॥

यतिर्विरामो भवति तेन वृत्तस्य रम्यता ।
यद्वृत्तं पठने रम्यं नैव तन्नेह कथ्यते ॥१४॥

यतिः समस्तपदयोर्मध्ये चान्ते पदस्य च ।
मिश्राक्षरस्योत्तरत्र क्वचित्पूर्वत्र वा भवेत् ॥१५॥

अतोऽन्यत्र कृता चेत्स्याद्यतिभंगः स भाषितः ।
दोषायैव स पादान्तेऽन्यत्रोदासीन ईरितः ॥१६॥

---

१ ''पूर्वत्रैव यणादेशो एकादेशो परत्र वा ॥६॥'' इस श्लोकार्ध 'ग' पाण्डुलिपि के हाशिये में प्राप्त है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अयुगोजश्च विषमं समं युक् युग्मसंज्ञितम् ।
गुणादिसंज्ञास्त्र्यादीनां ज्ञेया ज्योतिषशास्त्रतः ॥१७॥

मात्राछन्दो गणछन्द इति छन्दो द्विधा स्मृतम् ।
तत्त्रिधा स्यात् समं चार्धसमं विषममित्यपि ॥१८॥

सर्वे पादा यस्य तुल्यास्तत्समवृत्तमीरितम् ।
[२]न पादास्तु दले तुल्ये तदर्धसममुच्यते ॥१९॥

असमा यस्य पादास्तद्विषमं नेह लिख्यते ।
लक्षणानि सलक्ष्याणि यत्या साकं [३]प्रदर्शये ॥२०॥

एकाक्षराङ्घ्रिमारभ्य षड्विंशत्यक्षरावधि ।
एकैकाक्षरवृद्ध्या तु समवृत्तेऽङ्घ्रयः स्मृताः ॥२१॥

उक्तात्युक्ता ततो मध्या प्रतिष्ठा सोः परा च सा ।
गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् च बृहती पंक्तिरप्यथ ॥२२॥

त्रिष्टुप् च जगती चातिजगती शक्वरी तथा ।
अतिशक्वर्यष्टिरथात्यष्टिर्धृतिरतः परा ॥२३॥

सान्या कृतिश्च प्रकृतिराकृतिर्विकृतिस्तथा ।
संस्कृतिश्चाभिकृतिरुत्कृतिरित्यभिधा क्रमात् ॥२४॥

१. उक्ता	२. अत्युक्ता	३. मध्या	४. प्रतिष्ठा	५. सुप्रतिष्ठा	६. गायत्री
७. उष्णिह्	८. अनुष्टुप्	९. बृहती	१०. पंक्ति	११. त्रिष्टुप्	१२. जगती
१३.अतिजगती	१४. शक्वरी	१५.अतिशक्वरी	१६. अष्टि	१७. अत्यष्टि	१८. धृति
१९. अतिधृति	२०. कृति	२१. प्रकृति	२२. आकृति	२३. विकृति	२४.संस्कृति
२५.अभिकृति	२६. उत्कृति				

२ ''न पादलेदास्तु तुल्ये......॥'' पाण्डुलिपि 'ग' में इस प्रकार 'दलेदास्तु' इन चार अक्षरों में वर्णव्यत्यय का उदाहरण मिलता है । यहाँ 'दास्तु' इन दोनों अक्षरों के उपर १ और 'दले' इन दोनों अक्षरों के उपर २ का अंक लिखकर लेखन की क्षति को सुधारा गया है ।

३ पाण्डुलिपि 'ग' और 'घ' में ऊपर निर्दिष्ट 'प्रदर्शये' पाठ है, किन्तु पाण्डुलिपि 'क' में 'प्रदर्श्यते' और 'ख' में 'प्रदर्शयेत्' पाठ है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मात्रावृत्तानि वच्यादौ गणछन्दांस्यतः परम् ।
तत्रादौ समवृत्तानि पश्चादर्धसमानि च ॥२५॥

[४]इति वृत्ताभिरामे परिभाषाध्यायः ॥

४.३ अध्याय २

इस अध्याय में आर्या प्रकरण में ९, मात्रासमक प्रकरण में ७, मात्राप्रकरण में ३ और वक्त्रप्रकरण में ५ मिलाकर कुल २४ पद्य प्राप्त होते हैं । आर्या और उसके पथ्या, चपला, मुखचपला, जघनचपला, गीति, उपगीति और उद्गीति प्रभेदों का निरूपण हुआ है । मात्रासमक के वानवासिका, विश्लोक, उपचित्रा, पादाकुलक और पञ्झरिका प्रभेद लक्षित हुए हैं । मात्राप्रकरण में विलासिनी, मन्मथतिलक और मन्मथविलसित देखे जाते हैं । वक्त्र प्रकार के वृत्तो में पथ्या, विपुला, सैतव विपुला आदि का लक्षणविधान हैं । वक्त्र प्रकार के वृत्तों के बाद 'इति वक्त्रप्रकरणम्' ऐसा कोई निर्देश प्राप्त नहीं है ।

सप्तगणा गुरुसहिता नायुजि जस्तर्कगं नलघु वा जः ।
प्रथमेऽर्धे चरमे लः षष्ठो लक्ष्मैतदार्यायाः ॥१॥

षष्ठे न्ले स्वर्गमिताल्लात् सप्तमके तु सुगतमितलघुतः ।
आद्येन्त्य इषुमितेन्ले नृपमितलघुत इह परमयतिः ॥२॥

द्वादशमात्रासु यदा दलयोराद्यासु दृश्यते चरणः ।
सा पिंगलनागोक्ता पथ्या नाम्नी भवेदार्या ॥३॥

गुरुमध्यगौ यदीयौ कदास चेद्धि द्वितीयतुर्यगणौ ।
सार्या फणीशमुख्यैः समीरिता नामतश्चपला ॥४॥

चपलोक्तलक्ष्मयुक्तं यदीयखण्डं तदादिमं भवति ।
आर्या लक्ष्मयुगपरं फणिनोक्ता सा हि मुखचपला ॥५॥

आर्योक्तलक्षणेन प्रथमं युक्तं यदीयदलमपरं ।
चपलोक्तलक्ष्मयुक् सा फणीशगीता जघनचपला ॥६॥

आर्या प्रथमदलगतं लक्ष्म यदुक्तं तदेव चरमदले ।
यस्याः सा पिंगलमुखवृत्ताभिज्ञैः समीरिता गीतिः ॥७॥

आर्योत्तरखण्डगतं लक्ष्म प्रथमेऽपि भवति यदि ।
अर्धे तस्या नामोपगीतिरिति गदितमहिपतिना ॥८॥

---

४ पाण्डुलिपि 'क' और 'ख' में अध्याय के अन्त में पुष्पिका इस प्रकार से मिलती है । ''इति विद्वन्मुकुटालङ्कारहीरवरश्रीमद्रामचन्द्रपण्डितकृतौ वृत्ताभिरामे पारिभाषिकः प्रथमोऽध्यायः ॥''

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आर्याचरमदलोक्तं लक्ष्म प्रथमे दले यस्याः ।
प्रथमार्धोदितलक्षणयुक् चरमार्धे च सोदितोद्गीतिः ॥९॥

॥ इत्यार्याप्रकरणम् ॥

षोडशमात्राश्चरणे गान्त्यो मात्रासमकं नवमो लश्चेत् ॥१॥

वानवासिका नहसल यस्यामष्टाभ्यो वा कदास सा स्यात् ॥२॥

यत्र तु कदास तुर्यायाः स्युः । यद्वा नहसल विश्लोकोऽसौ ॥३॥

पंचमवसुमितनवमा लघवश्चित्रा फणिपतिगदिता सा स्यात् ॥४॥

उपचित्रा नवमा [५]चेत् परयुक् । साष्टाभ्यो वागोल वरासा ॥५॥

मात्रासमकादिकपंचगतैः । पादैर्घटितं पादाकुलकम् ॥६॥

अन्त्यगयमकं मध्यविरहितं । नवमगु पञ्जरिकाभिधमुदितम् ॥७॥

॥ इति मात्रासमकप्रकरणम् ॥

नहस कागुहा नहस कागुहा कागुहा लोगो नहस कागुहा कागुहा लोगो कागुहा लोगो
नहसन्कागुहा षोडशैकला एवमंध्रिगा दलगता यतिः सा विलासिनी ॥१॥

द्वाविंशतिमितमात्रा अष्टषु मनुषु यतिर्वृत्ताभिज्ञैः प्रोक्तं मन्मथतिलकम् ॥
द्वादशभिर्दशभिश्चेन् मुक्ताफलमाला यतिभेदादिह नामद्वयमेतद्भवति ॥२॥

त्रिंशत्परिमितमात्रा यदि चेत्षोडशभिर्मनुभिर्यत्या ।
पिंगलनागप्रमुखसुधीभिर् मन्मथविलसितमुदितं तत् ॥३॥

॥ इति मात्राप्रकरणम् ॥

अयुक् तुर्याद्वरासा स्युर्युक् तुरीयात् कदास तु ।
सर्वे चाद्यान्नसौ नैतत्पथ्यावक्त्रं युजोर्नरः ॥१॥

अयुक् तुर्यात् कागुहा स्युः सप्तमो लश्च युग्मयोः ।
विपुला युग्मादिका सा तथा रविपुलापि च ॥२॥

पदोस्तुर्यात्किंवद चेत्प्रोक्ता भविपुला युजोः ॥३॥

तुरीयतो नहस चेत् सोक्ता नविपुलौजयोः ॥४॥

---

५ पाण्डुलिपि 'ख' में यहाँ सुधार करके 'चेत्स्यात्' पाठ दिया गया है । इस तरह से एकाक्षर की वृद्धि हो गई है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इमे द्वे युग्मविपुले सैतवस्य मतेन तु ।
सर्वेषां युग्मविपुला युजोर्लः सप्तमो यदि ॥५॥

॥ इति द्वितीयोऽध्यायः ॥

४.४ अध्याय ३

इस अध्याय में १४३ पद्यों में १४३ समवृत्तों के लक्षण दिये गये हैं ।

उक्तायां ॥१॥ गः । श्रीः ॥१॥

अत्युक्तायाम् ॥२॥ गोगः । सा स्त्री ॥२॥

मध्यायाम् ॥३॥ धीश्रीस्त्री । सा नारी ॥३॥

प्रतिष्ठायाम् ॥४॥ धीश्रीस्त्री गः । सोक्ता कन्या ॥४॥

सुप्रतिष्ठायाम् ॥५॥ किंवद गो गः । साक्षरपङ्क्तिः ॥५॥

गायत्र्याम् ॥६॥

धीश्रीस्त्री धीश्रीस्त्री । विद्युल्लेखा सोक्ता ॥१॥

कागुहा कागुहा । स्रग्विणी सा मता ॥२॥

वरासा वरासा । तदा सोमराजिः ॥३॥

नहस वरासा । शशिवदना स्यात् ॥४॥

सा ते क्व वरासा । सा स्यात्तनुमध्या ॥५॥

उष्णिहि ॥७॥

धीश्रीस्त्री वसुधा गः । प्रोक्ता सा मदलेखा ॥१॥

कदास वसुधा गः । कुमारललिता सा ॥२॥

अनुष्टुभि ॥८॥

किंवद किंवद गो गः । चित्रपदा दलयत्या ॥१॥

धीश्रीस्त्री धीश्रीस्त्री गो गश् । चार्धे यत्या विद्युन्माला ॥२॥

किंवद सातेक्व लगौ । माणवकाक्रीडितकम् ॥३॥

कागुहा कदा स गोलः । सा समानिका भवेत्तु ॥४॥

कदास कागुहा लगौ । प्रमाणिका बुधोदिता ॥५॥

बृहत्याम् ॥९॥

किंवद धीश्रीस्त्री वसुधा । तन्मणिमध्यं बाणयुगैः ॥१॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

किंवद धीश्रीस्त्री धीश्रीस्त्री । पंचयुगैस्तत्प्रोक्तं वक्त्रम् ॥२॥

धीश्रीस्त्री किंवद वसुधा । सिंहाक्रान्ता जलधिशरैः ॥३॥

कागुहा कागुहा कागुहा । विद्वदुक्ता महालक्ष्मिका ॥४॥

पंक्तौ ॥१०॥

धीश्रीस्त्री वसुधा कदास गः । प्रोक्तं शुद्धविराट् रसैर्युगैः ॥१॥

धीश्रीस्त्री किंवद नहस गो । हंसी वेदैर्ऋतुभिरुदिता ॥२॥

कागुहा कदास कागुहा गो । गैर्युगैर्मयूरसारिणी सा ॥३॥

किंवद धीश्रीस्त्री वसुधा गो । रुक्मवती सा स्याद्दलयत्या ॥४॥

धीश्रीस्त्री किंवद वसुधा गो । मत्ता ज्ञेयाम्बुधिरसयत्या ॥५॥

किंवद किंवद किंवद गः । शास्त्रयुगैः किल चित्रगतिः ॥६॥

धीश्रीस्त्री वसुधा वसुधा गो । बाणैश्चेषुभिरुद्धतमेतत् ॥७॥

सातेक्व वरासा किंवद गो । बाणैरिषुभिर्यत्या सुषमा ॥८॥

धीश्रीस्त्री नहस वरासा गो । यत्यार्धे हि पणवः प्रोक्तः ॥९॥

नहस कदास वरासा गो । विपुलभुजा दलयत्या सा ॥१०॥

किंवद सातेक्व नहस ग । श्चार्धयतिः सा मृगचपला ॥११॥

त्रिष्टुभि ॥११॥

धीश्रीस्त्री वसुधा कदास गो गः । स्कान्दास्यैर्विशिखैस्तदेकरूपम् ॥१॥

सातेक्व सातेक्व कदास गो गः । स्यादिन्द्रवज्रा शरशास्त्रयत्या ॥२॥

कदास सातेक्व कदास गो गः । उपेन्द्रवज्रा विशिखैर्गुहास्यैः ॥३॥

पूर्वद्वयोदीरितचिह्नयुक्ता । यदीयपादाः किल सोपजातिः ॥४॥

किंवद किंवद किंवद गो गो । दोधकमीरितमागमबाणैः ॥५॥

धीश्रीस्त्री सातेक्व सातेक्व गो गः । शालिन्युक्ता वेदशैलैस्तु यत्या ॥६॥

कागुहा नहस कागुहा लगौ । सप्तवेदविरती रथोद्धता ॥७॥

कागुहा नहस किंवद गो गः । स्वागतेह यतिरम्बुधिशैलैः ॥८॥

कागुहा कदास कागुहा लगौ । श्येनिका रसैश्च पञ्चभिर्यतिः ॥९॥

किंवद सातेक्व नहस गो गो । मौक्तिकमालेन्द्रियरसयत्या ॥१०॥

धीश्रीस्त्री किंवद नहस लगौ । वेदैः शैलैर्भ्रमरविलसितम् ॥११॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

किंवद सातेक्व नहस गो लः । सान्द्रपदं तद्विशिखरसैस्तु ॥१२॥

सातेक्व कदास कदास लगौ । बाणैर्ऋतुभिः किल मोटनकम् ॥१३॥

नहस वरासा नहस लगौ । कमलदलाक्षी रसविशिखैः ॥१४॥

वसुधा धीश्रीस्त्री नहस लगौ । इषुभिः शास्त्रैः सा किल विमला ॥१५॥

नहस कदास कदास लगौ । विशिखरसैर्गदिता सुमुखी ॥१६॥

जगत्याम् ॥१२॥

कदास सातेक्व कदास कागुहा । यतिस्तु वंशस्थमिदं शराद्रिभिः ॥१॥

सातेक्व सातेक्व कदास कागुहा । स्यादिन्द्रवंशा विशिखैरथाद्रिभिः ॥२॥

एतदूद्वयोदीरितपादे संयुताप्यहीशमुख्यैरुपजातिरीरिता ॥३॥

किंवद सातेक्व नहस वसुधा । बाणमहीध्रैर्यतिरिह ललना ॥४॥

किंवद किंवद किंवद किंवद । मोदकमीरितमर्धयतिर्यदि ॥५॥

नहस किंवद किंवद कागुहा । द्रुतविलम्बितमम्बुधिभिर्गजैः ॥६॥

वसुधा वसुधा वसुधा वसुधा । खलु तोटकमत्र यतिर्दलगा ॥७॥

कदास वसुधा कदास वसुधा । दले यदि यतिर्जलोद्धतगतिः ॥८॥

वरासा वरासा वरासा वरासा । भुजंगप्रयातं दले चेद्यतिः स्यात् ॥९॥

कागुहा कागुहा कागुहा कागुहा । चार्धगा चेद्यतिः सा भवेत्स्रग्विणी ॥१०॥

नहस वरासा नहस वरासा । दलगयतिः स्यात्कुसुमविचित्रा ॥११॥

कदास कागुहा कदास कागुहा । रसैर्गुहाननैस्तु पञ्चचामरम् ॥१२॥

कदास कदास कदास कदास । महीध्रशरैः किल मौक्तिकदाम ॥१३॥

सातेक्व किंवद कदास कागुहा । धीरोदिता हि ललिता गजैर्युगैः ॥१४॥

सातेक्व वरासा सातेक्व वरासा । प्रोक्ता मणिमाला प्राज्ञैर्दलयत्या ॥१५॥

वसुधा कदास वसुधा वसुधा । प्रमिताक्षरा शरनगैरुदिता ॥१६॥

नहस कदास कदास कागुहा । शरमुनिभिर्यतिरत्र मालती ॥१७॥

नहस कदास कदास वरासा । अभिवनतामरसं शरशैलैः ॥१८॥

नहस नहस किंवद कागुहा । यदि हि मुनिशरैर्यतिरुज्जवला ॥१९॥

धीश्रीस्त्री किंवद वसुधा धीश्रीस्त्री । वार्ध्यष्टाभिर्जलधरमाला यत्या ॥२०॥

धीश्रीस्त्री धीश्रीस्त्री वरासा वरासा । बाणैर्भूमिध्रैश्चेद्यतिर्वैश्वदेवी ॥२१॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नहस नहस वसुधा वसुधा । दलगविरतिरुदितं ललितम् ॥२२॥

नहस नहस कागुहा कागुहा । दलगतयतिरत्र गौरी भवेत् ॥२३॥

अनेकवृत्तांघ्रिविमिश्रणेनापि । विद्वदुक्ता उपजातयो पराः ॥२४॥

अतिजगत्याम् ॥१३॥

धीश्रीस्त्री सातेक्व वरासा वसुधा गो ।
यत्या वेदैः स्यान्नवभिर्मत्तमयूरम् ॥१३.१॥

नहस नहस वसुधा वसुधा गो ।
वसुशरणयतिरुदिता कमलाक्षी ॥१३.२॥

कदास किंवद वसुधा कदास गः ।
श्रुतिग्रहैरतिरुचिरा बुधोदिता ॥१३.३॥

नहस नहस सातेक्व सातेक्व गो ।
मुनिगुहवदनैरीरिता स्यात्क्षमा ॥१३.४॥

वसुधा कदास वसुधा कदास गो ।
विशिखैर्गजैर्भवति मञ्जुभाषिणी ॥१३.५॥

धीश्रीस्त्री [६]नहस कदास कागुहा गो ।
नागोक्ता गुणदशभिः प्रहर्षिणी सा ॥१३.६॥

किंवद किंवद किंवद किंवद गः ।
स्यान्मुनिभिश्च रसैर्यतिरंगरुचिः ॥१३.७॥

सातेक्व किंवद वसुधा कदास गो ।
[७]लक्ष्मीर्युगांकयति ॥१३.८॥ रथादिलामृतम् ॥१३.९॥

नहस कदास नहस वसुधा गो ।

---

६ इससे आगे का पाठ्यांश पाण्डुलिपि 'घ' में उपलब्ध नहीं है ।

७ अतिजगती प्रकार के कुल १० वृत्तों का निरूपण हुआ है । इसलिए क्रम ८ और ९ की भिन्न गिनती आवश्यक हो जाती है । इस प्रकार से ही १० वृत्तों की संख्या सिद्ध होती है । पन्द्रह अक्षर का शशिकला वृत्त यतिभेद से स्रक् और मणिगुणनिकर होता है । फिर भी इन तीनों को एक ही पद्य में रखा गया है । तदनुसार यहाँ एक ही पद्य माना जाय तो एक पद्य की कमी रह जाती है । इसलिए दो प्रकार की सम्भावना की जा सकती है । (१) क्रम ९ पर रहा मूल पद्य लुप्त हुआ हो या (२) ऊपर निर्दिष्ट की तरह एक ही श्लोक में दो वृत्तों के निरूपण से उसे ८ और ९ क्रमांक दिया गया हो ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मदललिता मुनिरसयतिरुक्ता ॥१३.१०॥

शक्वर्याम् ॥१४॥

नहस नहस नहस नहस गो गो ।
यदि वसुरसयतिरिदमुपचित्रम् ॥१४.१॥

नहस कदास किंवद कदास लगौ ।
मणिकटकं शरैर्नवभिरत्र यतिः ॥१४.२॥

नहस कागुहा नहस कागुहा लगौ ।
बुधवरेरितं रसगजैः सुकेसरम् ॥१४.३॥

नहस नहस किंवद नहस लगौ ।
दलयतिरुदिता प्रहरणकलिता ॥१४.४॥

सातेक्व किंवद कदास कदास गोगः ।
प्रोक्ता वसन्ततिलकागजशास्त्रयत्या ॥
उद्धर्षिणीयमुदिता किल सैतवेन ।
सिंहोन्नतेति गदिता मुनिकाश्यपेन ॥१४.५॥

वसुधा कदास वसुधा वरासा लगौ ।
वसुधेति तद्भवति बाणखेटैर्यतिः ॥१४.६॥

किंवद नहस नहस नहस लगौ ।
चक्रमिति दलयतिगदितमहिना ॥१४.७॥

नहस नहस सातेक्व सातेक्व गोगो ।
नगमुनिगयतिः स्यात्स उक्तो वसन्तः ॥१४.८॥

धीश्रीस्त्री कागुहा सातेक्व सातेक्व गोगः ।
शैलैरश्वैर्यतिश्च विद्वदुक्ता हि लक्ष्मीः ॥१४.९॥

अतिशक्वर्याम् ॥१५॥

नहस नहस नहस नहस वसुधा ।
बुधवरगदितमिदमिह शशिकला ॥
स्रगिति भवति यदि रसनवगयतिर्
वसुनगयतिरिह मणिगुणनिकरः ॥१५.१॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नहस नहस धीश्रीस्त्री वरासा वरासा ।
विबुधवरसमुक्ता मालिनी नागशैलैः ॥१५.२॥

नहस कदास किंवद कदास कागुहा ।
मुनिवसुभिस्तदीरितमिह प्रभद्रकम् ॥१५.३॥

वसुधा वसुधा वसुधा वसुधा वसुधा ।
भ्रमरावलिरष्टभिरद्रिभिरत्र यतिः ॥१५.४॥

धीश्रीस्त्री धीश्रीस्त्री धीश्रीस्त्री धीश्रीस्त्री धीश्रीस्त्री ।
कामक्रीडा संज्ञं छन्दोऽष्टाभिः शैलैर्यत्या स्यात् ॥१५.५॥

कागुहा कदास कागुहा कदास कागुहा ।
नागसप्तभिर्यतिः प्रभाषितं हि तूणकम् ॥१५.६॥

अष्ट्याम् ॥१६॥

किंवद किंवद किंवद किंवद किंवद गः ।
संगतमद्रिखगैर्यदि तत्फणिना गदितम् ॥१६.१॥

नहस नहस नहस नहस नहस लः ।
दलगयतियुतमिदमचलधृतिरिति ॥१६.२॥

धीश्रीस्त्री धीश्रीस्त्री धीश्रीस्त्री धीश्रीस्त्री धीश्रीस्त्री गश् ।
चाष्टाभिर्नागैर्यत्या सा छन्दोविद्भिः कामुक्युक्ता ॥१६.३॥

कदास कागुहा कदास कागुहा कदास गो ।
दले यतिर्यदीरितं बुधैस्तु पंचचामरम् ॥१६.४॥

कागुहा कदास कागुहा कदास कागुहा गश् ।
चित्रनाम पंक्तिभी रसैर्यतिस्तदीरितं स्यात् ॥१६.५॥

अत्यष्ट्याम् ॥१७॥

कदास वसुधा कदास वसुधा वरासा लगौ ।
वसुग्रहमितैर्यतिर्भवति साह पृथ्वी मता ॥१७.१॥

नहस वसुधा धीश्रीस्त्री कागुहा वसुधा लगौ ।
यतिरिह गुहास्यैर्वेदैरद्रिभिर्हरिणी भवेत् ॥१७.२॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वरासा धीश्रीस्त्री नहस वसुधा किंवद लगौ ।
रसै रुद्रैर्यत्या फणिपगदिता सा शिखरिणी ॥१७.३॥

धीश्रीस्त्री किंवद नहस सातेक्व सातेक्व गो गो ।
मन्दाक्रान्ता भवति निगमैरागमैः सप्तभिः सा ॥१७.४॥

नहस वसुधा कदास वसुधा वरासा लगौ ।
द्विरदनवभिर्यतिः समुदितः स मालाधरः ॥१७.५॥

नहस कदास किंवद कदास कदास लगौ ।
यतिरिह चेन्नगैश्च दशभिः खलु नर्कुटकम् ॥
नगगुहवक्त्रवार्धियतिचेत्किल कोकिलकम् ।
इह यतिभेदतो भवति नाम युगं गदितम् ॥१७.६॥

धृत्याम् ॥१८॥

धीश्रीस्त्री सातेक्व नहस वरासा वरासा वरासा ।
बाणर्त्वश्वैश्चेत् कुसुमितलतावेल्लिता विद्वदुक्ता ॥१८.१॥

धीश्रीस्त्री किंवद नहस वरासा वरासा वरासा ।
विद्वद्वर्यैर्निगममुनिनगैः कीर्तिता चन्द्रलेखा ॥१८.२॥

नहस नहस कागुहा कागुहा कागुहा कागुहा ।
इह खगनवभिर्यतिश्चेद्भवेत्सा महामालिका ॥१८.३॥

किंवद किंवद किंवद किंवद किंवद वसुधा ।
स्कन्दमुखैस्त्रिषुश्चाश्वगतिर्विबुधैः किल गदिता ॥१८.४॥

वरासा वरासा वरासा वरासा वरासा वरासा ।
गुहास्यैस्त्रिषु स्याद्यतिः कीर्तितं तद्भवेच्चन्द्रमाख्यम् ॥१८.५॥

धीश्रीस्त्री धीश्रीस्त्री किंवद धीश्रीस्त्री वसुधा धीश्रीस्त्री ।
खेटैरङ्कैर्यत्या सा किल संप्रोक्ता फणिना मञ्जीरा ॥१८.६॥

कागुहा वसुधा कदास कदास किंवद कागुहा ।
वाष्टपंक्तिभिर्विशिखैः शरैः यतिरुज्ज्वलम् ॥१८.७॥

वसुधा नहस कदास नहस किंवद वसुधा ।
इषुभिस्त्रिषु दहनैश्चरमयतिः खलु सुरभिः ॥१८.८॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अतिधृत्याम् ॥१९॥

धीश्रीस्त्री वसुधा कदास वसुधा सातेक्व सातेक्व गो
मार्तण्डे मुनिभिर्यतिस्तदुदितं शार्दूलविक्रीडितम् ॥१९.१॥

नहस नहस नहस नहस नहस नहस गो गो ।
वसुमृडयति खलु विबुधगदितमिह धवलम् ॥१९.२॥

वरासा धीश्रीस्त्री नहस वसुधा कागुहा कागुहा गो ।
रसैस्तर्कैः शैलैर्यतिरिह तु सा मेघविस्फूर्जिता स्यात् ॥१९.३॥

नहस नहस कागुहा कदास कदास कागुहा कदास गो ।
यतिरिह ऋतुभिर्गुहाननैर्नगैः स पंचचामरः ॥१९.४॥

कृत्याम् ॥२०॥

कागुहा कदास कागुहा कदास कागुहा कदास गो लः ।
वृत्तनामकं हि तद्रसैस्तथागमैर्गजैः प्रभाषितं हि ॥२०.१॥

किंवद किंवद किंवद किंवद कागुहा वसुदा लगौ ।
स्कन्दमुखैश्च रसैर्द्विरदैर्यतिरीरितं खलु नन्दकम् ॥२०.२॥

वसुधा कदास कदास किंवद कागुहा वसुधा लगौ ।
यतिरर्धकेऽत्र समीरिता विबुधोत्तमैः खलु गीतिका ॥२०.३॥

प्रकृत्याम् ॥२१॥

धीश्रीस्त्री कागुहा किंवद नहस वरासा वरासा वरासा ।
स्यात् त्रिगोत्रेषु यत्या फणिवरगदिता स्रग्धरा सा प्रसिद्धा ॥२१.१॥

नहस कदास किंवद कदास कदास कदास कागुहा ।
यतिरिह शंकरैश्च दशभि फणिना खलु सिद्धिरीरिता ॥२१.२॥

आकृत्याम् ॥२२॥

वसुधा सातेक्व सातेक्व नहस वसुधा कागुहा कागुहा गो ।
वसुभिः शैलैः महीध्रैर्यतिरिह विबुधोक्ता महास्रग्धरा स्यात् ॥२२.१॥

किंवद किंवद किंवद किंवद किंवद किंवद किंवद गः ।
स्कन्दमुखागमपंक्तिभिरत्र यतिर्विबुधैर्गदिता मदिरा ॥२२.२॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

[८] सातेक्व किंवद वरासा कदास वसुधा कागुहा नसह गः ।
नागेशमुख्यबुधसंप्रोक्तमद्रिमुनिनागैर्यतिः सपदिका ॥२२.३॥

विकृत्याम् ॥२३॥

नहस कदास किंवद कदास किंवद कदास किंवद लगौ ।
यतिरिह शूलिभिश्च रविभिः फणीशगदितं तदश्वललितम् ॥२३.१॥

सातेक्व कदास कदास कदास कदास कदास कदास लगौ ।
यत्या विशिखैर्ऋतुभिश्च गुहालपनैश्च रसैरिह शंख इति ॥२३.२॥

नहस कदास कदास कदास कदास कदास कदास लगौ ।
भवति यतिर्गिरिशै रविभिः फणिना गदिता किल हंसगतिः ॥२३.३॥

संस्कृत्याम् ॥२४॥

किंवद किंवद किंवद किंवद किंवद किंवद किंवद किंवद ।
द्वादशभिर्यतिरर्कमितैश्च सुभद्रमिदं फणिना कथितं किल ॥२४.१॥

वसुधा वसुधा वसुधा वसुधा वसुधा वसुधा वसुधा वसुधा ।
मिहिरै रविभिर्यतिरत्र तदा विबुधैर्गदिता खलु सोर्मिलिका ॥२४.२॥

किंवद किंवद किंवद सातेक्व नहस नहस नहस वसुधा ।
[९]तर्कशरैर्यदि विश्वमितैश्च द्रुतलघुपदगतिरिह [१०]गदिता ॥२४.३॥

किंवद सातेक्व नहस वसुधा किंवद किंवद नहस वरासा ।
भूतनगद्वादशभिरिह यतिः सा प्रथिता प्रभवति भुवि तन्वी ॥२४.४॥

अभिकृत्याम् ॥२५॥

---

८ पाण्डुलिपि 'ग' में इस श्लोक को आकृति प्रकार के दो वृत्तों के बाद लिखने की चूक हो गई है। बाद में उसी पृष्ठ की सब से अन्तिम पंक्ति के रूप में इस पद्य को जोडा गया है। इसके कारण इस पृष्ठ की १३ पंक्ति हो गई है। मन्दारमरन्दचम्पू में इस वृत्त को 'मत्तेभ' कहा गया है।

९ ये चार अक्षर पाण्डुलिपि 'क' और 'ख' में लुप्त हुए है और उनके स्थान पर चार बार लोपदर्शक चिह्न (-) किया गया है।

१० पाण्डुलिपि 'क' और 'ख' में 'गदिता' से पूर्व में दो अक्षर 'किल' अधिक मिलते हैं। छन्द के वर्ण स्वरूप के अनुसार ये दो अक्षर यहाँ उपयुक्त नहीं है। अतः प्रक्षिप्त हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नहस नहस नहस नहस वसुधा किंवद किंवद किंवद गो ।
द्विरदतुरगदशयतिरिह कथितो हंसलयो विबुधैः किल सः ॥२५.१॥

सातेक्व वरासा किंवद किंवद नहस नहस नहस नहस गः ।
स्यात्हंसपदा सा प्राज्ञवरैर्दशवसुनगयतिरिह किल भणिता ॥२५.२॥

किंवद धीश्रीस्त्री वसुधा किंवद नहस नहस नहस नहस गः ।
क्रौञ्चपदा स्यात् सेन्द्रियबाणाष्टनगविरतिरिह फणिपतिकथिता ॥२५.३॥

उत्कृत्याम् ॥२६॥

धीश्रीस्त्री धीश्रीस्त्री सातेक्व नहस नहस नहस कागुहा वसुधा लगौ ।
तत्प्राज्ञैरष्टाभी रुद्रैर्मुनिभिरिह विरतिरुदितं भुजंगविजृम्भितम् ॥२६.१॥

नहस कदास किंवद कदास कदास कदास किंवद कदास लगौ ।
फणिपतिमुख्यविद्वदुदितो मुनिभिर्मिहिरैर्यतिः स हि सुधाकलशः ॥२६.२॥

[११]नहस नहस कागुहा कागुहा कागुहा कागुहा कागुहा कागुहा कागुहा ।
फणिपतिभणितस्तु नक्षत्रसंख्याक्षरश्चण्डवृष्टिप्रयाताभिधो दण्डकः ॥२७.१॥

प्रचित इतरगणैर्यादिभिः सप्तिभिश्चेत् कृतो नागनाथोदितो नद्वयात्स्यात् ।
अधिकगणविवृद्ध्यापि नानाभिधाना विभावन(?)रीत्यापि नानाविधाः स्युःकिल ॥२७.२॥

[१२]वसुधा नहस नहस किंवद नहस कदास नहस वसुधा वसुधा ।
अमृतध्वनिरिति कविभिर्निगदितमिह खेटशिखरिनग वेदयतिः ॥२७.३॥

॥ इति तृतीयोऽध्यायः ॥

४.५ अध्याय ४

इस अध्याय में ११ पद्यो में ११ अर्धसमवृत्तों का निरूपण हुआ है ।

वसुधा वसुधा वसुधा लगौ किंवद किंवद किंवद गो गः ।
ऋतुभिर्विशिखैर्निगमैर्नगैश्चेद्यतिरीरितमित्युपचित्रम् ॥१॥

---

११ इससे पूर्व उत्कृति प्रकार के वृत्तों का निरूपण पूर्ण हुआ है और यहाँ से दण्डक वृत्तों का आरम्भ होता है । पाण्डुलिपि 'ग' में उत्कृति वृत्तों की समाप्ति के बाद ''॥ छ ॥ छ ॥'' प्राप्त होता है और बाद में दण्डक का प्रारम्भ होता है । पाण्डुलिपि 'क' और 'ख' में इस प्रकार का कोई निर्देश नहीं है ।

१२ पाण्डुलिपि 'ग' में यह पद्य हाशिये में लिखा हुआ है । 'सननभनजनसस' गणों से युक्त यह वृत्त बिलकुल नया है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

किंवद किंवद किंवद गो गो नहस कदास कदास वरासा ।
अम्बुधिभिर्मुनिभिर्विशिखैश्चेद्यतिरचलैश्च तदा द्रुतमध्या ॥२॥

वसुधा वसुधा वसुधा लगौ नहस किंवद किंवद कागुहा ।
ऋतुभिर्विशिखैः श्रुतिभिर्यतिर्वसुभिरत्र मता हरिणप्लुता ॥३॥

वसुधा वसुधा कदास गो वसुधा किंवद कागुहा लगौ ।
ऋतुभिः श्रुतिभिश्च सागरैरिह शैलैरुदिता प्रबोधिता ॥४॥

वसुधा वसुधा वसुधा गः किंवद किंवद किंवद गो गः ।
अनलैरचलैर्ऋतुभिश्चेत् वेगवती यतिरत्र च बाणैः ॥५॥

सातेक्व कदास कागुहा गो धीश्रीस्त्री वसुधा कदास गो गः ।
बाणैरिषुभिर्गुहाननैश्चेत् बाणैर्भद्रविराट् सुधीभिरुक्ता ॥६॥

सातेक्व सातेक्व कदास गो गः कदास सातेक कदास गो गः ।
आख्यानकी सा फणिना प्रदिष्टा शरैर्गुहास्यैर्विशिखैश्च शास्त्रैः ॥७॥

कदास सातेक्व कदास गो गः सातेक्व सातेक्व कदास गो गः ।
शरैश्च शास्त्रैरिषुभिर्गुहास्यैराख्यानकी सा विपरीतपूर्वा ॥८॥

नहस नहस कागुहा लगौ नहस कदास कदास कागुहा ।
यतिरिह मुनिभिर्युगैः शरैस्तदपरवक्त्रमुदीरितं नगैः ॥९॥

नहस नहस कागुहा वरासा नहस कदास कदास कागुहा गः ।
इह यतिरचलैः शरैर्गजैश्चेदिषुभिरहीशमता तु पुष्पिताग्रा ॥१०॥

वसुधा वसुधा कदास गो गो वसुधा किंवद कागुहा वरासा ।
ऋतुभिर्विशिखैर्युगैर्गजैश्चेद् विबुधोक्ता हि वसन्तमालिका ॥११॥

॥ इति चतुर्थोऽध्यायः ॥

४.६ अध्याय ५

इस अध्याय में ३४ पद्य हैं और यहाँ छन्दःशास्त्रीय प्रत्ययों प्रस्तार, नष्ट, उद्दिष्ट, सर्वैकादिगलक्रिया, संख्या, अध्वा, मेरु, मर्कटी आदि का विशद निरूपण हुआ है । प्रत्येक प्रत्यय का कोष्ठक देकर उसका सचित्र प्रस्तुतीकरण अत्यन्त आकर्षक है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इति शतकं वृत्तानां [१३]गजसप्ततिवृत्तसंयुतं प्रोक्तम् ।
अन्यग्रन्थस्थानि प्रस्तारान्तर्गतानि [१४]वृत्तानि ॥१॥

वैतालीयकपदचतुरूर्ध्वादीन्यपि च विषमचरणानि ।
विषमार्धानि च गाथा लिखितानि मया न रम्यतो [१५]तानि(?) ॥२॥

वृत्तार्णैर्वृत्तला हीनाः शेषा गा गैर्विना तु लाः ।
ला लैर्हीनाः शेषदलमिता गाश्छन्दसि स्मृताः ॥३॥

प्रस्तारो नष्टमथो दिष्टं चैकादिसंख्यगलभेदाः ।
संख्याध्वयोग इति ते वृत्तज्ञानस्य हेतवः षट् स्युः ॥४॥

वृत्ते [१६]सर्वगुरङ्किर्लेख्यः पङ्क्त्यादिगादधस्तु लघुः ।
पश्चादुपरिसदृक्स्यात्प्रागूने गः पुनः पुनश्चैवम् ॥५॥

यावत्सर्वलघुः स्यात्प्रस्तारोऽयं लघु क्रमाद्वा स्यात् ।
[१७]ह्याद्यास्तत्तद्विगुणा उक्तादिसमप्रभेदसंख्या स्यात् ॥६॥

---

१३ पाण्डुलिपि 'क' और 'ख' में 'गज' शब्द का लोप है और दो लुप्तचिह्न किये गये हैं ।
१४ पाण्डुलिपि 'क' में 'वृत्तानि' शब्द की द्विरुक्ति हुई है ।
१५ तीनों पाण्डुलिपियों में यहाँ नानि पाठ मिलता है । निरूप्यमाण विषयवस्तु के आधार पर यहाँ 'तानि' पाठ की सम्भावना है । अतः ऊपर प्रश्नार्थ के साथ उसका संकेत किया है ।
१६ पाण्डुलिपि 'क' और 'ख' में 'सर्वङ्किर्लेख्यः' पाठ मिलता है । अतः यहां 'गुर' ये दो अक्षर लुप्त हैं।
१७ पाण्डुलिपि 'क' और 'ख' में 'आद्यास्तात्तद्' पाठ है । यहाँ 'अधस्तात्' पाठ की सम्भावना है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गुरुक्रमेण प्रस्तारः				[18]लघुक्रमेण प्रस्तारः				
S	S	S	S	I	I	I	I	१
I	S	S	S	S	I	I	I	२
S	I	S	S	I	S	I	I	३
I	I	S	S	S	S	I	I	४
S	S	I	S	I	I	S	I	५
I	S	I	S	S	I	S	I	६
S	I	I	S	I	S	S	I	७
I	I	I	S	S	S	S	I	८
S	S	S	I	I	I	I	S	९
I	S	S	I	S	I	I	S	१०
S	I	S	I	I	S	I	S	११
I	I	S	I	S	S	I	S	१२
S	S	I	I	I	I	S	S	१३
I	S	I	I	S	I	S	S	१४
S	I	I	I	I	S	S	S	१५
I	I	I	I	S	S	S	S	१६

तत्संख्यापूर्त्यवधि लिखेद्गलानुत्तराधरत्वेन ।
[19]आद्यालावेकैकं तत्तद्द्विगुणान्क्रमेण तत्पश्चात् ॥७॥

---

१८ पाण्डुलिपि 'क' में लघुक्रम के प्रस्तार में क्रमांक ६ से ११ तक के कुल छः कोष्टक रिक्त हैं ।

१९ यहाँ 'आद्यग्लावेकैकम्' पाठ शुद्ध होने की सम्भावना है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

[20]सप्तम आर्यास्थवर्णप्रस्तारः			
S	S	S	१
I	S	S	२
S	I	S	३
I	I	S	४
S	S	I	५
I	S	I	६
S	I	I	७
I	I	I	८

[21]औत्तराधर्येण वर्णप्रस्तारक्रमः							
S	I	S	I	S	I	S	I
S	S	I	I	S	S	I	I
S	S	S	S	I	I	I	I

पादार्णमित्यवधि वा प्रस्तारो वैपरीत्यतो वायम् ।
उपयुक्तो ज्ञाने स्याल्लोके सर्वाणि सन्ति नैतानि ॥८॥

अथ नष्टविवेकः ॥

नष्टममुकसंख्यं यत्प्रस्तारे कीदृशं तदिति पृष्टे ।
सा संख्या विषमा चेत्गुर्युक् चेल्लघुरयुक् तदा चैकम् ॥९॥

मिश्रं कृत्वा तद्दलमसमं युक् चेत्तु पूर्ववल्लेख्यम् ।
एवं भूयो वृत्ताक्षरसंख्या पूर्त्यवधि तन्नष्टम् ॥१०॥

इति नष्टं चतुर्वणप्रस्तारे द्रष्टव्यम्	
चतुर्वणप्रस्तारे नष्टं वृ. ५ तत्संख्या वि. गु	S
असमा एकमिश्रणेन ६, अर्धं ३, वि.गु	S
पुनः एकमिश्रणेन ४, तदर्धं २, समं, ल	I
तदर्धं १, सा संख्या विष. अतो गुरुः	S

२० पाण्डुलिपि 'क' में ''इस प्रस्तार का निर्देश सप्तम आर्या के अनुसार है ।'' ऐसा उल्लेख नहीं मिलता है ।

२१ पाण्डुलिपि 'क' में पाँचवे प्रस्तार 'गुरु-गुरु-लघु' के स्थान पर गलती से 'लघु-गुरु-गुरु' है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अथोद्दिष्टविचारः ॥

उद्दिष्टं प्रस्तारे किं सङ्ख्यं वृत्तमेतदिति पृष्टे ।
तस्मिन्नाद्यादुपरि द्विगुणानङ्कान् समा ह्यवधि विलिखेत् ॥११॥

लघुगा ये तत्राङ्का मिश्राः सैकास्तु भवति तत्संख्या ।
उद्दिष्टाङ्कसमूहः सैकः [२२]प्रस्तारनिचयसंख्या स्यात् ॥१२॥

उद्दिष्टं वृत्तं चतुर्वर्णं प्रस्तारे अत्र ल	१ २ ४ ८
लघुस्थाङ्काः ॥१॥२॥ मिश्रिताः ३ एक युक्तः ४	I I S S
तत्सङ्ख्यं वृत्तं प्रस्तारे द्रष्टव्यम् ॥	
उद्दिष्टाङ्काः सर्वमिश्रणे १५ सैकाः १६	
सा सर्वप्रस्तारसङ्ख्या	

एकैकाङ्कान् [२३]सैकान् संलिख्यौत्तराधर्यतोऽथ ।
ऊर्ध्वस्थेऽङ्केऽधस्थमङ्कं विमिश्रमन्त्यं त्यक्त्वा कुर्वथान्त्यं त्यजाङ्कम् ॥१३॥

भूयः कुर्याद्यावदङ्कद्वयस्य शेषोऽथोर्ध्वाधस्थितौ तौ समग्लौ ।
[२४]ऊर्ध्वादिकद्व्यादिगाः खल्वधस्तो भेदा एकद्व्यादिलाश्छन्दसः स्युः ॥१४॥ छ

पादे वर्णाश्चत्वारः एकमिश्रणेन ५, तत्प्रमाणाः एकाङ्का ऊर्ध्वसेकैकं त्यक्त्वा अधस्थस्योपरि उपरिमिश्रणेन पञ्चल्पःतच्छीर्षागाङ्काः ऊर्ध्वाधः क्रमेण सर्वैकादिगलवोधकाः सर्वेषामेकीकरणे प्रस्तारसंख्या १६ ॥	१					सर्वगुरु
	१	४				एकगुरु
	१	३	६			द्विगुरु
	१	२	३	४		त्रिगुरु
	१	१	१	१	१	सर्वलघु

तेषां संख्यैकीकृता सर्वसंख्या स्यात् सा द्विघ्नैकोनिताध्वा स उक्तः ।
प्रस्तारं ग्ला अङ्गुलौ लेखनीया अन्यप्रस्तारस्य मध्येऽङ्गुलिः स्यात् ॥१५॥छ

---

२२ पाण्डुलिपि 'क' और 'ख' में 'प्रस्तारनिचये संख्या' पाठ है ।

२३ पाण्डुलिपि 'ग' में यहाँ 'वृत्तपादार्णमानान्' पाठ अधिक है ।
पाण्डुलिपि 'क' - एकैकाङ्काङ्न् सैकान् संलिख्यौत्तरार्धर्यतोऽथम् ।
पाण्डुलिपि 'ख' - एकैकाङ्कनन् सैकान् संलिख्यौत्तरार्धयतोऽथम् ।

२४ पाण्डुलिपि 'ग' में प्राप्त अधिक अंश - यावदेवमङ्कद्वयस्य यावच्छेषोधरमूर्ध्वं च हित्वा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चतुर्मात्राप्रस्तारः		अध्वा	
		S S	
S S	१	S S	
I I S	२		
I S I	३	I I	
S I I	४		
I I I I	५	I I	

अथ मात्राप्रस्तारादि ॥

[२५]सर्वगुरङ्घ्रिर्लेख्यस्तत्राद्याद्गादधो लघुः पश्चात् ।
ऊर्ध्ववदूने प्राग्लो द्वौ चेद्गः श्चेत्त्रयस्तु गोः [२६]प्राग्लः ॥१६॥ (पाठभेद प्राग्लाः)

युगयुक्ष्वेवं यावत्सर्वं लघुः स्यादयं हि मात्राणां प्रस्तारः स्यात् ॥छ॥
अथ तन्मात्राः संलिख्य चरणगास्तु पृथक् ॥१७॥

मात्राप्रस्तारः	
S S S	१
I I S S	२
I S I S	३
S I I S	४
I I I I S	५
I S S I	६
I S I S	७
S I S I	८
I I I S I	९
S S I I S	१०
I S I I I	११
S I I I I	१२
I I I I I I	१३

२५ ''सर्वङ्घ्रिलेख्य...।'' पाण्डुलिपि क में यहाँ 'गु', 'र्', और 'रु' - तीन वर्णों का लोप है ।
''सर्वरंङ्घ्रिर्लेख्य...।'' पाण्डुलिपि 'ख' में यहाँ 'गु' अक्षर लुप्त है ।

२६ पाण्डुलिपि 'क' और 'ख' में यहाँ 'प्राग्लाः' पाठ है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तदुपर्येकद्वित्रीनग्रे प्राग् द्वितयमिश्रितानङ्कान् ।
अन्त्याङ्के प्रश्नाङ्कं विलोप्य तत्पूर्वगानङ्कान् ॥१८॥

सम्भवतो [27]लुप्ताङ्काधस्थो लः परलपुक् स गो लेख्यः ।
तन्मात्रानष्टं स्यादुद्दिष्टं तद्विलिख्य पूर्वाङ्कान् ॥१९॥

षण्मात्रा प्रस्तारे चतुर्थं वृत्तं नष्टम्	१ २ ३ ५ ८ १३
तन्मात्रावृत्तप्रस्तारसङ्ख्या १३	। । । । । ।
तत्र पृष्टाङ्क ४, लोपेन ९,	२ ३ ५ १३
तत्र अन्त्याङ्कापूर्वं ८, [28]तत्पूर्वं १, उभयोर्लोपे	। । । । । ।
लुप्ताङ्काधस्तलघुः परमिश्रणेन गुरुः।[29]	S । । S

मात्रोपरि गोरुपरि तु तत्प्रथमाया अधस्तदितरस्याः ।
अन्त्यो गुरूपरिस्थैर्वियुतः शेषस्तु भवति तत्संख्या ॥२०॥

षण्मात्रा प्रस्तारे इदं वृत्तं किंसङ्ख्यमिति पृष्टे	१ ३ ५ ८
वृत्तान्त्याङ्कः १३ गुरुपरिस्थाः ८/१ मिलित्वा	S । । S
९, तद्रहितं ४ तत्सङ्ख्यं वृत्तं प्रस्तारे द्रष्टव्यम्	२ १३

एकाद्यङ्कैराद्यार्द्विगुणैर्द्याद्यैर्द्वितीयका तुर्या ।
पंक्तिद्वयगैरङ्कैरन्योन्यघ्नैश्च पंचमीषष्ठ्यौ ॥२१॥

तुर्याधाङ्कैस्त्रिमिता तु [30]चतुःपञ्चालिमिश्रणादङ्कैः ।
षट्पंक्तिमयी जातिप्रभेदमात्रार्णगल-विबोधकरी ॥२२॥

समवृत्तेषु फणिपमुखवृत्तर्ज्ञैर्वर्णमर्कटी कथिता ।

---

२७ पाण्डुलिपि 'क' और 'ख' में इस शब्द में स्थित चौथा अक्षर 'ध' लुप्त है । एक लुप्तांश चिह्न (-) भी है ।

२८ 'क' और 'ख' पाण्डुलिपि में यहाँ ''तत्त्वपूर्व १'' - इस तरह से पाठदोष है ।

२९ पाण्डुलिपि 'क' में समाप्तिवाचक ''इति मात्रानष्टः ॥'' का प्रयोग हुआ है और 'ख' पाण्डुलिपि में 'छ' अक्षर का प्रयोग मिलता है ।

३० पाण्डुलिपि 'क' और 'ख' में ''पञ्चपालि.....।'' पाठ है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वर्णमर्कटी	उक्ता	अत्युक्ता	मध्या	प्रतिष्ठा	सुप्रतिष्ठा	गायत्री	उष्णिह्	अनुष्टुप्	बृहती	पंक्ति
जाति	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
भेद	२	४	८	१६	३२	६४	१२८	२५६	५१२	१०२४
मात्रा	३	१२	३६	९६	२४०	५७६	१३४	३७२	६९१२	१५३६०
वर्ण	२	८	२४	६४	१६०	३८४	८९६	२४८	४६०८	१०२४०
गुरु	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८	१२४	२३०४	५१२०
लघु	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८	१२४	२३०४	५१२०

उक्ताद्युत्कृत्यवधि द्व्यादीन्यैकैकवृद्धकोष्ठानि ॥२३॥

तेष्वाद्यन्त्ये चैकं मध्येषु शिरस्थकोष्ठयुगलगतम् ।
अङ्कद्वन्द्वमिश्रं कृत्वाधस्थेऽङ्कमेव लिखेत् ॥२४॥

अनुलोमविलोमाभ्यां सर्वैकादिग्लभेदसंख्येयम् ।
वृत्ताभिज्ञैरेवं प्रोक्तः समवृत्तवर्णमेरुरयम् ॥२५॥

[31]वर्णमेरुरयम्												
उक्ता	१	१	२									
अत्युक्ता	१	२	१	४								
मध्या	१	३	३	१	८							
प्रतिष्ठा	१	४	६	४	१	१६						
सुप्रति.	१	५	१०	१०	५	१	३२					
गायत्री	१	६	१५	२०	१५	६	१	६४				
उष्णिह्	१	७	२१	३५	३५	२१	७	१	१२८			
अनुष्टुप्	१	८	२८	५६	७०	५६	२८	८	१	२५६		
बृहती	१	९	३६	८४	१२६	१२६	८४	३६	९	१	५१२	
पंक्तौ	१	१०	४५	१२०	२१०	२५२	२१०	१२०	४५	१०	१	१०२४

---

३१ पाण्डुलिपि 'क' - वर्णखण्डमेरुः ॥ श्रीः ॥
पाण्डुलिपि 'ख' - वर्णमेरुखं.म

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

[32]एकाद्यङ्कैः प्रथमा मात्रोद्दिष्टाङ्कपूरिता ह्यपरा ।
त्र्याल्या एकेनाद्यं द्विमितं तदुपरिगतद्भुवाङ्केन ॥२६॥

[33]स्वप्राक्स्थ-स्वशिरस्थ-स्वांकभवैरग्रिमाणि कोष्ठानि।
प्रथमं मुक्त्वान्त्योनत्रिमिता प्रथमादिगाङ्कयुक्तुर्या॥२७॥

त्रिचतुश्श्रेणिगताङ्कोन्मिश्रणरचिता तु पंचमी पंक्तिः।
मिश्रैः शरचतुरालिस्थाङ्कैः पष्ठीह तर्कपङ्क्तिमयी॥२८॥

स्याज्जातिभेदलघुगाक्षरमात्रा प्रत्ययप्रदा कथिता ।
मात्रामर्क्ट्येवं मात्राछंदःसु वृत्तशास्त्रज्ञैः ॥२९॥

मात्रामर्कटी										
जाति	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
भेद	१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५	८९
लघु	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५	४२०
गुरु	०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५
अक्षर	१	३	७	१५	३०	५८	१०९	२०१	३६५	६५५
मात्रा	१	४	९	२०	४०	७८	१४७	२७२	४९५	८९०

द्व्यादीनां कोष्ठानां द्वे द्वे पंक्ती समास्पदे कृत्वा ।
आद्येष्वेक-द्व्-येक-त्र्येकादीनेकमेव चान्त्येषु ॥३०॥

ऊर्ध्वालिः स्वसकोष्ठा चेत् स्वशिरस्थं तदूर्ध्वदक्षस्थम् ॥
एकं कृत्वाधस्तनकोष्ठेष्वङ्कान-तुल्यकोष्ठे चेत् ॥३१॥

वामोर्ध्वगतद्विकोर्ध्वग-मिश्राङ्कानधस्तनेषु लिखेत् ।
वामे बाह्ये द्व्यादीन् मात्रानष्टस्थितान्यस्त्वेतान् ॥३२॥

द्व्यादितः प्रभेदाः सर्वलघुश्चैकगुरुमुखागुरुः ।
सर्वगुरन्त्ये मात्राद्वयगुरु चरणादिवृत्तसङ्ख्या ॥३३॥

---

३२. मातृकालिपि 'क' - एका............आल्या............द्विमि एकेनाद्यमितंतदुपरितद्भुवाङ्केन ॥२६॥
मातृकालिपि 'ख' - एका............आल्या............द्विमि एकेनाद्यमितंतदुपरितद्भुवाङ्केन ॥२६॥
(८ अक्षर और ९ अक्षरों का लोप)
३३. मातृकालिपि 'ख' - स्वाङ्कभवैरग्रिमाणि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मात्रामेरुरयम्

२	१	१	२						
३	२	१	३						
४	१	३	१	५					
५	३	४	१	८					
६	१	६	५	१	१३				
७	४	१०	६	१	२१				
८	१	१०	१५	७	१	३४			
९	५	२०	२१	८	१	५५			
१०	१	१५	३५	२८	९	१	८९		
११	६	३५	५६	३६	१०	१	१४४		
१२	१	२१	७०	८४	४५	११	१	२३३	
१३	७	५६	१२६	१२०	५५	१२	१	३७७	
१४	१	२८	१२६	२१०	१६५	६६	१३	१	६१०
१५	८	८४	२५२	३३०	२२०	७८	१४	१	९८७

मात्रामेरुरयं स्यान्मात्राछन्दःसु कोविदैरुदितः ।

इति वृत्तबोधहेतुः प्रस्तारादि क्रिया मया गदिता ॥३४॥

इति पंचमोऽध्यायः ॥

प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ	पञ्चम	परिभाषा	आर्या	मात्रावृत्त	मात्रा	वक्त	उक्ता	अत्यु	मध्या
२६	२४	१४१	११	३४	२५	९	७	३	५	१	१	१
प्रतिष्ठा	सुप्रति.	गायत्री	उष्णिह्	अनु.	बृहती	पंक्ति	त्रिष्टुम्	जगती	अतिज.	शकरी	अ.शक	अष्टि
१	१	५	२	५	४	११	१६	२४	१०	९	६	५
अत्यष्टि	धृति	अतिधृ.	कृति	प्रकृति	आकृति	विकृति	संस्कृति	अभिकृ.	उत्कृति	दण्डक	अर्धसम	
६	८	४	३	२	३	३	४	३	२	३	११	

४.७ ग्रन्थ समाप्ति

पञ्चाध्यायनिबन्धोऽयं तस्मिन्नादिने तु परिभाषा ।

मात्राछन्दो वक्त्रं द्वितीयके गुणमिते तु समवृत्तम् ॥१॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अर्धसमं तुर्ये स्यात् प्रस्तारादिक्रिया तु [34]पञ्चमके ।
परिभाषा तत्त्वमितार्याणां नव च सप्त लघुसमके ॥२॥

लक्षणान्यानि त्रीणि वक्त्रे पञ्च क्रमादयोऽलाघे ।
एकैकमाद्यपञ्चसु पञ्चैव द्वे च पञ्च चत्वारि ॥३॥

रुद्रा भूपा कुक्षा दश नव षट् पञ्च षट् गजा वेदाः ।
त्रीणि द्वे त्रयमन्त्याः वृत्तपञ्चांश्यधिनी त्रयं रुद्राः ॥४॥

एवं वसु सप्तत्यधुक् छन्दःशतमथो चतुर्स्त्रिंशत् ।
अन्त्या मिलिता संख्याऽस्मिन् सर्वत्रिंशदधिकशतयुगलम् ॥५॥

श्रीमान् कृष्णात्रिगोत्रे बुधजनमहितो वासुदेवो रामसूनु-
र्योगीसिद्धेश्वराख्यः सकलहितकलानन्दनो रामचन्द्रः ।
ग्रन्थं वृत्ताभिरामाभिध इह रचितवान् प्राक्षे स्वाब्धि-
नागेन्दुसम्मिते श्रीयुतमन्मथनामसंवत्सरेऽब्दे" [35] ॥६॥

इति श्रीमत्सिद्धेश्वरकुलोत्पन्नवासुदेवात्मजश्रीरामचन्द्रपण्डितविरचितो "वृत्ताभिरामनामायं ग्रन्थः समाप्तः ॥"[36]

//////

---

34. पाण्डुलिपि 'क' और 'ख' दोनों में 'पञ्चके' मिलता है ।
35. पाण्डुलिपि 'क' में 'तारकेऽब्दे' और 'ख' में 'तारब्दे' पाठान्तर है ।
36. पाण्डुलिपि 'क' और 'ख' - वृत्ताभिरामनामा ग्रन्थः समाप्तिमगमत् ॥
37. ग्रन्थ के अन्त में विविध प्रकार से देवताओं को नमन किया गया है ।

पाण्डुलिपि 'क' - श्रीर्जयतुतराम् ॥

पाण्डुलिपि 'ख' - श्रीमद्भवानीसिद्धेश्वरौ जयतः ॥ श्री ॥ छ ॥ म ॥ राम ॥

पाण्डुलिपि 'ग' - श्रीसीतारामचन्द्रौ जयतितराम् ॥ श्रीमहालक्ष्म्यै ॥ श्रीगुरवे ॥ श्रीसरस्वत्यै नमः कुर्मः ॥ छ छ छ छ छ छ छ छ छ छ ॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

શ્રીસયાજી સાહિત્યમાળા

		રૂા. પૈ.
૩૫૧	ગુજરાતનો પૉટરી ઉદ્યોગ – શ્રી શાંતિલાલ પી. પુરોહિત (૧૯૭૫)	૯.૦૦
૩૫૨	ઊંડાણનો તાગ – શ્રી છોટુભાઈ સુથાર (૧૯૭૫)	૧૫.૦૦
૩૫૩	ભારતીય વીણા – (સ્વ.) પ્રો. રસિકલાલ એમ. પંડ્યા (૧૯૭૮)	૩૧.૦૦
૩૫૪	ચરકનો સ્વાધ્યાય, ભાગ ૨ – (સ્વ.) બાપાલાલ ગ. વૈદ્ય (૧૯૭૯)	૯૬.૦૦
૩૫૫	ચાંપાનેર : એક અધ્યયન – પ્રો. રમણલાલ ના. મહેતા (૧૯૭૯)	૩૬.૦૦
૩૫૬	દ્વારકાના પ્રદેશનો સાંસ્કૃતિક ઇતિહાસ – (સ્વ.) શ્રી ક. ન. જોષી (૧૯૭૯)	૪૪.૦૦
૩૫૭	આધુનિક ગુજરાતના સંતો, ભાગ ૨ – ડૉ. કેશવલાલ ઠક્કર (૧૯૭૯)	૪૫.૦૦
૩૫૮	સૂર્યશક્તિ – શ્રી પદ્મકાન્ત ર. શાહ (૧૯૮૧)	૫૩.૦૦
૩૫૯	કવિ ગિરધર : જીવન અને કવન – ડૉ. દેવદત્ત જોશી (૧૯૮૨)	૫૧.૦૦
૩૬૦	વનૌષધિ-કોશ – અધ્યા. કે. કા. શાસ્ત્રી (૧૯૮૨)	૩૬.૦૦
૩૬૧	સહસ્રલિંગ અને રુદ્રમહાલય – (સ્વ.) શ્રી કનૈયાલાલ ભા. દવે (૧૯૮૩)	૭૯.૦૦
૩૬૨	વૈષ્ણવતીર્થ ડાકોર – (સ્વ.) ડૉ. મંજુલાલ ર. મજમુદાર (૧૯૮૪)	૪૮.૦૦
૩૬૧	વૃદ્ધત્રયી અને લઘુત્રયી – (સ્વ.) બાપાલાલ ગ. શાહ (૧૯૮૪)	૩૩.૦૦
૩૬૩	વડોદરા : એક અધ્યયન – પ્રો. રમણલાલ નાગરજી મહેતા (૧૯૮૭)	૪૪.૦૦
૩૬૪	મહારાજા સયાજીરાવ ત્રીજા – (સ્વ.) પ્રો. હસિત હ. બૂચ (૧૯૮૮)	૪૯.૦૦
૩૬૫	નાભાજીકૃત ભક્તમાલના ઐતિહાસિક ભક્તો – એક અધ્યયન – શ્રી મૂલશંકર હી. કેવલિયા (૧૯૮૮)	૪૪.૦૦
૩૬૬	લેસર (પરમતેજ) – શ્રી પદ્મકાન્ત ર. શાહ (૧૯૯૦)	૪૮.૦૦
૩૬૮	અર્વાચીન સંસ્કૃત સાહિત્યનો ઇતિહાસ – (અનુ.) એ. જે. રાવલ અને વી. એસ. લેલે	૧૮૮.૦૦
૩૬૯	મંજુલવિમર્શ – શ્રી જે. પી. ઠાકર (૧૯૯૨)	૨૩૬.૦૦
૩૭૦	પ્રાણવહસ્રોતોના રોગો : શ્વાસ-દમ – વૈદ્ય મણિભાઈ બ્રહ્મભટ્ટ (૧૯૯૫)	૧૭૬.૦૦
૩૭૧	વડોદરાનાં મંદિરો – કુ. મંજુલા એમ. સોની (૧૯૯૫)	૬૮.૦૦
૩૧૭	આહારવિજ્ઞાન – (પુનઃમુદ્રણ) ડૉ. જયશંકર ધ. પાઠક અને (સ્વ.) અનંતરાય મ. રાવળ (૧૯૯૦)	૬૦.૦૦
૩૭૨	ભવાઈ : સ્વરૂપ અને લક્ષણો – કૃષ્ણકાંત ઓ. કડકિયા (૧૯૯૬)	૧૯૩.૦૦
૩૭૩	શ્રીમદ્ ઉપેન્દ્રાચાર્યજી – ડો. લવકુમાર મ. દેસાઈ (૧૯૯૬)	૧૯૫.૦૦
૩૭૪	નાભાજીકૃત ભક્તમાલના ઐતિહાસિક ભક્તો – એક અધ્યયન, ભાગ ૨ – શ્રી મૂલશંકર હી. કેવલિયા (૧૯૯૮)	૧૦૬.૦૦
૩૭૫	ભવાઈ : ભક્તિ, રસ અને આહાર્ય – કૃષ્ણકાંત ઓ. કડકિયા (૨૦૦૩)	૧૩૫.૦૦
૩૭૬	પ્લેટોના કેટલાક સંવાદો – હરસિદ્ધ એમ. જોશી (૨૦૦૪)	૧૯૦.૦૦
૩૭૭	કેવલજ્ઞાન સંપ્રદાય : સિદ્ધાંત અને સાહિત્ય – બહેચરભાઈ પટેલ (૨૦૦૫)	૨૨૫.૦૦
૩૭૮	વિદુરનીતિનું વિષયપરિશીલન – ડૉ. અંબાલાલ દ. ઠાકર (૨૦૦૭)	૧૧૫.૦૦
૩૭૯	સ્વાધ્યાય-સૂચિ (પુસ્તક ૧-૨૫) – જયંત ઉમરેઠિયા (૨૦૦૭)	૨૧૫.૦૦
૩૮૦	મહાભારતનો યુદ્ધકાળ – વસંત અ. ગોડબોલે (૨૦૧૧)	૧૪૦.૦૦
૨૮૩ / ૨૮૪	વડોદરા નરેશ શ્રીમંત સયાજીરાવ ગાયકવાડ (ત્રીજા) – ચિમનલાલ મગનલાલ ડોકટર, બીજી આવૃત્તિ (૨૦૧૪)	૫૮૫.૦૦
૩૮૧	મહાભારતનાં ગૂઢ રહસ્યો – અનુ. વિજયા લેલે (૨૦૧૬)	૪૩૦.૦૦
૩૮૨	સ્વાધ્યાય-સૂચિ (પુસ્તક ૨૬-૫૦) – જયંત ઉમરેઠિયા (૨૦૧૮)	૧૯૦.૦૦

પ્રાપ્તિસ્થાન : યુનિવર્સિટી પુસ્તકવેચાણ વિભાગ
પ્રો. સી.સી. મહેતા ઓડિટોરિયમ નજીક, જનરલ એજ્યુકેશન સેન્ટર સામે
ડી.એન. હોલ ક્રિકેટ ગ્રાઉન્ડ સામે, પ્રતાપગંજ, વડોદરા – ૩૯૦ ૦૦૨; ફોન નં. : ૦૨૬૫-૨૭૮૧૭૦૦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कवि इच्छाराम शास्त्री विरचित 'तरणिवाक्कुसुमाञ्जलिः' - एक अप्रकाशित संस्कृत लघुकाव्य

रवीन्द्रकुमार पण्डा*

प्रस्तुत आलेख में एक अप्रकाशित संस्कृत लघुकाव्य की उपलब्ध केवल एक ही पाण्डुलिपि की सहायता से संपादन करने का प्रयास किया गया है । कवि इच्छाराम शास्त्री द्वारा विरचित 'तरणिवाक्कुसुमाञ्जलि' की पाण्डुलिपि गुजरात के बडौदा के प्राच्यविद्या मंदिर में क्रमांक २८५२७ से संगृहीत है । उसके पाँच पत्र, ७५ ग्रंथसंख्या और २८.५ x ११ cms परिमाण है । मूलरूप से इसकी पाण्डुलिपि पूना के 'भारत इतिहास संशोधन मण्डल' (क्रमांक ८६.८१) से प्रतिलिपि स्वरूप में प्राप्त की गई थी । इस ग्रंथ के रचनाकाल या लेखनकाल की कोई जानकारी हमें प्राप्त नहीं होती है । *New Catalogus Catalogorum* में भी इस ग्रंथ या इसके कर्ता के विषय में जानकारी उपलब्ध नहीं है । ग्रंथकार अपनी वंशावली बताते हुए काव्य के अंत में लिखते हैं -

साहुनृपतिबहुमान्यो गोकुलतनयः सुखानन्दः ।
तदनुजवल्लभरामात्म (जे)च्छारामेण मिहिरमग्रहृदा ॥६४॥

इनके पिता का नाम वल्लभराम, पितामह का नाम सुखानंद, प्रपितामह का नाम गोकुल था । इस परिवार का संबंध साहु नृपति से रहा होगा ऐसा इस श्लोक से जाना जा सकता है । इस काव्य में ६५ श्लोक हैं । यह लघु स्तुतिकाव्य है । भगवान सूर्य के प्रति कवि की भावपूर्ण अभिव्यक्ति ही इस काव्य का विषय है । मयूर के सूर्यशतक और आदित्यहृदयस्तोत्र जैसे काव्य हमें संस्कृत साहित्य में उपलब्ध होते हैं । उसी परंपरा में प्रस्तुत काव्य भी एक विशिष्ट और रमणीय रचना है । इसके सभी पद्य आर्या छन्द में रचे गये हैं । आर्या के समुचित प्रयोग के कारण काव्य मधुर और मनोरम लगता है । बहुत सारे अप्रचलित रमणीय शब्दों का और समस्त पदों का प्रयोग कवि ने किया है । रूपक अलंकार का स्वाभाविक प्रयोग भी काव्य की शोभा बढाता है ।

काव्य के कुछ प्रारंभिक पद्य जो मन को आह्लादित कर देते हैं उन्हे देखते हैं -

अरुणकमलासनस्थं त्रिनयनवेदत्रयाकृतिं हस्तैः।
दानाभये सरोजे दधतं वन्देऽहमर्कमरुणाभम् ॥१॥

'स्वाध्याय' - पु. ५६, वर्ष २०१९, पृ. ११७-१२२. ISSN 2250-0391

* संस्कृत, पालि एवं प्राकृत विभाग, कलासंकाय, महाराजासयाजीराव विश्वविद्यालय, बडौदा-३९० ००२,

M: 9974262038, Email: panda_rabindra@rediffmail.com

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

केयूरकटककुण्डलहारविभूषाविभूषणोत्तंसम् (?)।
उदयाचलचूडामणिमनिशं धामैव वेदि किमपि परम् ॥२॥
हित्वा चरणाम्भोजं भोजं भोजं ह विषयविषवल्लिम् ।
माद्यन् मनोमिलिन्दस्त्वयात्र पोमेज(?) किमुपेक्ष्यः ॥३॥

कवि का शब्दविन्यास और वैदर्भी शैली काव्य के सौन्दर्य को बढाता है-

त्रिभुवनपाल महेश म्लायति ते बालबकुलोऽसौ ।
कामदवानलदग्धः करुणाऽमृतसेचने कथं कठिनः ? ॥१६॥

लिपिकार का लेखन अधिकतर स्पष्ट है फिर भी कुछ जगह पर अस्पष्टता पाई जाती है । कुछ पद्यो में अशुद्धि भी है । कहीं भी अवग्रह का उपयोग नहीं हुआ है और श्लोक के अंत में अनुस्वार ही रखा हुआ है । इस ग्रंथ की केवल एक ही पाण्डुलिपि होने के कारण कुछ पाठों को संतोषपूर्णरूप से शुद्ध कर नहीं पाये हैं । जहाँ जहाँ संदेहजनक पाठ है वहाँ यथामति शुद्ध पाठ देने का प्रयास किया गया है और कहीं कहीं प्रश्नवाचक चिह्न रखा गया है । इस तरह केवल एक ही पाण्डुलिपि के आधार पर इस काव्य का संपादन और प्रकाशन कर उसका संरक्षण करने का एक प्रयास किया गया है । आशा रखता हूं कि यह प्रयास फलदायी होगा ।

तरणिवाक्कुसुमाञ्जलिः

श्री गणेशाय नमः

अरुणकमलासनस्थ त्रिनयनवेदहत्रयाकृतिं हस्तैः।
दानाभये सरोजे दधतं वन्देऽहमर्कमरुणाभम् ॥१॥
केयूरकटककुण्डलहारविभूषाविभूषणोत्तंसम् (?)।
उदयाचलचूडामणिमनिशं धामैव वेद्मि किमपि परम् ॥२॥
हित्वा चरणाम्भोजं भोजं भोजं ह विषयविषवल्लिम् ।
माद्यन मनोमिलिन्दस्त्वयात्र पोमेज (?) किमुपेक्ष्यः ॥३॥
विषकन्दलौ तरुण्याः कुचौ विजानन्तावमृतकुम्भौ ।
धूर्णं(धूर्ण)स्तत्र निमग्नः पूर्णं परिमन्यमान एव स्वम् ॥४॥
परिणामदुःखसाधनमखिलं सुखसा (ध) नत्वेन ।
गृह्णन् परापवादं परनिन्दां परविमत्सरं कुर्वन् ॥५॥
मदमत्ययं त्वदन्यैरवार्यमाप्ते मनोमिलिन्दे मे ।
यदि हौदासिन्यं ते गदहन्तृत्वं तवैव हतम् ॥६॥
संसारसाखिशाखामृग्यामेहा मनोवृत्त्या ।
कामातिशीतशान्त्यै त्वत्स्मृतिवह्निर्न कामकाकिन्यः ॥७॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

त्रातो मयूरमुख्यो जातो यशसः समुद्रेकः ।
किमतः प्रयोजनं ते स्वयशःसंकोचनिर्भीक! ॥८॥
यद्यतिपापिष्ठोऽहं तथापि ते नाथ नोपेक्ष्यः ।
मात्रोदरपतितः किं सर्पः परिपाल्यते नैव ॥९॥
मोहान्धतमसबहुतरपरिभृत् परसुन्दरीदयाम् ।
मय्याशक्ते कौशिकबुध्याकरुणोऽसि किमिव नेन्द्रेहा ॥१०॥
त्वमदीनोऽहं दीनस्तवं सर्वज्ञोऽप्यहं तु किञ्चिदज्ञः ।
त्वं शक्तोऽहमशक्तः कथमुभयोः शोभनाऽऽजर्य्यम् ॥११॥
त्वदुपेक्षितं त्वनाथं वदति जने मा न लज्जसे नाथ ।
उचितं का गुणचिन्ता वेदान्ते निर्गुणे गीते ॥१२॥
पापशग(ठ)दुत्पन्ना मन्मतिजायैव तेन विहरन्ती ।
आशापाशं दत्वा भवकूपे क्षिपति पाहि दीनप्रभाम् ॥१३॥
करुणागौरवरहितं लिप्सा लघुमल्पमनिशं माम् ।
अल्पोऽपि विषयवायुर्भ्रमयति बहुतूलमलसोऽसि ॥१४॥
त्वद्भक्तिसारशून्यं विषयमरुद् भ्रामितं कृपाचन्द्र! ।
करुणाकटाक्षकिरणस्तृणमिव किं मां विहाय विस्फुरति ? ॥१५॥
त्रिभुवनपाल महेश म्लायति ते बालबकुलोऽसौ ।
कामदवानलदग्धः करुणाऽमृतसेचने कथं कठिनः ? ॥१६॥
तृदमो(त्वद्धामो) त्कलिकाकुलितान् काममहानक्रकवलितान् तनयान् ।
संसारसागरे मन्म(मनोम) ग्नाद्भीतः कथं सहस्रकर! ॥१७॥
विश्वम्भर त्वदाज्ञोल्लङ्घिनमवमाङ्गले पतितम् ।
पाययति न पयोधरमम्बाकुटिलं शिशुं गले लग्नम् ॥१८॥
दिशि दिशि सरस्सरसीरुहेषु कृपया करः कथं स्फुरित ?।
दीनदयालय तव मम शिरोम्बुजे नास्वतन्त्रस्य ॥१९॥
गुणगुर्वीत्वन्माया नवरसमय मां नटं भुवनरङ्गे ।
नर्तयति त्वत्पुरतस्तुष्यसि नानेकजन्मभूमिकया ॥२०॥
बलिपदवीं न न तु सुधाप्रभुत्वमैन्द्रं पदं न याचेऽहम् ।
करुणाकटाक्षलेशं शेषे भवतः कथं निमीलितदृक् ॥२१॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रागद्वेषारण्यककण्डकरीयतिजनितपङ्कजम् ।
संशोष्य मानसं मे सरः कथं पूर्यते न बोधजलैः ? ॥२२॥
रटनां शृणोषि नो मे विकर्तनानेकशोऽर्थितोऽपि वटोः ।
सुप्तः किं गुरुकार्याशक्तः किं वा विकर्णोऽसि ?॥२३॥
कामादिशत्रुभिर्मे पुरं वशीकृत्य पुण्यधनम् ।
वो भुज्यते दयालो नैव शयालुत्वमुचितं ते ॥२४॥
शरणागते तु पामरबुद्ध्या मयि नावहेलनं घटते ।
शबरी रामेण कथं कथय कृपालो कृता कृपापात्रम् ॥२५॥
दुःखचपेटां दातुं यद्युद्युक्तोऽसि तेंशुकप्रातम् (?)।
मुञ्चेयं त्वपराधी लालनमभिलाषुकः कथं तात? ॥२६॥
विष्णो मदीयसुमतिद्रुपदसुतां धर्मदुर्बलेसाहा (दुर्बलाशा हा) ।
कर्पदिकेषग्नाहं मत्सरदुःशासनो गतः क्वासि ?॥२७॥
उदरे नारककुण्डे पुनः पुनश्चेन्न तुष्यसि क्षिपसि ।
क्षिपनिःसृतं सृतौ मां मायापाशैर्बधानहृश्वस्मिन् ॥२८॥
तेजोभावस्तम इति वितथं किं नो भणन्ति काणादाः ।
भवति त्रिभुवनदीपेऽन्यथा कथं तद्वृदिस्यान्मे ॥२९॥
त्रिभुवनदीपालोके तेऽथ त्रिजगतोऽवभासयति तूर्णम् ।
दूरीकृत्य तमो मे मनसि ततस्त्वं स्वयं न भासि कथम् ?॥३०॥
तरुणौ मामपराधि नमति यदि जानास्यखण्डविततगुणैः ।
स्वैर्बध्वाकरुणाब्धौ विरूपितं किं न मिहिर मज्जयसि ?॥३१॥
सप्ताश्व मनस्तुरगः कामवशो मे स्ववृतिपरिणतिषु ।
वडवासु किं वृषस्यति नारुह्य द्राक् कथं वशीकुरुषे ?॥३२॥
समदृष्टेस्तव करुणामयि भूतलवज्जपासु लौहित्यम् ।
अन्यत्र स्फटिक इव प्रभाति वैषम्यमिति कुतोऽधीतम् ॥३३॥
रटयसि बहुलं घटयसि मयि न स्नेहं मनाक् विरमति मे ।
चेतस्तत् कटुवारिभिर्यद्यसि रुष्टः कथं न नाशयसि ?॥३४॥
त्वत्करुणाद्वा परिणत्वे स्मृतिदुःखे मया प्रभो भजता ।
सेषन्मुमुक्षुणा तानुमियतेऽतो विरम्यते नैव ॥३५॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यद्यङ्कुरितानुमिताजन्यजनकभावभञ्जनापत्तेः ।
सास्त्येव पामरे मयि पूर्णय पूर्णोऽसि नैव तेऽपेक्षा ॥३६॥
गुणवर्णनोपदेशः प्रतारणेयं न विश्वरूपकृता ।
गुणवर्णनं त्वदीयं जन्मशतेनापि केन कर्तव्यम् ॥३७॥
मन्मतिरत्यल्पा तोल्पमपि त्वां स्तोतुमीश हेषेयम् ।
करुणाकटाक्षरहितस्तसहितस्यां न शक्तिह्रासः स्यात् ॥३८॥
भवभयहारमहार्यं निर्गुणधार्यं भयादनुत्तार्यम् ।
परमानन्दाचार्यं तमथानार्यं जहातु मा मूढः ॥३९॥
पूरयति मानसं यस्त्वत्स्मृतिधाराभिरवकरव्याप्तम् ।
भूषयति परमहंसस्तत्ते स्याल्लोलिताप्रगततीरा ॥४०॥
त्वन्नामस्मृत्यत्परणी समुद्गते ज्ञानहुतभुजि जितकालाः ।
विषयहर्वींष्या जुहुति ये वैराग्यश्रुचा(?) बुधाः खकुण्डस्थे ॥४१॥
मानसरक्तो हंसो भवत्कथाकामधेनुपीयूषम् ।
यः पिवति विषयनीरादुद्वृत्यारस्मान्न(?) परमहंसाऽन्यः ॥४२॥
कल्पतरुकामदोग्ध्रीचिन्तामणयोऽपि यन्मनोरथदाः ।
फलसि स्वं फलमुचितं स्वसेवितुस्तन्मनः पथातीतः ॥४३॥
क्षुण्णं यन्मनसा तत् स्वविलसितं कल्पपादपः फलति ।
त्वमतः स्वसेवितुः स्वं फलं विजाने मनः पथातीतम् ॥४४॥
त्वद्भक्तिरकामधेनुं दोग्ध्यमृतं दुग्धरत्नगोर्मेरोः ।
शिर आक्रनते कलयति कुटिलं कालं पलालसदृशं सः ॥४५॥
त्वज्जन्ममधुरिमा यैरनभूतस्ते बुधाबुधानबुधाः ।
स्पृहयन्ति तन्निपीताधरबिम्बायै न रम्भायै ॥४६॥
आरूढभक्तिवीरुद्ध्वदाव्हा(?) मन्दाराचलक्षुभितात् ।
करुणाब्धेर्भवतोऽमृतमाप्तमनन्तं त एव बुधाः ॥४७॥
अग्रस्थितमुखचन्द्राद्गलोदयाद्रेरुदितमात्रम् ।
त्वन्नाम हृद्गुहायास्तमस्ततिं हरति किं भवन् स्पर्धि ॥४८॥
शतकोटिदानदक्षं विदग्धपापौघपर्वतस्मरणम् ।
विमदीकृतपविपरिणतमैन्द्रपदत्वेन नाम भवदीयम् ॥४९॥
पैतामहीं तनुं तां तदुज्झितां रागिणीं यदुदयास्ते ।
यत् सम्पर्कात् प्रणमति ह रोप्यतोऽस्मात् परं न मन्येऽहम् ॥५०॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यश्चरिकरीति(?) हि विश्वम्भरि भरत्यपि सञ्जरि हरितितमाम् ।
अञ्जलिरकारि तैरपि सायं प्रातर्यदग्रतो वन्दे ॥५१॥
उदये विधिरूपस्त्वं मध्याह्ने शङ्करः स्वयं सायम् ।
विष्णुरिति वदन्तु विमला वयं तु यत्त्वन्न जानीमः ॥५२॥
सप्तस्वरोढकान्तं रसमिव शान्तं सुवर्णसप्ताश्वैः ।
सप्तभिरिव सामभिरहमूढं दामैव वेद्मि किमपि परम् ॥५३॥
प्राक्तनमनुदिनमुदितं विरजस्कं रागिणं सदयमदयम् ।
फलदमफलदं शरणं कुरु कुरु रे जीव जहि हि मृत्युभयम् ॥५४॥
दीनदयाल परं कं शङ्कर कामानलातिपरितप्तम् ।
गङ्गाधर भवजलधौ मग्नं मां पाहि परतन्त्रम् ॥५५॥
अशुचिं चण्डचरित्रं मां यदि जानासि चण्डिका जाने ।
हालाहलं कपालं व्यालं भालानल ! प्रभो जहि हि ॥५६॥
पापं त्वदेकशरणं हालाहलमेव मन्यसे यदि माम् ।
तद्वत्कण्ठविलग्नं तत्र निमग्नं कथं न कुरुषे द्राक् ॥५७॥
त्वन्महिम मदापराधौ पारे सङ्कच्यं त्वपारपरिमाणौ ।
तदनुपमत्वं गच्छति परिकरबन्धं कथं न कुरुषे द्राक् ॥५८॥
मत्सदृशः पतितः स्यान्न पतितपावन कथं तथा त्वं ते ।
मामतिपतितं मत्वा हि वोढासिकां(?) यशोग्रन्थिम् ॥५९॥
यदि पतितपावनत्वं लब्धुं पतितोऽपि सृष्णास्ति (?) ।
तल्लब्ध्वा मदुपेक्षाव्याधिनिवृत्तौ भिषग् द्रोहः ॥६०॥
कलिकाले जनतायाः स्वार्थपरत्वं कथं हि दोषाय ? ।
प्रभुरपि तथाविधः किं यन्मां को नाश आर्पयसि पतितम् ॥६१॥
सहृदयं नवनीतं मुञ्चक गेरत्वमुचितं ते ।
संसारानलतप्तं मज्जय करुणामृतं बुधौ मां ते ॥६२॥
अपराधां बुधिवरल्लभरामसुतोत्थं वचो विषं कण्ठे ।
सहराक्षेपकद्रुत्वं ददाति हर तानहस्तगा तस्य ॥६३॥
साहुनृपतिबहुमान्यो गोकुलतनयः सुखानन्दः ।
तदनुजवल्लभरामात्म(जे) च्छारामेण मिहिरमग्नहृदा ॥६४॥
श्रीमन्माधवनरपतिविरचितजीवातुजनितसत्त्ववता।
विलसितपद पत्रार्पितनन्दकसद्गन्धमुदितसन्मधुपम् ।
रचितं वाक्कुसुमाञ्जलिमीने(?) फलदं बुधोऽर्पयतु ॥६५॥

इति श्रीइच्छा(रा)मशास्त्रिविरचितस्तरणिवाक्कुसुमाञ्जलिः समाप्तः ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कवि मानाङ्क विरचित मेघाभ्युदयकाव्यम् : अप्रकाशित संस्कृत लघुकाव्य

नन्दकिशोर मिश्र*

प्रस्तावना

हस्तलिखित प्राचीन ग्रन्थों के अनुसन्धान और प्रकाशन के लिये महाराजा सयाजीराव गायकवाड तृतीय द्वारा १९२७ में प्रस्थापित ''प्राच्यविद्या मन्दिर'' जिसमें विभिन्न प्रकार की एवं विविध विषयों की ३० हजार से अधिक पाण्डुलिपियों का सङ्ग्रह संरक्षित है । जिसमें अनेक पाण्डुलिपियाँ अद्यावधि अप्रकाशित हैं । उसी निधि में से **मेघाभ्युदयकाव्य** नामक ग्रन्थ है जिसका सम्पादन करने का एक लघु प्रयास प्रस्तुत शोधपत्र में किया है ।

मेघाभ्युदयकाव्य में कवि ने शब्दवैचित्रता को प्रकट करते हुए यमकालङ्कार की दिव्य छटा को प्रदर्शित किया है । कवि ने अपना कौशल एक नई दिशा में दिखाया जिसको यमक काव्य कहते हैं जो अत्यन्त कठिन एवं दुष्कर माना जाता है । यमक काव्य में समानरूप से सुने जाने वाले शब्दों की पुनरावृत्ति होती है परन्तु अर्थ भिन्न भिन्न होते हैं ।

कठिन कर्तव्यों को प्रदर्शित करने वाली सर्वप्रथम यमक रचना राम शर्मन् द्वारा लिखित **अच्युतोत्तर** है, इसका सङ्केत आचार्य भामह ने भी किया है । तदुपरान्त यमकालङ्कार में रचित - कालिदास का **घटकर्पर**, वासुदेव का **नलोदय** एवं नीतिवर्मन् का **कीचकवध** इत्यादि काव्य भी प्राप्त होते हैं । दशमशताब्दी में केरल के वासुदेव द्वारा तीन यमक काव्य लिखे गये । तमिलप्रदेश में श्रीवत्साङ्क द्वारा **यमकरत्नाकर** लिखा गया ।[१]

पाण्डुलिपि परिचय

प्राच्यविद्या मन्दिर में मेघाभ्युदयकाव्य की एक प्रति विद्यमान हैं एवं अन्य प्रतियों का सङ्केत *The New Catalogues Catalogorum,*[२] में प्राप्त होता है -भाण्डारकर रिसर्च इंस्टीट्यूट, पुणे में १७६ of A Acc. १८८२-८३, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर में Vol. ७. Acc. ११६४, Vol. १३. Acc. २५२४, Vol. २३-Acc. ११५५, विद्यमान हैं ।

'स्वाध्याय' - पु. ५६, वर्ष २०१९, पृ. १२३-१३६. ISSN 2250-0391

* प्राच्यविद्या मन्दिर, महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, वडोदरा, M: 9998807874,
Email: mishrank187@gmail.com

१. *The Cultural heritage of India,* Ed. Suniti Kumar Chatterji, The Ramakrishna Mission Institute of Culture, Calcutta, Vol. 5, 2nd Edition, 1978, P. 222.

२. *New Catalogues Catalogorum,* Vol. 21, Ed. Siniruddha Dash, University of Madras-2011, P 157.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मेघाभ्युदयकाव्य के सम्पादन में तीन पाण्डुलिपियों का आश्रय लिया गया है । जिनमें एक प्राच्यविद्या मन्दिर, वडोदरा से और दो प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, बीकानेर से प्राप्त की गई हैं । तीनों को पृथक् पृथक् सङ्केताक्षर दिये गये हैं । वडोदरा की **४३८०** सङ्ख्या वाली को **A**, **१५८२६-२७** सङ्ख्यात्मक बीकानेर वाली को **B**, एवं **१९०७९** सङ्ख्यात्मक को **C** नाम दिया गया है । तीनों का विवरण निम्नलिखित है -

A : ४३८० संख्या, ४ पृष्ठात्मक, २९ x १५ आकार, प्रत्येक पृष्ठ में १५ पङ्क्ति एवं प्रत्येक पङ्क्ति में ४३ अक्षर विद्यमान हैं, लिपि देवनागरी, भाषा संस्कृत है, ४२ श्लोक संयुक्त, पाण्डुलिपि की स्थिति बहुत अच्छी है, लिपिकार द्वारा बडी ही कुशलतापूर्वक त्रुटिरहित कार्य किया गया । फिर भी कुछ अक्षरों को समझने में भ्रान्ति पैदा हुई है । तृतीय एवं दशम श्लोक के चतुर्थपाद का लोप हुआ है । यह पाण्डुलिपि जैन शैली में लिखी गयी है ।

इस पाण्डुलिपि में लिपिकार ने अपने गुरु, आश्रयदाता, स्थान, संवत्, मास, पक्ष, तिथि एवं स्वयं के नाम का उल्लेख पुष्पिका के बाद चार श्लोकों में स्पष्ट रूप से किया है । इस लिपिकार ने अनेक ग्रन्थों की पाण्डुलिपि का लेखन किया है । उन सभी ग्रन्थों में भी प्रथम दो श्लोक प्राप्त होते हैं ।[3]

लिपिकार ने अपना परिचय देते हुए लिखा है -

तच्छिष्ठो गोसाई नारायणभारतीति विख्यातः ।
विद्वद्गोष्ठ्यानन्दी प्राज्ञो यस्वन्तभारती शिष्यः ॥४०॥

नारायणभारती के शिष्य यशवन्तभारती लिपिकार द्वारा इस ग्रन्थ को कागज पर लिखा गया ।

इस पाण्डुलिपि के लेखनकाल का इस प्रकार से ग्रन्थ में निर्देश प्राप्त होता है -

विक्रमादित्यसमयादृषिवेदाङ्कभूमिते ।
संवत्सरे शुभकृतिमासि भाद्रपदे शुभे ॥४१॥
शुभपक्षे द्वितीयायां समेतायां च सौरिणा ।
अणहिल्लपुरे प्रीत्या ग्रन्थमेतमलीलिखत् ॥४२॥

इस ग्रन्थ में विक्रमसंवत् की सङ्ख्या को प्राचीन भारतीय अङ्कनिर्देश पद्धति के अनुसार शब्दों में वर्णित किया गया है **"विक्रमादित्यसमयादृषिवेदाङ्क भूमिते"** ऋषि अर्थात् ७, वेद अर्थात् ४, अङ्क अर्थात् ९, भूमि अर्थात् १, = ७४९१ ये अङ्क प्राप्त होते हैं । शब्दों में अङ्क गणना करने का एक नियम है - **अङ्कानां वामतो गतिः** - अर्थात् अङ्को की गणना वाम भाग से होती है, इस नियम से १९४७ यह विक्रमसंवत् हमको प्राप्त होता है । भाद्रपद, शुक्लपक्ष, द्वितीया तिथि, शनिवार को अणहिल्लपुर नामक स्थान पर प्रसन्नता से इस पाण्डुलिपि का लेखन हुआ था ।

३. प्राच्यविद्या मन्दिर में संरक्षित पाण्डुलिपियाँ- (१) सङ्ख्या - ४३९४ वृन्दावनकाव्यम् (२) सङ्ख्या- ३५९९ वास्तुमण्डनम् (३) सङ्ख्या-२९२८ विरहिणी प्रलाप (४) सङ्ख्या २९२८ विरहिणी प्रलापटीका ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लिपिकार ने विद्याव्यसनी, गुणनिधि, विविधकलासम्पन्न, आश्रयप्रदाता राजा का भी उल्लेख किया -

अस्ति श्रीवटपत्तने क्षितिपतिः श्रीमान् मनीषीवशी
कर्तुं पुस्तकसङ्ग्रहं धृतरतिर्ग्रन्थालये वै निजे ।
भर्ता गुर्जरनीवृतोऽखिलकला विद्यादिरक्तः सदा
ख्यातो यश्च सयाजिराववसुधाधीशो गुणैरुज्ज्वलैः ॥३९॥

वडोदरा नरेश महाराजा सयाजीराव गायकवाड जी के आश्रय एवं निर्देशन में प्रतिलिपि का कार्य अपने ग्रन्थालय के लिये अणहिल्लपुर नामक स्थान में चलता था, जो वर्तमान में पाटन नाम से विख्यात है ।

B : १५८२६-२७ सङ्ख्यात्मक यह पाण्डुलिपि बीकानेर से प्राप्त की । इसमें दो ग्रन्थ एक साथ है -प्रथम पृष्ठ से द्वितीय तक **घटकर्पर** एवं तृतीय पृष्ठ से षष्ठ पृष्ठ तक **मेघाभ्युदयकाव्य**, यहां केवल मेघाभ्युदय की पृष्ठ संख्या का ग्रहण किया गया है । ४ पृष्ठात्मक ग्रन्थ के प्रत्येक पृष्ठ में १३ पङ्क्ति एवं प्रत्येक पङ्क्ति में ४२ अक्षर हैं । २९ X ११.५ सेन्टीमीटर आकार, देवनागरीलिपि, संस्कृतभाषा, ३८ श्लोकों से सुसज्जित है । इसके ३३ वें श्लोक के तृतीयपाद का लोप हुआ है ।

C : **मेघाभ्युदयकाव्य वृत्तिसहित**, १९०७९ सङ्ख्यात्मक, ४ पृष्ठात्मक, २५.९ X १०.८ सेन्टीमीटर आकार, प्रत्येक पृष्ठ में १८ पङ्क्ति एवं प्रत्येक पङ्क्ति में ६२ अक्षर हैं । ३८ श्लोकों से पुष्पित, व्याख्या सहित, देवनागरीलिपिमयी, संस्कृतभाषा समन्वित है । शान्तिसूरि जी द्वारा इसकी व्याख्या की गयी है । इस व्याख्या के कारण सम्पादन कार्य सुकर हो गया । इस पाण्डुलिपि में भी पृष्ठमात्रा का प्रयोग हुआ है । सप्तम श्लोक के तृतीयपाद का लोप हुआ है । बीकानेर से प्राप्त दोनों पाण्डुलिपियों में लेखनकाल का कोई उल्लेख प्राप्त नही हुआ है ।

A और C दोनों पाण्डुलिपियाँ पृष्ठमात्रा में लिखी गई हैं । पाण्डुलिपि B की लेखनपद्धति भी जैन शैली की हो ऐसा प्रतीत होता है ।

लेखक-परिचय

मेघाभ्युदयकाव्य के प्रणेता कवि मानाङ्क राजा उग्रसेन के पुत्र थे, इसका उल्लेख अमरकोश के टीकाकार रायमुकुट ने अपनी टीका (१४३१ ई.)[४] में किया है । यह एक शाही लेखक थे । इनके ग्रन्थों से इनके जीवन के विषय में ज्यादा कुछ पता नही चलता है । कृष्णमाचार्य ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि यह स्वयं को राजा महीभुज नाम से सम्बोधित करते थे ।[५] जिसका प्रमाण मानाङ्ककृत **गीतगोविन्द टीका** के प्रारम्भ में प्राप्त होता है ।[६] इनके

---

४. Dash Siniruddha, *Ed. New Catalogues Catalogorum,* Vol. 20, University of Madras-2011, P. 143.

५. *A History of the Classical Sanskrit Literature* by Krishnamacharya, Madras, 1906, P. 373.

६. कवीनां मतिमालोक्य सतां सुखबुद्धये ।
कृता टिप्पणिका मुख्या मानाङ्केन महीभुजा ॥२॥
प्रीतये वासुदेवस्य सद्यः पापानुत्तये ।
गीतगोविन्दकं काव्यं जयदेवश्चकार ह ॥३॥
प्राच्यविद्या मन्दिर में स्थित १३८१ सङ्ख्यात्मक पाण्डुलिपि, गीतगोविन्द व्याख्या ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दो विशिष्ट यमककाव्य हैं - **मेघाभ्युदयकाव्य** एवं **वृन्दावनकाव्य** । वृन्दावनकाव्य का प्रकाशन जीवानन्द के **काव्यसङ्ग्रह** नामक ग्रन्थ में सन् १८६१ में हो चुका है ।[७] इन्होने **मालतीमाधव** पर **दुर्गमासुबोधिनी** नामक टीका लिखी एवं **अमरकोष, गीतगोविन्द** इत्यादि ग्रन्थों पर भी अपनी दिव्य लेखिनी द्वारा टीका लिखी । इनका समय दशवीं शताब्दी माना गया है[८] एवं कृष्णामाचार्य के मत में १३वीं शताब्दी माना गया ।[९]

मानाङ्क का अपर नाम मालाङ्क भी प्राप्त होता है, यह एक व्याकरणशास्त्र के मर्मज्ञ एवं छन्दशास्त्र के विशिष्ट ज्ञाता थे । **मेघाभ्युदयकाव्य** को पढकर यह प्रतीत होता है कि इनको यमककाव्य अत्यधिक प्रिय था । महाकवि कालिदास के मेघदूत से प्रेरित होकर इन्होने **मेघाभ्युदयकाव्य** की रचना की जिसमें अनेक छन्दों का प्रयोग किया एवं विविधालङ्कारों से सुसज्जित किया है ।

काव्य का विषय -

कालिदासविरचित **मेघदूत** से प्रेरित होकर अनेक कवियों ने दूतकाव्य लिखे । मानाङ्क कवि ने भी दूतकाव्य की शैली में **मेघाभ्युदय** नामक यमक काव्य लिखा । इस ग्रन्थ में विरहिणी स्त्री वर्षाकालीन समय में अपने कान्त का अविरत स्मरण करती है । **मेघदूत** में प्रियतम विरही है और **मेघाभ्युदयकाव्य** में प्रियतमा विरहिणी है ।

मेघाभ्युदयः - **मेघानाम् अभ्युदयः मेघाभ्युदयः** - मेघों का अभ्युदय अर्थात् वर्षा ऋतु का प्रारम्भ । इस ऋतु में प्रियतमा को अपने प्रियतम का विरह अत्यधिक कष्टकारी होता है । जब मेघों की गर्जना होती है, नीले मेघ आकाश मार्ग में विचरण करते हैं तब विरहिणी स्त्री अपने प्रियतम का स्मरण करती है ।

मानाङ्क द्वारा विरचित यह काव्य अत्यधिक कृत्रिम है । इस काव्य का प्रारम्भ मङ्गलाचरण से नही होता है अपितु किसी स्त्री के विरह की बात से होता है । **मेघदूत** और **मेघाभ्युदय** काव्य में कुछ स्थान पर समानता प्रतीत होती है जैसे **मेघदूत** का प्रारम्भ **''कश्चित्कान्ताविरहगुरुणा स्वाधिकारात्प्रमत्तः''** से होता है और **मेघाभ्युदयकाव्य** का प्रारम्भ **''काचित्काले प्रमुदितनदन्नीलकण्ठैर्घनागे''** से होता है । अर्थात् दोनों स्थान पर विरह की वेदना विद्यमान है । समग्र **मेघदूत** मन्दाक्रान्ता छन्द में विरचित है और **मेघाभ्युदयकाव्य** का प्रारम्भ मन्दाक्रान्ता से होता है ।

काव्य में प्रयुक्त रस -

यह काव्य प्रधानरूप से विप्रलम्भ शृङ्गाररस से आप्लावित है । इसमें विरहिणी स्त्री का नाम नही दिया है **''काचित्''** शब्द से मात्र सङ्केत किया है । इसके प्रथम श्लोक पर दृष्टिपात् करते हैं -

---

७. Bhoja's, *Shringara Prakasha*, Dr. V. Raghavan, Sri Krishnapuram Street, Madras, 1963, P. 809

८. संस्कृत वाङ्मय कोश, प्रथम खण्ड, सम्पा. डॉ. श्रीधर भास्कर वर्णेकर, प्रकाशक- भारतीय भाषा परिषद्, कलकत्ता, १९८८, पृष्ठ. ४१४-४१५

९. *A History of the Classical Sanskrit Literature* by Krishnamacharya, Madras, 1906, P. 622

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

काचित्काले प्रमुदितनदन्नीलकण्ठैर्घनागे
व्योमाटव्यां प्रतिदिशमलं सञ्चरन्मेघनागे ।
बद्धारम्भं वदति वनिता स्म प्रवासाय कान्तं
कामश्चापं वहति हि तदा विस्फुरच्छायकान्तम् ॥१॥

कोई वनिता (विरहिणी) प्रवास में गये हुए कान्त के विरह में, किसी समय वर्षाकाल में गरजते हुए नीले मेघों को आकाशमार्ग में एक दिशा से दूसरी दिशा की ओर जाते हुए देखकर अपने प्रियकान्त को स्मरण करती हुई एवं सोये हुए काम के जागरण से कान्तभावना से विरह को सहन करती हुई कहती है ।

इस श्लोक में प्रत्यक्षरूप से विप्रलम्भ शृङ्गाररस का दर्शन होता है । वर्षाकालीन समय में पतिविरहापन्न विरहिणी की मनोदशा का चित्रण कवि द्वारा प्रस्तुत किया गया है । उपर्युक्त श्लोक मन्दाक्रान्ता छन्द में वर्णित है ।

काव्य में प्रयुक्त छन्द -

काव्य में विविध छन्दों का प्रयोग किया गया है । वियोग, प्रवास, विपत्ति, वर्षा, मनोव्यथा एवं विस्मृति इत्यादि के वर्णन में मन्दाक्रान्ता का प्रयोग होता है । इस काव्य में प्रारम्भ के दो श्लोकों में विरहिणी स्त्री के प्रियतमविरहजन्य मनःस्थिति का वर्णन कवि ने मन्दाक्रान्ता छन्द में किया है ।

इसमें प्रथम दो श्लोक मन्दाक्रान्ता एवं पश्चात् के श्लोक- उपेन्द्रवज्रा, वंशस्थ, गीतीआर्या, भुजङ्गप्रयातं, वसन्ततिलका, स्रग्विणी, श्लोकछन्द, मालिनी, तोटक, दोधक, शार्दूल इत्यादि छन्द कवि द्वारा प्रयोग किये गये हैं ।

इसके ३२ वें श्लोक को तोटक छन्द में लिखा जिसका वर्णविन्यास भी अत्यधिक सुन्दर है ।

नवमम्बुकदम्बरजः सबलं
निपतत्प्रशमीक्ष्य रतीशबलम् ।
विरहार्तमनाः पथिको नगतः
परितापवशं पथिको न गतः ॥३२॥

तोटक का लक्षण **छन्दोमञ्जरीकार** लिखते हैं - **वद तोटकमब्धिसकारयुतम् ।**[१०] जिसके प्रत्येक चरण में चार सगण हो उसे तोटक कहते हैं । ३८ श्लोकों में १४ से अधिक छन्दों का प्रयोग किया है ।

काव्य में प्रयुक्त अलङ्कार -

शब्दालङ्कार यमक होने से शब्दों का चमत्कार पूर्णरूपेण परिलक्षित हो रहा है । रुद्रट ने अपने **काव्यालङ्कार** में यमक की परिभाषा दी है -

१०. छन्दोमञ्जरी, श्रीगङ्गादास, व्याख्याकार- ब्रह्मानन्द त्रिपाठी, प्र. चौखम्भा सुरभारती, वाराणसी, पृष्ठ. ४८.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुल्यश्रुतिक्रमाणामन्यार्थानां मिथस्तु वर्णानाम् ।
पुनरावृत्तिर्यमकं प्रायश्छन्दांसि विषयोऽस्य ॥[११]

समान रूप से सुने जाने वाले और समान परिपाटी वाले भिन्नार्थक किंवा भिन्न- प्रयोजन वर्णों की पुनरावृत्ति यमक है जिसका व्यापक क्षेत्र पद्य है ।

इस काव्य में अनेक श्लोकों में यमक के साथ अनुप्रासादि अलङ्कारों का भी प्रयोग किया है । पहले यमक को देखते हैं । **मेघाभ्युदयकाव्य** का प्रथम श्लोक-

काचित्काले प्रमुदितनदन्नीलकण्ठैर्घनागे
व्योमाटव्यां प्रतिदिशमलं सञ्चरन्मेघनागे ।

घनागे और **मेघनागे,** दोनों शब्द श्लोक पठन में समानरूप से श्रवणगोचर होते हैं किन्तु अर्थ पृथक् पृथक् है । घनाग अर्थात् वृक्ष समूह और मेघनाग अर्थात् घनगज । ये दोनों शब्द सुनने में समान प्रतीत होते है परन्तु अर्थ भिन्न-भिन्न है । इस श्लोक में यमक के साथ नागे शब्द बार-बार आने से अनुप्रास भी होता है

जलवन्तः क्ष्मापीठं समन्ततो राजयन्ति केदाराः ॥
शोकमहाप्रतिपक्षं प्रियतमविरहे जयन्ति के दाराः ॥१७॥

एक विरहिणी स्त्री कहती है - ये मेघ पृथिवी के ऊपर समानरूप से वर्षा करके क्षेत्रों को प्रसन्न करते हैं लेकिन प्रियतम के विरह में शोकमहानन्द में डुबी हूईं कितनी स्त्रियों को प्रसन्न किये ? अर्थात किसी को भी नही ।

यहां पर **''केदाराः''** और **''के दाराः''** इन दो शब्दों के प्रयोग से यमकालङ्कार चमत्कृत होता है । केदाराः अर्थात् क्षेत्र (खेत) द्वितीयशब्द - के दाराः अर्थात् कितनी स्त्रियों को । ३२ वें श्लोक में यमक की छटा-

विरहार्तमनाः पथिको नगतः

परितापवशं पथिको न गतः ॥३२॥

नगतः अर्थात **पर्वतात्** तथा न गतः अर्थात् **नैव अगच्छत्** इस प्रकार यमक का दिव्य प्रयोग कवि द्वारा किया गया है ।

इसके पांचवें श्लोक में रूपक का उदाहरण प्रस्तुत किया गया है जो वंशस्थ छन्द में है -

---

११. रुद्रट, काव्यालङ्कार, व्याख्या-सत्यदेव चौधरी, वासुदेव प्रकाशन, दिल्ली, १९६५, पृ.८५.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नवाम्बु विद्युल्लतया समं ततः
क्षितौ विमुञ्चत्यसमं समन्ततः ।
निनादयन्नम्बुधरः कलापिनो
दिवीक्षते चन्द्रमसः कलापि नो ॥५॥

प्रोषितभर्तृका विरहिणी नायिका मेघों की ओर देखकर कहती है कि - वर्षा ऋतु के प्रारम्भ काल में नूतन शीतल जल को धारण करके विद्युत लता के साथ सम्पूर्ण पृथिवी को चारों तरफ समानरूप से शीतलता प्रदान कर रहे हैं । मेघ अपनी प्रेयसी से एक क्षण के लिए भी दूर नहीं होते हैं, पृथिवी पर आते समय भी विद्युत प्रेयसी को अपने साथ में लिए हुए अपने कर्तव्य का पालन कर रहे हैं ।

पृथिवी पर निवास कर रहे नवीन मेघों के प्रेमी मयूर भी गरजते हुए मेघों को देखकर तथा आकाश मण्डल में चन्द्रमा में लाञ्छनरूप में स्थित मयूर को देखकर आनन्दमग्न हो रहे हैं । किन्तु हमारे प्रियतम हमारी भावनाओं को नहीं समझते हैं । जैसे मेघ अपनी सहचरी विद्युत का त्याग किये बिना ही अपने कर्तव्य का निर्वाह करते हैं अर्थात् विद्युत् हम मानुषी सहचरियों से भी अधिक भाग्यशाली है ।

मयूर भी चन्द्रमा की आकृतिरूप में स्थित अन्य मयूर को देखकर ईर्ष्या मुक्त मन से आनन्द का अनुभव कर रहे हैं । हमारे प्रियतम को भी अन्य प्रियतमाओं को अपने प्रेमास्पदों के समीप देखकर अपनी प्रियतमा का स्मरण करके अनुपम आनन्द का अनुभव करना चाहिए ।

यहाँ पर अनुप्रास, रूपक, यमक अलङ्कार कवि द्वारा प्रगट किये गये हैं । अग्रिम श्लोक में उपमा अलङ्कार दृष्टिगोचर होता है -

जितालिमाला मधुभित्तमालं
द्युमार्गमाधाय महत्तमालम् ।
पयो विमुञ्चत्यचिरप्रभाभिः
सहाम्बुदाली चलदीप्रभाभिः ॥३॥

मेघों की तुलना भौरों के साथ की है, जितालिमाला-''ये जितं जिता अलीनां भ्रमराणां माला समूहाः येषां तासां जितालिमाला'' जैसे काले-काले भौरें क्रम से चलते हैं उसी प्रकार मेघ चल रहे हैं जिससे ऐसा प्रतीत होता है कि मेघों ने भ्रमरों की माला पहन ली हो ।

इस काव्य में काव्य के समस्त अङ्गोपाङ्ग समाहित हैं जिससे काव्य का सौष्ठव अधिक देदीप्यमान हो रहा है । इस ग्रन्थ के सम्पादन कार्य में मेघाभ्युदयकाव्य पर शान्तिसूरिकृतव्याख्या अत्यधिक सहायक सिद्ध हुई है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उपसंहार

मेघाभ्युदयकाव्य में कवि ने पाण्डित्यपूर्ण, सरसता एवं रोचकता के साथ-साथ श्लेषात्मक कोमलकान्त पदावलियों का भी प्रयोग किया है। इस काव्य में कवि की उत्कृष्ट कविप्रतिभा का परिचय मिलता है।

अनेक छन्दों एवं विविध अलङ्कारों से युक्त यह लघुकाव्य अर्थगाम्भीर्य से समृद्ध है। **मालतीमाधव, अमरकोश, गीतगोविन्द** जैसे ग्रन्थों पर टीका एवं **वृन्दावन, मेघाभ्युदयकाव्य** जैसे साहित्य की रचना करने वाले मानाङ्क स्वयं भी प्रतिभा सम्पन्न कवि थे यह तथ्य उनके मेघाभ्युदय काव्य से प्रतीत होता है।

अथ मेघाभ्युदयकाव्यम्

काचित्काले प्रमुदित[1]नदन्नीलकण्ठैर्घनागे
व्योमाटव्यां प्रतिदिशमलं सञ्चरन्मेघनागे ।
बद्धारम्भं[2] वदति वनिता[3] स्म प्रवासाय कान्तं
कामश्चापं[4] वहति हि तदा विस्फुरच्छायकान्तम् ॥१॥

खं[5] मेघानां[6] शितयति[7] ततिर्[8]मुक्तनादा नवानां
निद्रां शत्रोः[9] समय[10]महितां[11] कुर्वती[12] दानवानाम् ।
जातोत्कण्ठां[13] पथिकवनितामादधानो निकामं
वातीन्द्राशा[14] प्रभवपवनो वर्द्धयन् कामिकामम् ॥२॥

जितालिमाला[15] मधुभित्तमालं
द्युमार्ग[16]माधाय[17] महत्तमालम् ।
पयो विमुञ्चत्यचिरप्रभाभिः[18]
[19]सहाम्बुदाली चलदीप्रभाभिः ॥३॥

घनाघनानां ततिरुद्धतानां
प्रकुर्वती द्यां प्रति[20]रुद्धतानाम् ।
रसत्यलं[21] सान्द्रतमालि[22]नीला
विभाति शष्पाङ्कुर[23]मालिनीला ॥४॥

---

[1] B प्रमुदि (Submetric)- । [2] A वद्धारंभं । [3] B विनता । [4] A वापं । [5] A स्वं । [6] B मेघानं । [7] A सितयति । [8] B तितिर्; C तति । [9] C शत्रौः । [10] C शमय- । [11] B -महिमा । [12] C कुर्वतां । [13] B जातोत्कण्ठं । [14] A वातींद्रात्सा । [15] A-मालं । [16] B C द्युमार्ग्र- । [17] B-दाय । [18] C-प्रभाभि । [19] A omits this line.; C महांबुदाली । [20] C-रुद्धतीनां । [21] B रसात्यलं । [22] C-ल- । [23] A सष्पांकुल-; C शिस्फांकुर- ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

[24]नवाम्बु विद्युल्लतया समं ततः
क्षितौ विमुञ्चत्यसमं समन्ततः ।
विनादयन्नम्बु[25]धरः कलापिनो
[26]दिवीक्षते [27]चन्द्रमसः कलापि नो ॥५॥

वहन्ति नद्यो भृशमाविलापः[28]
प्रवासिनामि[29]ष्टतमा विलापः ।
भवत्यनेकः[30] सुतरां[31]महीनो
न वारिभिर्दुर्ग[32]तरा मही नो ॥६॥

[33]प्रनर्त्तयत्योघमलं घनानां
[34]ततिर्द्रुतं [35]दूरविलं घनानाम् ।
कलापिनां कान्तकलापभारं
यया कृताद्यौरखिलापभारम् ॥७॥

विडम्बयन्तो[36] मदभिन्न[37]दन्तिनो
वियत्य[38]मन्दं न घना नदन्ति नो ।
विराजयत्यम्बु[39] रुचिर्न[40]वा सरः
प्रतीयते नापि निशा [41]न वासरः ॥८॥

उदूढ[42]चारुत्रिदशेन्द्रचापः
समु[43]त्सृजन् [44]वायुवशेन चापः ।
द्रुतं हरन्नप्सु सरोजलीलां[45]
प्रमोदयत्य[46]म्बुधरो [47]जलीलाम् ॥९॥

भुवस्तलं भाति घनेन्द्र[48]गोपकं
स्वरैर्मयूरः[49] शिखरीन्द्रगोऽपकम् ।
करोति कान्ताविरहार्त्तमानसं
[50]वृजन्निमज्जत्य[51]रि गाढमानसम् ॥१०॥

---

[24]A नवांव- । [25]A-वु-; B षु- । [26]A दिवीक्ष्यते । [27]C चंद्र** ।[28]A-पा । [29]A मृ । [30]B-क । [31]A-सुतरा- । [32]A -र्गा-; C-ग्रं- । [33]B प्रवर्त्तयति । [34]C omits this line. [35]A द्रुत । [36]A -त्यो । [37]C मदनित् । [38]C विद्यति । [39]C-पु- । [40]B-न्न- । [41]B नि । [42]B नुदूढ- । [43]A-मृ- । [44]A वायवंशेन; B चायुचसेन । [45]A-लाला B-लीलं । [46]B प्रबोधरति । [47]A जलालां; B जलीलं । [48]C धनेंद्र- । [49]B मयूरा ।[50]A omits this line. [51]B निमद्यत ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

[52]विनोद्यते नो पयसा दिवा करः
प्रलुप्त[53] शीतांशु[54]महोदिवाकरः ।
[55]समीरणोद्धूतकदम्बरेणवः
समाक्रियन्तेऽलिभिरम्बरे[56]ऽणवः ॥११॥

पयोमुचां ग्रस्तरवी[57]न्दुतारं[58]
रसत्कुलं भास्वरविद्युतारम् ।
मनो दहत्या[59]कुलमध्व[60]गानां
[61]विभर्त्ति राजी वनमध्व[62]गानाम् ॥१२॥

पथिकप्रियां न मेघा[63]च्छादित[64] दिनकृन्महानदी नयति ।
कूलद्रुमौ[65]घमुदधिं पूराकृष्टं महानदी नयति ॥१३॥

[66]विरहिण्या घनपङ्क्तिः स्वनविजितमहाद्रिपापहासरति ।
विदधाति मुख[67]मुपेन्द्रो निद्रां सुरपापहा सरति ॥१४॥

स्वामिना विप्रयुक्तां[68] प्रियां यौवने
सत्कदम्बार्प्पिते[69] [70]वाति वायौ वने ।
प्राप्य [71]मेघान्न कृता भूरहंसायकैः
कान्तकामो भिनत्त्यन्वहं सायकैः ॥१५॥

पतत्याशु पौरन्दरं कं प्रभूतं
जगद्वर्तते वायुना कंप्र-भूतम् ।
व्रजत्यापगाकूलमोघै[72]र्विनाशं[73]
लभन्ते च [74]काश्चिन्न कान्तं विना [75]शम् ॥१६॥

[76]जलवन्तः क्ष्मापीठं समन्ततो राजयन्ति केदाराः ।
शोकमहाप्रतिपक्षं प्रियतमविरहे जयन्ति के दाराः ॥१७॥

[77]वियतः पतति [78]जलौघो निरुद्धगोवत्समानवप्रसरः ।
जातं च धरापीठं सकलमुदन्व[79]त्समान वप्र सरः ॥१८॥

---

[52]B विनोद्यते । [53]C प्रलप्त- । [54]B-शातोशु- । [55]C ममीरणो । [56]B - रबरे । [57]A ग्रमुरवीं । [58]A उतारं । [59]C-दयति । [60]B-मध्य- । [61]C विभर्षि । [62]B-मध्य- । [63]C मेद्य- । [64]B-च्छदति । [64]C-क्रुमौ- । [66]B विरहण्या । [67]C घन- । [68]B मुक्तां । [69]B बार्प्पित । [70]B वायि । [71]C मेघान्न । [72]C मेघै । [73]B विनासं । [74]C कामिन्न- । [75]B सं । [76]B जलवंतं; C जलवंतः । [77]B वियतिः । [78]C जलोघो । [79]A -मन्व-(Submetric) ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

[80]दिवीक्षते सूर्यमपप्रभं [81]जनः
[82]प्रवाति [83]चाम्भोधरजप्रभञ्जनः ।
विभान्ति [84]शैलाः [85]शिखिनां कदम्बकैः
द्रुमेषु नित्यं क्रियते [86]पदं बकैः ॥१९॥

निपातयत्यञ्जनभारसन्निभो
रसन्निभो वा भुवि वारि वारिदः
निकामकालीकृतदिग्नभा[87] नवं
[88]न भानवं भाति [89]महो मनागपि ॥२०॥

तडिद्वलयकान्तिभिः[90] परिभवन्ति धूमध्वजं
दिशो द्रुतमवाप्य च [91]प्रियतरां वधूमध्वजम् ।
परिश्रममपास्यति[92] स्मर [93]सुखेन पान्थो[94]नकः
प्रगर्जति पयोधरे स्मर सुखेन पान्थो[95]न कः ॥२१॥

द्योति[96]श्चक्र[97]मेति न व्यक्तिं दिनमितमन्धकारिताम्[98] ।
दधदमलतडित्त्रिशूले[99] परिस्फुरत्यन्धकारि ताम् ॥२२॥

पथिकस्त्री विलोक्य नवजलधरमाकुलितालकानना ।
मोहमुपैति भूश्च तां सुखयति[100] न विकच[101]कुटजकानना ॥२३॥

[102]धत्ते जलैः सकलदेहभृतां रसायु-
[103]र्नाप्नोति पङ्कजपरागमसौ रसायुः ।
[104]स्त्रीणां [105]विहन्ति हृदयं शिखिनां विनाद-
स्तोयं [106]च यात्यनलतां[107] [108]दयतां [109]विनाऽदः ॥२४॥

सहेच्छति युवा वल्लभया कुलमनारतम्[110] ।
[111]गर्जदाकर्ण्य मेघानां भयाकुलमनारतम्[112] ॥२५॥

---

[80]C दिवीक्ष्यते । [81]B जनं । [82]B प्रयाति । [83]B दंभोधरजः । [84]B सीलाः । [85]C शिषिनां । [86]A पकदं (hypermetric)। [87]B निभा । [88]C omits न । [89]C नभो । [90]B कांभिभिः । [91]B प्रियतरं । [92]C पाश्यति । [93]B सुषेन । [94]B पाथो- । [95]B पाथो- । [96]A छोतिशृ; B छोति । [97]B चक्र- । [98]C कारिनां । [99]B त्रिसूले । [100]C सुषयति । [101]A विकव- । [102]C घातैः । [103]B नाप्नोति । [104]C भ्रंस्त्रीणां (hypermetric) । [105]B वहंति । [106]C व । [107]C निलतां । [108]C दयतां । [109]C निनादः । [110]B रतां । [111]B गर्जादा-; C गर्जवा-। [112]B रतां। [113]B निर्भरां ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पतति [113]मुहुरधस्तान्निर्झराम्भो नगेभ्यः
[114]स्वनव [115]दुरुशिरोभि [116]ज्योति [117]रासन्नगेभ्यः ।
हरति नवघनोऽयं [118]शर्म्म हंसावलीनां
[119]जनयति च कदम्बः पुष्पितोऽसावलीनाम् ॥२६॥

[120]बहन्नुग्रो घनः श्यामलतया [121]तडितानलम् ।
करोति पथिकान्[122] शोकलतया[123] [124]तडितानलम् ॥२७॥

सुरपतिधनुरुच्चैः पान्थमा[125]पीत-रक्तं
सततमिह [126]विधत्ते चिन्तया पीतरक्तम् ।
जलदवति विलोक्य [127]त्वङ्गतां खे बलाका
[128]न [129]हि पतति [130]वियोगिन्याशु [131]दुःखेऽबला का ॥२८॥

[132]जीयते घनपङ्क्त्या[133] सौदामनी लतया शिखी ।
विनाद्यते च [134]नीलाब्जदामनीलतया[135] शिखी ॥२९॥

[136]जलवदवनिपीठं मेघधाराप्रपातः
[137]सकलमपि विधत्ते नो विभाति प्रपातः ।
अपरतिरमलाभश्चातके[138] याचमाने
भवति पथिकजाया संस्थिता या च माने ॥३०॥

भुजगरिपु[139]कुलानि[140] प्रोक्तके काननानि
कुसुमितकुटजाना[141] मालिके[142] काननानि ।
वियति च घनपङ्क्तीः ग्रस्तभास्वत्तमीशाः[143]
स्वयुवतिविरहार्ता द्रष्टुमत्यन्तमीशाः[144] ॥३१॥

---

[113]B निर्भरां ।[114]A त्वनव- C ध्वनैव ।[115]A ऊरु-। [116]A शिरोनिर; C शिरोरः । [117]A घाति-; C द्योति-। [118]C सस्म । [119]C कुनयति । [120]B विहन्नुग्रो । [121]C ताडितानलं । [122]B C omits कान् । [123]B - लतमा । [124]C ताडितानलं । [125]C पांथमा- ! [126]B विधन्ने । [127]A त्वंगतीः; B त्वांगती । [128]B नि । [129]B ह । [130]B वियोगन्या; C वियोगिन्याः । [131]B दुरके (hypermetric) । [132]A जायते । [133]B पंत्ता । [134]C नीलांकु । [135]BC* तया (Submetric) । [136]A जलदवनि-(Submetric); B जलववचनि ।[137]A अपरतिमलांभ-(Submetric); B अपरितिरमलांभ- । [138]C श्रातके । [139]A-रिषु- B-रिप्र-।[140]C कुलानां ।[141]B कुटजानि-; C कुटजानां । [142]B -लके । [143]A त्तमाशाः । [144]A -त्तमाशाः ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नवमम्बुकदम्बरजः [145]सबलं
[146]निपतत्प्रशमीक्ष्य[147] रतीशबलम्[148] ।
विरहार्तमनाः पथिको नगतः
परितापवशं पथिको न गतः ॥३२॥

[149]वीक्ष्य [150]तडिल्लतिकां[151]समानां
[152]मेघततिं च तमालसमानाम् ।
शीघ्रमनाहितसङ्गविरामा[153]
[154]कान्तमुपैति [155]न [156]सङ्गवि रामा ॥३३॥

[157]सिन्धुत्वं सलिलैर्दधाति[158] वसुधा सञ्जात-पङ्का पदं
पान्थः [159]कर्तुमलं न लुप्त[160]नलिनीकान्तातपं कापदम्[161]।
दृष्ट्वा मेघमुपैति नात्र [162]वनिता [163]भर्ताविहीनाधिकं[164]
संहृष्टा हरयो [165]नदन्त्यविरतं स्वादुस्वनेनाधिकम् ॥३४॥

मेघपङ्क्तिरलिभिः समानवा
[166]क्लिष्टदारपरिहीनमानवा ।
पातयत्यवनता [167]जलं घनं
[168]यत्सरोऽम्बुनि सरोजलङ्घनम् ॥३५॥

चन्द्रादित्यौ स्थगयति घनो विश्वदीपावनेकः ।
तीर्थे नद्या विपुल[169]पयसि नाति [170]नो पावनेकः ।
[171]आकलान्ता दधदभिनवाः[172] पश्यतः सत्सरोऽपः[173]
[174]तूर्णं हन्तुं भवति पथिकान् [175]मीनकेतुः सरोपः ॥३६॥

दृष्ट्वा घनं [176]नभसि दीपभवालिकालं
का मुह्यतीह[177] विरहे न हि [178]वालिकालम् ।
श्रुत्वा रुतानि कुटजेषु शिलीमुखानां[179]
[180]पान्थो वसं व्रजति कामशिलीमुखानाम्[181] ॥३७॥

---

[145]ACशबलं।[146]B निपतत् । [147]Bप्रशमीक्ष; C प्रशमार्थ । [148]A शवलं । C प्रशमार्थ । [148]A शवलं ।[149]B वीक्ष । [150]B तमिल् । [151]B -काल- । [152]A मेमघ-(hypermetric) । [153]B-विराम । [154]B omits thisline; C कात -। [155]C च । [156]A संगति । [157]B सिधुत्वं ।[158]B दधा(Submetric) । [159] B कर्त्रु -। [160]B निलनी; C नलनी । [161]C कापदे । [162]B विनता । [163]B भर्त्रा । [164]B-कां । [165]C नदंति । [166]A क्तिष्ट-; C क्लिस्त । [167]C -तां । [168]A यत्सुरोंवुनि; B जसरेंबुनि । [169]B C -पयति । [170]B omits (नो) । [171]A आकूलांतादृ; B आकूलांताद् । [172]C [अ] पिनवा । [173]A सरोयस् । [174]A नूतं-; B स्रूस्मंहिं । [175]A मेन- । [176]B निभसि । [177]C -तीह-। [178]B बालकालम् । [179]C -मुषानां । [180]B पंथो । [181]C मुषानां ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विद्युल्लता लसति काञ्चन[182]सन्निभारं
धाम्नो [183]वहन्ति घनवन्ति न [184]भाति भारम् ।
उच्चैरसत्यविरतं जलदो स्तवारि-
रस्मिन् प्रयातुसमये प्रिय यस्तवारिः ॥३८॥

[185]॥ शार्दूलविक्रीडितम् ॥

अस्ति श्रीवटपत्तने क्षितिपतिः श्रीमान् मनीषीवशी
कर्तुं पुस्तकसङ्ग्रहं धृतरतिर्ग्रन्थालये वै निजे ।
भर्ता गुर्जरनीवृतोऽखिलकला विद्यादिरक्तः सदा
ख्यातो यश्च सयाजिराववसुधाधीशो गुणैरुज्ज्वलैः ॥३९॥

॥ गीतिबन्द ॥

तच्छिष्ठो गोसाई नारायणभारतीति विख्यातः ।
विद्वद्गोष्ठ्यानन्दी प्राज्ञो यस्वन्तभारती शिष्यः ॥४०॥

॥ श्लोकः ॥

विक्रमादित्यसमयादृषिवेदाङ्कभूमिते ।
संवत्सरे शुभकृतिमासि भाद्रपदे शुभे ॥४१॥

शुभपक्षे द्वितीयायां समेतायां च सौरिणा ।
अणहिल्लपुरे प्रीत्या ग्रन्थमेतमलीलिखत् ॥४२॥

॥ इति मेघाभ्युदयकाव्यं समाप्तमिति ॥[186]

-----

[182]A सन्नितारं । [183]B विहंति । [184]A भानि । [185] ये चार श्लोक A पाण्डुलिपि में अधिक पढ़े गये । [186]B इति मेघाभ्युदयः; C श्रीपूर्णतल्लगच्छसम्बन्धिश्रीवर्द्धमानाचार्य-स्वपदस्थापित श्रीशान्तिसूरिविरचिता मेघाभ्युदयवृत्तिः समाप्ता ॥ श्रीरस्तु ॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पाण्डुलिपि/हस्तलिखितग्रन्थ लेखन-एक तकनीकाश्रित-कला

शर्मिला बागची*

टेक्नोलाजी के इस युग में आज जब हम छपी हुई पुस्तकों से भी एक कदम आगे, इन्टरनेट पर... किन्डल पर पुस्तकें पढ़ते है तो कभी मात्र हाथ से लिखे गये बड़े-बड़े ग्रन्थों की कल्पना भी अद्भुत लगती है। प्रिंटिंग प्रेस के बिना वेदों, उपनिषदों, रामायण, महाभारत, कालिदासादि महाकवियों के ग्रन्थ, आयुर्वेद के ग्रन्थ हस्तलिखित प्रतिकृतियों / हस्तप्रतों / पोथियों / पाण्डुलिपियों के द्वारा सम्पूर्ण भारतवर्ष के पूर्व से पश्चिम, उत्तर से दक्षिण तक किस तरह पहुँच जाती थी, यह एक सुव्यवस्थित प्राचीन नेटवर्क के विद्यमान होने का प्रमाण है। वेद-साहित्य, रामायणादि के विशालाकार ग्रन्थों (रचना की दृष्टि से) के संपादित पाठ तैयार करते समय समस्त भू-भारत के लगभग हर प्रदेश से उनकी क्षेत्रीय लिपि में उपलब्ध पाठ्यों को एकत्रित कर संपादित कर तब उन्हे प्रामाणिक ग्रन्थों के रूप में प्रकाशित किया गया जिन्हें हम आज निरायास पढ़ते है। यह एक तकनीकाश्रित विश्लेषणात्मक पद्धति थी जिसके आधार पर इनके संपादित पाठ तैयार किये गये है तथा जो सर्वमान्य है। आज भी किसी हस्तलिखित ग्रन्थ की संपादित आवृत्ति तैयार करते समय इन्ही सिद्धान्तों या नियमों का प्रयोग किया जाता है। भारत के सभी प्राचीन ग्रन्थ मूलतः हस्तलिखित प्रतियों में ही सुरक्षित थे जो आज हमें प्रकाशित रूप में सहज ही उपलब्ध होते हैं, विभिन्न प्रकाशन कम्पनियाँ जिन्हे पुनः पुनः प्रकाशित कर हम तक पहुँचाती है। हम इक्कीसवीं शताब्दी के लोगो के लिए प्रकाशित पुस्तकें ज्ञान-प्राप्ति के लिए सहज-लभ्य साधन है किन्तु उस काल में जब पुस्तकें हाथ से ही लिखी जाती थी, एक एक ग्रन्थ को लिखने में महीनो, वर्षो का समय लगता था और फिर यदि वह चित्रांकित (Illustrated जैसे महाभारत, पुराणादि, स्तोत्रादि) ग्रन्थ की प्रतिलिपि हो तो लिपिकार/ कायस्थ/ लइया को महीनों का समय उसके पीछे लगाना पड़ता था। मात्र भारत में ही नहीं बल्कि समस्त विश्व में जहाँ-जहाँ लेखन कला व लिपि का विकास था वहाँ हस्तलिखित पुस्तकों में वहाँ का इतिहास, धर्म, विज्ञान, दर्शन, साहित्य सुरक्षित रखा गया। सादे शब्दों में आज जो कुछ भी विश्व का छपा हुआ प्राचीन साहित्य हमें मिलता है वह हस्तलिखित पुस्तकों में ही सुरक्षित था चाहे वह बाइबिल हो या कुरान या महाभारतादि।

अब चूंकि भारत की ज्ञान-संपदा असीमित थी अतः यहाँ हस्तलिखित ग्रन्थों का भी असीमित होना सम्भव हैं। जब तक श्रुति-परम्परा ही ज्ञान संचित अथवा प्रसारित करने का साधन थी तब तक गुरुकुलों, शाखाओं में इन्हें सुरक्षित रखा गया किन्तु एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाने के लिए तथा आने वाली पीढ़ियों के लिए परवर्ती

'स्वाध्याय' - पु. ५६, वर्ष २०१९, पृ. १३७-१५१. ISSN 2250-0391

* प्राच्यविद्यामन्दिर, महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, वडोदरा - ३९० ००१, M: 9426947941

Email: bagchisharmila3@gmail.com

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

काल में जब लिपि का विकास हुआ तब उन्हे लिख कर सुरक्षित रखा गया । लिखने के लिए एक लिपि की आवश्यकता थी जिसकी भाषा सभी के द्वारा अवधार्य हो, तो ब्राह्मी लिपि जो पहले भारत के सर्व साधारण की लिपि थी, इतने बडे विशाल भूखण्ड भारत के विभिन्न प्रदेशों में पहुँचते-पहुँचते अलग अलग भिन्न-भिन्न स्वरूप धारण करती गयी । हाँ भाषा सब जगह एक ही थी - संस्कृत । फिर लिखने की पीठिका अर्थात लिप्यासन (जिस पर लिखा जाता है) भी कई भू-भागों में अलग-अलग तरह के प्रयुक्त होती थी । प्रस्तर (पत्थर),धातुपत्र, मृण्मय, पेपीरस, पशुचर्म, ताड़पत्र, भूर्जपत्र, तूलपत्र, कागज, कपडा, काष्ठ यानि जो भी वस्तु जो क्षणभंगुर नहीं थी, एक निश्चित समय तक उस लिखे पाठ को धारण कर सकती थी, उन सभी को लिप्यासन बनाया गया । भारत में लिपि का विकास कब और कैसे हुआ - यह एक गहन शोध का विषय है । यहाँ हम मात्र हस्तलिखितप्रति अथवा पोथी लेखन की पारम्परिक तकनीक की चर्चा करेंगे ।

सभी प्रकार के लिप्यासनों को लिखने योग्य बनाने के लिए पहले उनका भली-भाँति संस्कार किया जाता था । प्रत्येक प्रकार के लिप्यासन को तैयार करने की अलग पद्धति / तकनीक / टेक्नीक थी ताकि उन पर आसानी से लिखा जा सके, वे अधिक समय तक टिके रहे, उन पर कीड़े आदि का तुरन्त उत्पात न हो सके। चूंकि ये सभी लिप्यासन (प्रस्तर, धातु को छोड़ कर)जैवीय पदार्थों से बनते थे अतः प्रतिकूल मौसम, फफूंद, सीलन, कीड़े जैसे दीमकादि आदि से बचाने के लिए भी प्रारम्भिक उपाय किये जाते थे । इर उन पर प्रयोग होने वाली स्याही, रंग आदि का मिश्रण तैयार करने की भी पद्धति/टेक्नीक थी जो पूर्णतया प्राकृतिक थी । ये मिश्रण सही अनुपात में बनाने होते थे अन्यथा लिप्यासन को नष्ट कर देते थे । इन लिप्यासनों को बनाने के लिए तकनीकों का प्रयोग किया जाता था क्योकि ग्रन्थों को वर्षो तक सुरक्षित रखना होता था ।

लिप्यासनों के प्रकार

लिप्यासन दो प्रकार के होते थे - कोमल और कठोर । कोमल पर लिखा जाता था और कठोर पर उत्कीर्ण किया जाता । कोमल प्रकार जो लेखन हेतु होती थी उनमें ताड़पत्र, भोजपत्र या भूर्जपत्र (वृक्ष की छाल), अगरुत्वक् (वृक्ष की छाल), पटीय (वस्त्रनिर्मित), पशुचर्म निर्मित, कागजीय, काष्ठकीय आदि आते है । कठोर प्रकार में प्रस्तरीय (पत्थर), मृण्मय (मिट्टी से बने खण्ड, ईट आदि), सीप-दंतिका (हाथी दाँत से बने), ताम्र-पत्र, स्वर्ण/ रजत-पत्रादि धात्वीय हस्त-लेख ।

मुख्यतः हस्तलिखितग्रन्थों की प्रतियाँ कोमल लिप्यासनों जैसे ताड़पत्र, वृक्ष की छालों, कागज, पशुचर्म आदि पर प्राप्त होती है । इन लिप्यासनों को लिखने योग्य बनाने की एक पद्धति होती थी जिसे लगभग हर लिप्यकार किसी भी प्रदेश में अनुसरण करता था क्योकि ग्रन्थों को वर्षों तक सुरक्षित रखना होता था । यो ही ताड़ के पेड़ से पत्तें तोड़ कर या पेड़ की छाल निकाल कर उन पर लिखना शुरु नहीं कर देते थे । ग्रन्थों को लिखने के बाद यह ग्रन्थ के अधिकारी की जिम्मेदारी होती थी कि वह उन्हे कीड़े, चूहे, फफूँद, पानी, आग आदि से सुरक्षित कर भली-भाँति संचित रखे । यहाँ हम लिप्यासनों के संस्कार के बारे में एक सामान्य परिचय लेते है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रस्तरनिर्मित

पत्थर पर अक्षर उत्कीर्ण करने के लिए उचित शिला का चुनाव शिल्पकार करता था। पत्थर पर लिखने के लिए सामान्य लेखक[१] की जगह मूर्तिकार या शिल्पकार की आवश्यकता होती थी। पत्थर के खण्ड मात्र अभिलेख लिखने के लिए ही प्रयोग में आते हो ऐसा नहीं है। उन पर ग्रन्थ भी लिखे जाते थे। कहा जाता है कि संस्कृत का संभवतः पहला महानाटक **हनुमान्नाटक** प्रस्तर-खण्ड पर ही लिखा गया था जिसे बाद में धारानरेश भोजदेव ने समुद्र-तल से उद्धार कर काशीनाथ मिश्र द्वारा ग्रथित करवाया। काशीनाथ के पुत्र बलभद्र ने इसकी टीका बनायी। संभवतः ईसा की दसवीं सताब्दी में इसका शिलांकन हुआ हो।[२] किन्तु इसके प्रमाण उपलब्ध नहीं है। अभिलेखों के अतिरिक्त शिलाओं पर दान-पत्र, काव्य, नाटिका आदि उत्कीर्ण किये जाने की भी चर्चा प्राप्त होती है।

धातु-पत्र (Copper-plates)

मूलतः दानपत्रादि के सन्दर्भ में तांबे से बने पत्रों पर विषय-वस्तु उत्कीर्ण की जाती थी। कहीं कही पूरे पूरे ग्रन्थ भी ताम्रपत्र पर प्राप्त होते है जैसा कि चित्र में कुरान की ताम्रपत्र पर उत्कीर्ण हस्तप्रति दिखायी गयी है। किसी किसी ग्रन्थागार में पीतल धातु पर भी कृतियॉ प्राप्त होती है। धातु पत्र पर पत्थर के समान छैनी व हथौड़े से अक्षर उत्कीर्ण किये जाते थे।

(चित्र सौजन्यः The Word is Sacred, Sacred is the word पुस्तक से)

१. सामान्य लेखक से यहाँ ग्रन्थ लिखने वाले से तात्पर्य है जिसे लिपिकार, कायस्थ, दिविरपति, करणक अथवा कारनिन्, शासनिक, धर्मलेखिन् कहा जाता था।

२. पाण्डुलिपि-विज्ञान - डॉ. सत्येन्द्र, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादेमी, जयपुर.१९७८ पृ. १३८

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ताड़पत्र (Palm Leaf)

भारत में प्राचीन-काल से मुख्यतः ताड़पत्र पर ही लिखे जाते थे विशेषकर समुद्रतटीय इलाकों में ताड़पत्र/तालपत्र के ग्रन्थ अधिकता से मिलते है क्योकि वहाँ के आर्द्र-वातावरण में ताड़पत्र ही सुरक्षित रहते है । दो प्रकार के ताड़पत्र लिखने के लिए प्रयोग किये जाते थे - श्रीताड़/श्रीताल और खरताड़/खरताल । भारत में पोथी लिखने के लिए श्रीताड़ के पत्तों का ही प्रयोग किया जाता था क्योकि इसके पत्ते खड़ताड़ की तुलना में अधिक लम्बे, लचीले और पतले होते है और भारत में श्रीताड़ के वृक्ष सहज-लभ्य हैं । इसके पत्ते ३७ इंच तक लम्बे (या अधिक भी)तथा तीन इंच तक चौड़े होते है । ताड़पत्रों पर लोहे की कलम(Stylus) से कुरेद कर लिखा जाता था । किन्तु उसके पहले उन्हे गर्म पानी में उबाल कर, छाँह में सुखा कर, शंख या कौड़ी से रगड कर चिकना बनाया जाता था । तत्पश्चात् उन पर कुरेद कर पत्र के दोनो ओर लिखा जाता था । पढ़ते समय पत्रों पर स्याही या काजल लेप दिया जाता था जिससे अक्षर स्पष्ट हो उठते थे । प्रत्येक पत्र के बीच में एक या दो छिद्र रखे जाते थे जिसमें डोरी पिरो कर ग्रन्थ को बाँध कर रखा जाता था ।

ताड़पत्र के ग्रन्थों के लिए शुष्क जलवायु हानिकारक होती है क्योकि तब ये अधिक शुष्क हो जाते है । इस कारण उन्हे समय-समय पर तेल लगा कर आर्द्र रखा जाता है । हमारे प्राच्य-विद्यामन्दिर में इन्हे सिट्रोनिला ऑयल (Citronella oil) या नारंगी का तेल लगा कर सुरक्षित रखा जाता है और इससे पत्र के अक्षर भी पढ़ने के लिए स्फुट हो जाते है ।

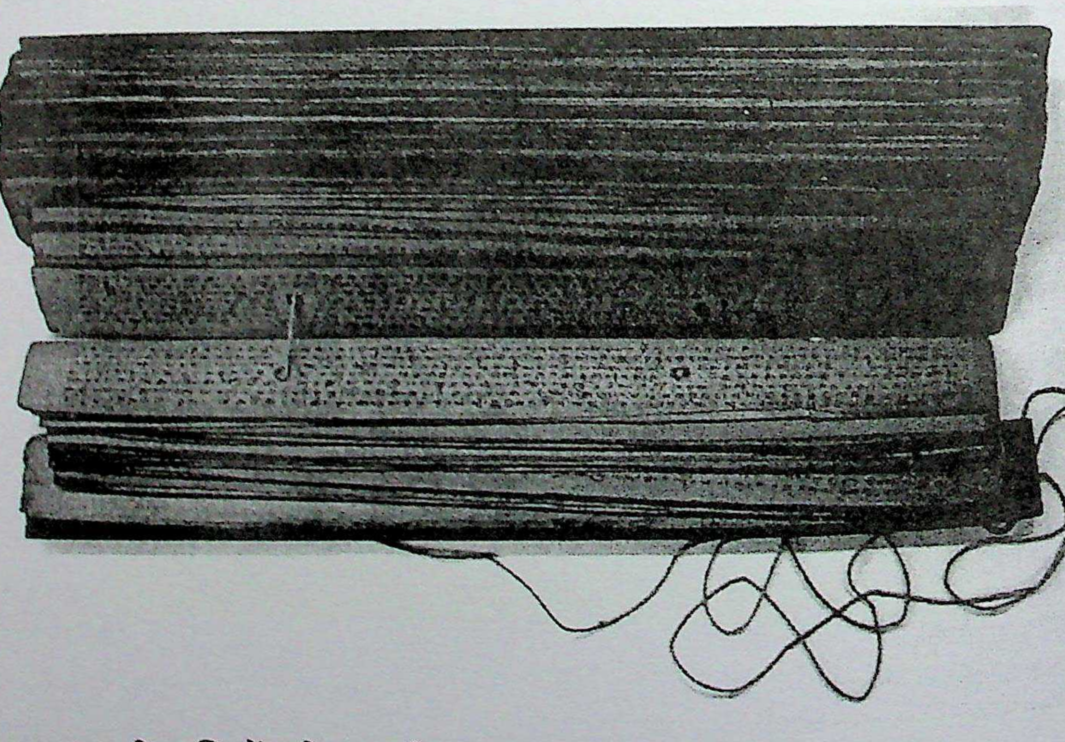

(प्राच्यविद्यामन्दिर में सुरक्षित हस्तप्रति)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भूर्जपत्र (Birch Bark)

कश्मीर क्षेत्र व हिमालय की तराईवाले क्षेत्रों में पाये जाने वाले **भूर्ज** नामक पेड़ की छाल पर स्याही से ग्रन्थ लिखने की परम्परा का आरम्भ लगभग ईसापूर्व पहली शताब्दी या ईसा की दूसरी शताब्दी तक हो चुका था[3] । यह भूर्जपत्र कश्मीरादि क्षेत्रों में आज भी उपलब्ध है । लगभग ६० फीट लम्बी भूर्ज के वृक्षों की तीन परतों वाली छाल के अंदरुनी भाग जो कागज की तरह अथवा रेशमी कपड़े जैसा होता है जिसे लेखक अपनी आवश्यकतानुसार आकार व माप में काट लेता है, फिर उस पर ग्रन्थ लिखा जाता है । चिकना होने के कारण इस पर लिखने से पूर्व और कुछ नहीं करना होता है किन्तु यह अल्पजीवी होते है, अल्प शुष्क वातावरण में ही टूटने लगते है । भूर्जपत्रों पर शारदा-लिपि में लिखे गये ग्रन्थ कश्मीर क्षेत्र में आज भी मिलते है । खोतान से ईसा की दूसरी शताब्दी के धम्मपद (बुद्ध के) के कुछ अंश भूर्जपत्र पर प्राप्त होते है जो भूर्जपत्र की प्राचीनतम पाण्डुलिपि मानी जाती है । इन्हे लम्बे समय तक सुरक्षित रखने की किसी तकनीक का विकास नहीं हो पाया सिवा इसके कि पुरानी प्रति नष्ट होने से पहले ही उसकी नयी प्रतिलिपि बना ली जाये ।

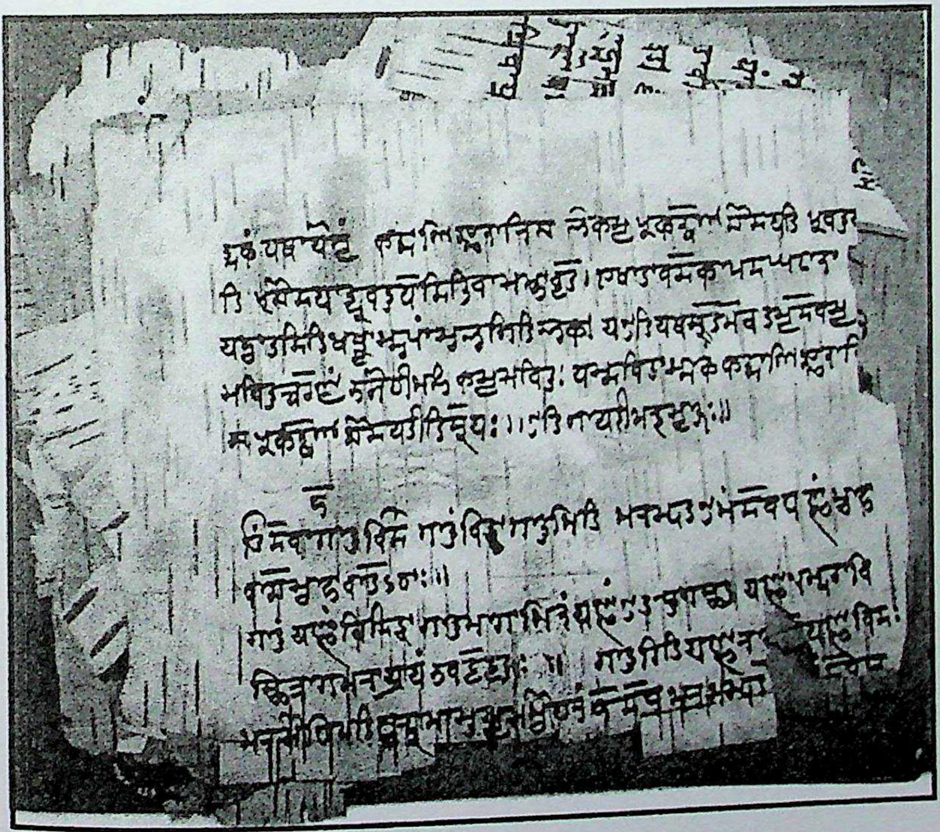

(प्राच्यविद्यामन्दिर में सुरक्षित हस्तप्रति)

३. वही पृ. १४६

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

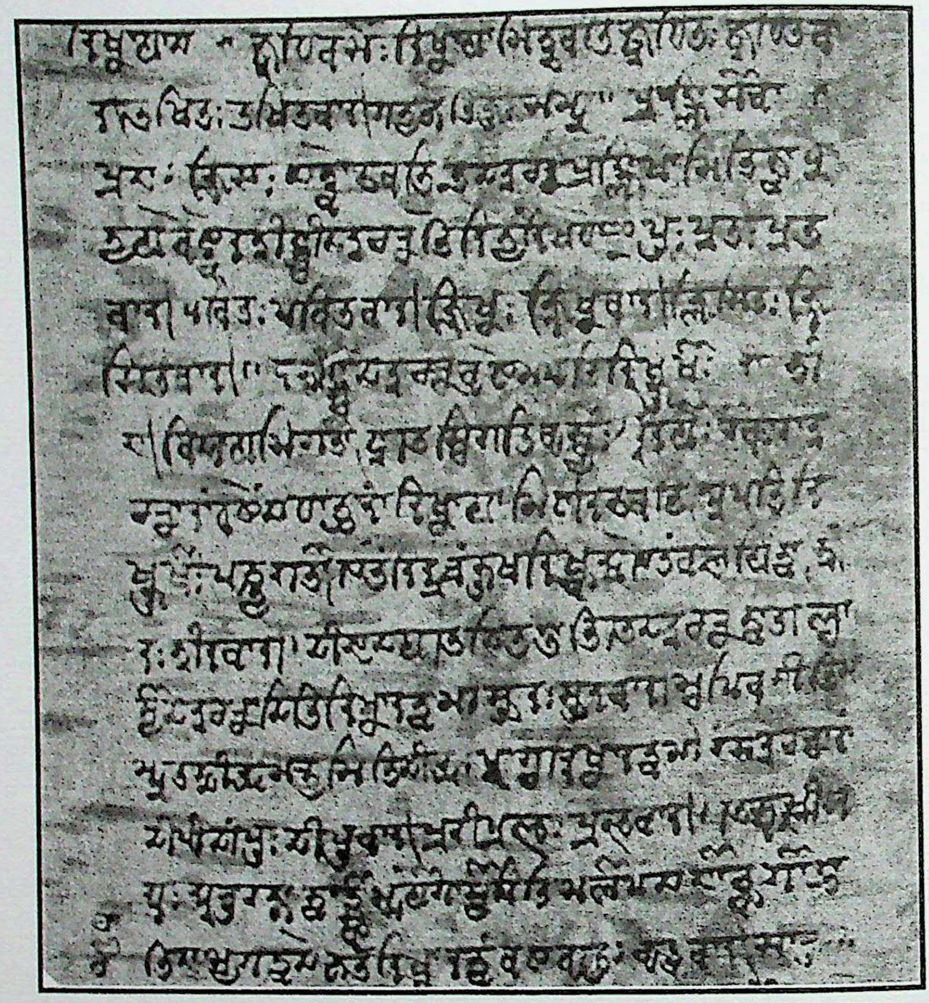

(चित्र सौजन्यः The Word is Sacred, Sacred is the word पुस्तक से)

सांचीपात (Sanchipat)

भूर्जपत्र की तरह आसाम में अगरुवृक्ष की छाल पर ग्रन्थ लिखने की परम्परा रही । असमिया भाषा में इसे हांचीपात (असमिया भाषा में **स** को **ह** उच्चारण किया जाता है) । किन्तु इस पेड़ की छाल को लिखने योग्य बनाने की प्रक्रिया बड़ी श्रमसाध्य एवं जटिल थी/है (आज भी आसाम में चित्रादि बनाने के लिए सांचीपात का प्रयोग किया जाता है) । इस लिप्यासन को बनाने के लिए कोई १५-१६ वर्ष पुराना वृक्ष चुना जाता है । जमीन से करीब चार फुट की ऊँचाई से छः फुट से अठारह फुट तक लम्बी और सत्ताइस इंच चौड़ी छाल की पट्टियाँ काट लेते है । ऊपर के खुरदुरे भाग को बाहर रख कर गोल लपेट कर पानी में डुबो कर एक रात रखते है । फिर सात-आठ दिन धूप में सुखाते है । तत्पश्चात किसी तीक्ष्ण पत्थर या चाकू की सहायता से खुरदुरे भाग को घिसते है जिससे वह चिकना हो जाये । इस शुद्ध छाल से नौ से सत्ताइस इंच लम्बे और तीन से अठारह इंच चौड़े टुकडे सुविधानुसार काट लिए

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जाते है । पुनः इन्हे एक घण्टे के लिए ठण्डे पानी में डुबो कर क्षार छिड़का जाता है । बाहर निकाल कर इनकी नरम सतह को पकी ईंट से घिस कर और चिकना बनाया जाता है । फिर इसे गन्धक के धुयें में रखा जाता है ताकि उसमें स्थित विनाशक कीटों का नाश हो जाये । लिखने से पहले इन पर माटीमाह का लेप कर धूप में सुखाते है जिससे ये एकदम संगमरमर के समान सफेद व चिकने हो जाते है । इन पर राजाओं- सरदारों के लिए मुख्यतः पवित्र धर्मिक ग्रन्थ, स्तोत्रादि ही लिखे जाते थे । (प्राच्य-विद्यामन्दिर में सांचीपात पर बंगला लिपि में भागवतपुराण की हस्तप्रतिलिपि है) पत्र के बीच में छिद्र बना कर उसमें डोरी डालने की व्यवस्था रहती है । ये पत्र दीर्घायु होते थे । बाण (सातवी शताब्दी) के हर्षचरित में अगरुत्वक् का सन्दर्भ पाया जाता है ।[४] आज भी कलङ्कलाकेन्द्र में श्री चित्तरञ्जन बोरा सांचीपात से तैयार पत्रों पर चित्र बनाना व ग्रन्थ लिखना सिखाते है (यूट्यूब पर द्रष्टव्य -Reviving Assam's Heritage of Manuscript painting and writing on Sanchipat)

(प्राच्यविद्यामन्दिर में सुरक्षित हस्तप्रति)

कागजीय (Paper)

प्रायः कहा जाता है कि सर्व प्रथम ईसवीं सन् १०५ में चीन के लोगो ने कागज बनाया । किन्तु ईसा से ३२७ वर्ष पूर्व जब यूनान के बादशाह सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण किया तब उनके सेनापत निआर्कस ने लिखा कि भारत के लोग रुई (कपास) से कागज बनाते थे । इसकी पुष्टि एरियन ने अपनी इण्डिका नामक पुस्तक में की

४. अगरुवल्कलकल्पितानि सञ्चयानि च सुभाषितभाञ्जि पुस्तकानि परिणतपाटलपटोलत्विषि.....बाणभट्टकृत हर्षचरित, सप्तम उच्छवास, सं. पी. वी. काणे, निर्णयसागर प्रेस, मुम्बई, प्रथम संस्करण, १९१७, पृ. ६१

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है । मैकसमूलर ने भी **History of Ancient Indian Literature** में इसी आधार पर भारतीयों के रुई को कूट कर कागज बनाने का कला से अवगत होने की बात कही है[५] । इसे शणपत्र या कागद कहा जाता था । इससे पता चलता है कि रुई व चिथड़े (फटे पुराने कपड़े के टुकड़ो) को भिगो कर लुगदी बनाने और उसको कूट कर कागज बनाने की कला से भारतवासी ईसा से चार शताब्दी पूर्व भी परिचित थे किन्तु ये शणपत्र ताड़पत्र जैसे टिकाऊ नहीं होते थे इस कारण इन पर लिखे बहुत ग्रन्थ प्राप्त नहीं होते ।

चीन से आयातित पद्धति के अनुसार कागज का निर्माण भारत में कब प्रारम्भ हुआ यह नहीं कहा जा सकता किन्तु भारत में यह एक गृह-उद्योग के रूप में विकसित हुआ था । काश्मीर, दिल्ली, पटना, शाहाबाद, कानपुर, अहमदाबाद, खंभात, कागजपुरा (दौलताबाद), घोमुण्डा और सांगानेर (राजस्थान) आदि में कागज के उद्योग थे । हाथ से कागज बनाने की पद्धति वही थी-पुराने कागज और चिथड़ो को भिगो कर, गला कर लुगदी बना कर हाथ से कूट कर दीवार पर फैला दिया जाता था (बहुत कुछ उपलों की तरह) । सूखने पर इन्हे शंख/कौड़ी अथवा हाथी-दॉत के गोल टुकड़ो से घोंट कर चिकना बनाया जाता था जिससे पन्ने पर स्याही इधर-उधर नहीं फैलती । काशमीरी, मुगलिया, अरवाल, साहबखानी, खम्भाती, राणिया, अहमदाबादी, दौलताबादी आदि कागजों के प्रकार थे जिस पर लिखे ग्रन्थ ग्रन्थागारों में पाये जाते हैं । ये नाम कभी उनके निर्माणस्थल के नाम पर तो कभी उसके निर्माता के नाम पर अथवा कभी उसमें प्रयुक्त सामग्री के आधार पर प्रसिद्ध हुए । देशी कागज विलायती कागज की तुलना में ज्यादा मजबूत होता था इस कारण ग्रन्थ, राजकीय कार्य और दस्तावेजादि देशी कागज पर ही बनाये जाते थे । इन पर लिखी इबारत भी समय के साथ फीकी नहीं पड़ती थी । और अब तो हमने प्राच्य-विद्या-मन्दिर में प्रत्यक्ष देखा है कि संरक्षण की प्रक्रिया के दौरान पानी में डुबोने पर भी यह कागज अथवा इसकी स्याही नष्ट नहीं होते ।

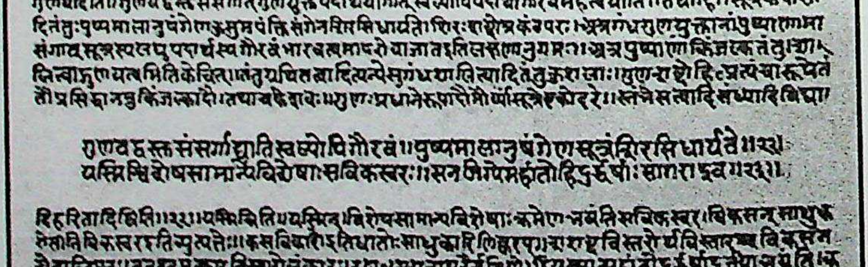

गुणवद्वस्तुसंसर्गाद्याति स्वल्पोऽपि गौरवम् । पुष्पमालानुषङ्गेण सूत्रं शिरसि धार्यते ॥२२॥

(प्राच्यविद्यामन्दिर में सुरक्षित हस्तप्रति)

५. वही. पृ. १४९

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तूलपत्र अथवा तूलीपात (Compressed Cotton)

आसाम में प्राचीन से प्रयुक्त होने वाला तूलिपात एक तरह का कागज ही होता था जो वृक्ष की लकड़ी के रेशें से बनाया जाता था । वृक्ष की छाल को उपयुक्त मात्रा में निकाल कर खूब कूटा जाता है जिससे उसके रेशे ढीले पड़ जाते है । फिर उसे पानी में उबाला जाता है ताकि इसका एक एक कण ढीला हो जाये । फिर अलग अलग माप वाली आयतकार तश्तरियों में पानी भर कर उस पर इस मिश्रण को फैलाते है और ठण्डा होने के लिए रख देते है । ठण्डा होने पर यह कल्क/मिश्रण सख्त कागज के रूप में जम जाता है । साधारणतया तूलिपात के दो पत्रों को दोहरा करके सिल लिया जाता है । यह एक विशुद्ध भारतीय कागज का एक प्रकार है । आज भी चीन आदि देशो में इस पद्धति से भी देशी कागज बनाये जाते है (यूट्यूब पर द्रष्टव्य) । आसाम में लखीमपुर जिले में इस कागज के गृह-उद्योग थे ।

(प्राच्यविद्यामन्दिर में सुरक्षित हस्तप्रति)

पटीय या सूती-कपड़ा (Cloth)

पटचित्र बनाने के लिए, यन्त्र-मन्त्र लिखने के लिए रुई से बुना सूती कपड़ा भी प्रयोग में लाया जाता था । लेखन से पहले कपड़े के बीच-बीच में आये छिद्रों को बन्द करने के लिए लेई, चावल का मांड अथवा मोम की परत लगा कर सुखा लेते थे । फिर अकीशा, शंख, कौड़ी आदि से घिस कर चिकना बना कर उस पर लेखन या चित्रण कार्य होता था । इस तरह की पट-चित्र-कला ग्रामीण अंचलो में आज भी जीवित है । बंगाल-उड़ीसा के **पट-चित्र**, श्रीनाथजी की **पिछवाईयाँ**, राजस्थान के **पड़** आज भी लोगो को आकर्षित करते है ।

चर्म-निर्मित लिप्यासन

मध्ययुग में पाश्चात्य देशों व अरब देशों में चमड़े से बने लिप्यासनों पर स्याही से लिखा जाता था (अंग्रेजी में इसे पार्चमेण्ट Parchment कहा जाता है) भेड़, बकरी या गाय के चर्म को संशोधित कर इतना चिकना बना दिया जाता था कि वे कागज जैसे प्रतीत होते थे । उन पर ग्रन्थ लिख कर बाद में उन्हे पुस्तक के समान सिल कर **बाइन्ड** किया हुआ रूप देकर पुस्तक के आगे-पीछे धातु अथवा काष्ठ का आवरण लगा दिया जाता था । ये बहुत मजबूत होती थी तथा शताब्दियों तक टिकी रहती थी । इन पर बनाये चित्र भी बहुत आकर्षक तथा सदैव नवीन से लगते

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है । बाइबिल, कुरान, ग्रीक-साहित्य, अरबी-फारसी साहित्य के अनेक ग्रन्थ चर्म-पत्रों पर प्राप्त होते है । (विशद रूप में दृष्टव्य यूट्यूब पर Making of Manuscripts)

ग्रन्थों के आकार

मात्र लिप्यासन तैयार करने की पद्धति ही तकनीक सम्मत नही होती थी बल्कि ग्रन्थों के आकार भी ग्रन्थकार के कला-चातुर्य एवं दक्षता को प्रदर्शित करते थे । ये ग्रन्थ उनके कार्य के प्रति समर्पण एवं धैर्य के जीते जागते उदाहरण होते है । ये हस्तलिखित प्रतियाँ किसी निश्चित आकार की ही नही होती बल्कि उनके कई प्रसिद्ध प्रकार थे - गण्डी, कच्छपी, छेदपाटी या छिवाडी, सृपाटिका आदि ।

गण्डी - जिस ग्रन्थ की मोटाई और चौड़ाई समान हो कर लम्बाई ज्यादा होती है (Rectangular)वह गण्डी कहलाती है जैसि ताड़पत्र या कागज पर लिखे गये आयताकार ग्रन्थ । हस्तलिखित ग्रन्थ मुख्यतः गण्डी आकार में ही प्राप्त होते है ।

कच्छपी - कछुए के आकार के अर्थात किनारो पर संकरी तथा बीच में चौड़ी पुस्तके कच्छपी कहलती है । इसके छोर या तो त्रिकोण या तो गोलाकार होते है । खेद है कि प्राच्य-विद्यामन्दिर में इस प्रकार का कोई ग्रन्थ संरक्षित नहीं है ।

मुष्टि - छोटे आकार की मुष्टिग्राह्य पुस्तकों को मुष्टि ग्रन्थ कहते है । इनकी लम्बाई चार अंगुल तक हो सकती है । प्राच्य-विद्यामन्दिर में ताड़पत्र की मुष्टि-पुस्तक संरक्षित है । गुटकों (सिली हुई पुस्तकाकार)को भी मुष्टि-पुस्तक में सम्मिलित किया जा सकता हैं ।

छेदपाटी या छिवाडी - इनके आकार-प्रकार कितने भी बड़े हो किन्तु मोटाई में संख्या कम होती हैं (कम पृष्ठ होते है) वस्तुतः यह देखने में पाटी जैसे ही दिखते है ।

कुण्डली/वलयित या खरडा- स्क्राल (Scroll)

कितने भी बड़े ग्रन्थ एक कागज या कपड़े की लम्बी पट्टिका पर लिख कर कुण्डलित अवस्था में एक स्थान से दूसरे स्थान पर आसानी से ले जाये जा सकते थे । प्राचीन काल में मिस्र में पेपीरस से बने कागज पर कुण्डली ग्रन्थ लिखे जाते थे । प्राच्य-विद्यामन्दिर को गर्व है कि उसके पास महाभारत, भागवतपुराण तथा गीता के सचित्र कागजीय कुण्डलित ग्रन्थ संरक्षित हैं । ये ग्रन्थ सूक्ष्म-चित्रकारी एवं सूक्ष्म-लेखन के अद्वितीय उदाहरण है । सम्पूर्ण महाभारत के एकलाख श्लोक सुनहरे बार्डर से अलंकृत २२८ फीट लम्बी एवं ५.५ इंच चौड़ी स्क्राल में काली स्याही द्वारा लिखे गये हैं । अक्षरौं की सूक्ष्माकृति के कारण पहली नजर मे ये चींटी के समान दिखायी देते है । सम्पूर्ण भागवतपुराण ८४ फीट लम्बा एवं ५.५ इंच चौड़ा कुण्डलित ग्रन्थ सूक्ष्माक्षर एवं सूक्ष्म चित्रकारी के कारण अद्भुत है । इसके बीच-बीच में अध्याय से सम्बन्धित सूक्ष्म चित्र दर्शकों को आश्चर्य से भर देते है । इसी तरह सुनहरे अक्षरों से लिखी सम्पूर्ण भगवद्गीता जो २३ फीट लम्बी है एवं सुन्दर अलंकृत बार्डर से युक्त है । इसी तरह कुण्डलित आकार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के कुछ चित्रित जैन विज्ञप्ति-पत्र अथवा चित्राङ्कित-लेख संस्थान में संरक्षित है । संभवतः पत्र-लेखन, जन्म-पत्रिका लेखन, राजकीय-कागजात जैसे वसीयत आदि से प्रेरित हो कर इस प्रकार से ग्रन्थ-लेखन की प्रेरणा मिली हो ।

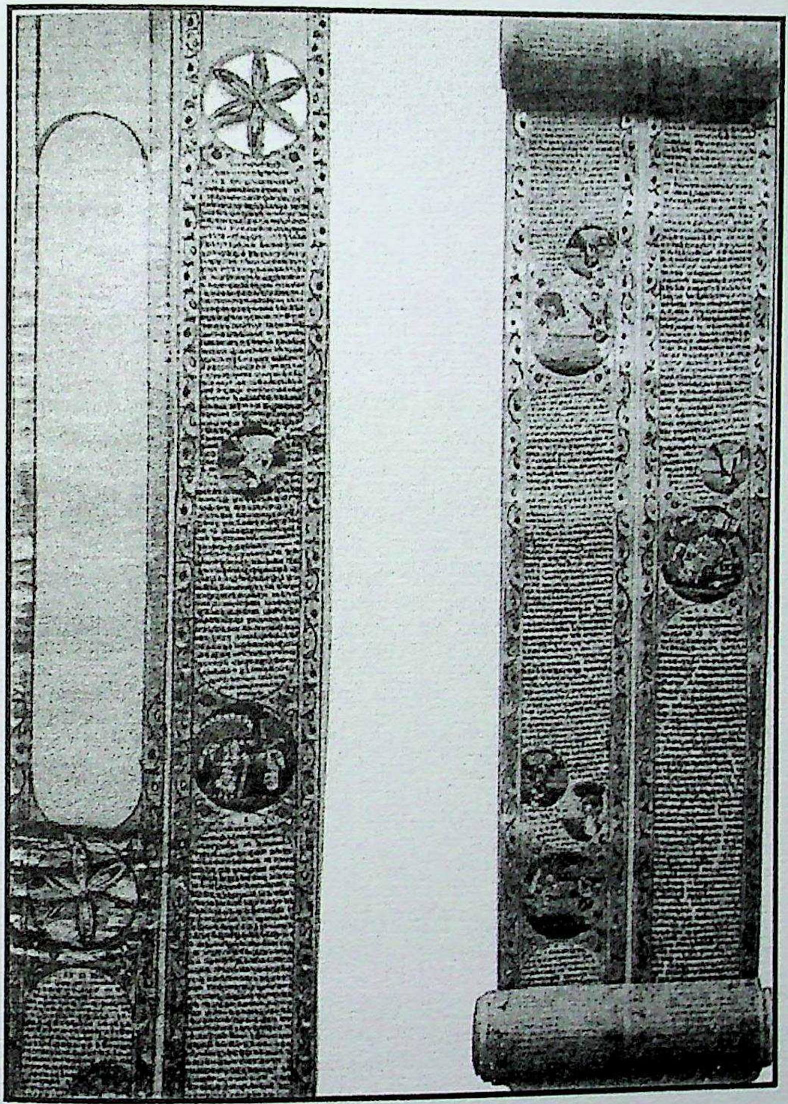

(चित्र सौजन्यः The Word is Sacred, Sacred is the word पुस्तक से)

पाठ-लेखन के प्रकार

सामान्यतः ग्रन्थ-लेखन में पृष्ठ के आरम्भ से लेकर अन्त तक सीधी-सीधी पंक्तियों में विषय-वस्तु लिखी और आधे भाग में पाठ-लेखन होता था । किन्तु कल्पनाशील लेखकों ने चित्र रहित पाठ-लेखन में कई प्रयोग किये विशेष कर जैन ग्रन्थ-लेखकों ने इसमें कई सुन्दर प्रयोग किये -

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

द्विपाठ-लेखन - पृष्ठ को बराबर दो भागों में विभाजित कर बीच की विभाजित रेखा को सुन्दर तरह से सजा कर विषय-वस्तु को दोनो भागों में लिखा जाता है ।

त्रिपाठ-लेखन - यदि पाठ में मूल और टीका दोनो साथ में है तो पृष्ठ के बीच में मूल-पाठ लिख कर उपर और नीचे के भाग में टीका लिखी जाती थी । मूल और टीका-पाठ में स्पष्ट भेद दिखाने के लिए संभवतः दोनो पाठ के अक्षरों में भेद होता था यानि भिन्न अक्षर आकार का (Font Size) प्रयोग किया जाता था ।

पञ्चपाठ-लेखन - यह बहुत ही सुन्दर पाठ-लेखन प्रकार है । पृष्ठ के मध्य में मूलपाठ एवं चारो तरफ के हाशिए (मार्जिन) में सूक्ष्माक्षरों में टीका । पूरा पृष्ठ ही मानो छोटे-छोटे अक्षरों से छपा हुआ दिखायी देता है । प्राच्य-विद्यामन्दिर के प्रदर्शन-कक्ष में इन तीनों प्रकार के पाठ-लेखन के निदर्शन देखे जा सकते है ।

ग्रन्थों में चित्र

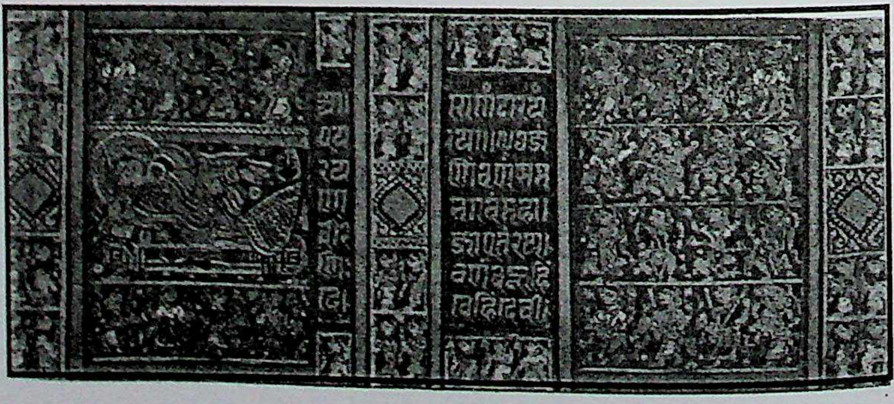

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

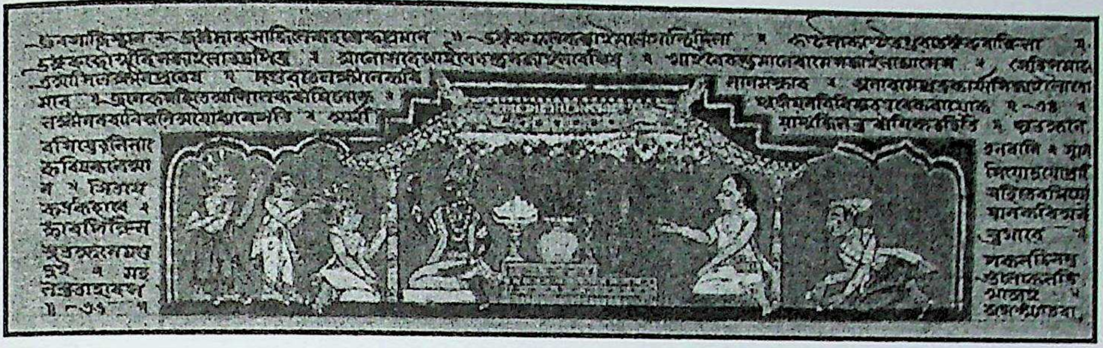

(चित्र सौजन्यः The Word is Sacred, Sacred is the word पुस्तक से)

ग्रन्थों में चित्राङ्कन की परम्परा भी बहुत प्राचीन है। मध्य-युग में पाश्चात्य देशों में प्राप्त विशेष कर धर्म-ग्रन्थों में चित्राङ्कन की परम्परा थी। भारत में ११वीं शती से १६वीं शती के बीच एक चित्रशैली प्रचलित हुई जिसे **अपभ्रंश शैली** नाम दिया गया[६]। मुख्यतः ये चित्र जैन-धर्म सम्बन्धी पोथियों में बीच-बीच में छोड़े हुए चौकोर स्थानों पर बनाये जाते थे। भगवती-सूत्र, कल्प-सूत्र, कलकाचार्य-कथा की सुन्दर चित्राङ्कित पाण्डुलिपियाँ प्रायः हर पाण्डुलिपि-ग्रन्थागार में मिल जायेंगी। इस शैली के अतिरिक्त अन्य ग्रन्थों में भी भिन्न चित्र-शैली के सुन्दर उदाहरण मिलते है। प्राच्य-विद्यामन्दिर में पूर्णतः सचित्र **सौन्दर्यलहरी** की हस्तप्रतिलिपि (अब प्रकाशित) जगद्विख्यात है। **पञ्चरत्नगीता** की कितनी ही सचित्र-प्रतियाँ हैं। चित्राङ्कित पाण्डुलिपियों के रख-रखाव में विशेष ध्यान देना होता है। ताड़पत्र पर भी चित्रित पाठ प्राप्त होते है, जो कभी रंगीन तो कभी स्टाइलस से उत्कीर्ण किये हुए होते हैं।

स्याही

पाण्डुलिपि-लेखन में स्याही का सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान है। ताड़पत्र को छोड़ कर अन्य सभी लिप्यासनों पर लिखने के लिए स्याही का प्रयोग किया जाता था यद्यपि कुछ ताड़पत्र के ग्रन्थों में काली स्याही का प्रयोग देखने को मिलता है। लिखने के लिए काली स्याही का ही प्रयोग सर्वत्र होता था। किन्तु कागज पर और ताड़पत्र पर प्रयुक्त होने वाली काली स्याही में भेद होता है।

मूलतः स्याही में काले रंग के लिए काजल का प्रयोग अनिवार्य था। इसकी अनेक विधियाँ प्रचलित थी किन्तु आधारभूत भाव यही था कि यह घोर काले वर्ण का होना चाहिए ताकि कमजोर दृष्टि वाले भी इसे पढ़ सके। एक विध्यानुसार तिल के तेल वाले दीपक से बने नये काजल को सकोरे (मिट्टी की कटोरी) में इतना मले (घोंटे) कि उसका चिकनापन खत्म हो जायें। फिर नीम या खैर की गोंद को वियाजल (अल्प उष्णजल) के मिश्रण से उसमें मिला कर खूब घोंटे। पानी सूख जाने पर उसकी गोलियाँ बना ले। बाद में गर्म-पानी में इन गोलियों को अच्छे से मसल कर स्याही बना लें। श्री गौरीशंकर ओझा द्वारा उल्लिखित एक अन्य अत्यन्त मान्य एवं उत्कृष्ट विधि

६. वही पृ. १६०

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अनुसार[७] पीपल की लाख (सूखा लाक्षारस) को जो अन्य वृक्षों की लाख से उत्कृष्ट समझा जाता है,को पीस कर हांडी में रखे जल में डाल कर आग पर चढ़ाते है । फिर उसमें सुहागा और लोध्र पीस कर डालते है । उबलते-उबलते जब लाख का रस इस हद (सीमा) तक घुल जाता है कि वह लाल रंग का हो जाता है और कागज पर खींचने से लाल रंग की लकीर बनती है तो उसे उतार कर छान लेते है । यह अलक्तक (आलता) कहलाता है । फिर तिलो के तेल के दीपक से बने काजल को पोटली में बाँध कर इस अलक्तक में तब तक घुमाते है जब तक की वह काला न हो जाय और उससे काले अक्षर न बनने लगे । फिर उसे दवात (मसीभाजन) में भर लेते है । राजस्थान में पुस्तक-लेखक आज भी इसी तरह से स्याही बनाते है । भूर्जपत्र पर लिखने की स्याही में बादाम के छिलकों को गोमूत्र में उबाल कर स्याही बनायी जाती है[८] । इस तरह की स्याही हस्तप्रति के पृष्ठों को नुकसान भी नहीं पहुँचाती व बीच-बीच में पानी द्वारा धोये जाने पर फीकी भी नही पड़ती ।

स्याही बनाने की कई विधियाँ थी किन्तु इस बात का सदैव ध्यान रखना होता था कि वह कागज, कपड़े अथवा छाल के लिप्यासन को क्षति न पहुँचाये । यदि मिश्रण में कोई भी सामग्री कम-ज्यादा हो जाये तो वह कागज को खा लेती थी, अक्षर सूख कर उखड़ जाते थे अथवा कपड़े अथवा वृक्ष का छाल को सख्त बना देती थी ।

रंगीन स्याही

लिखने में काली स्याही के बाद लाल स्याही का प्रयोग होता था । लाल स्याही दो प्रकार की होती थी एक अलक्तक या आलता दूसरा हिंगोलक या हिंगलू । लाल स्याही का प्रयोग मार्जिन खींचने, अध्याय के समाप्त होने के प्रतीक चिन्ह बनाने, वेद-मन्त्रों के स्वरों को चिन्हाङ्कित करने, आज की भाषा में कहे तो **हाईलाइट** करने के लिए किया जाता था । बाद में नीली, हरी, पीली स्याही का प्रयोग भी कुछ जैन-ग्रन्थों में देखने को मिलता है । हरताल से पीली स्याही बनाते थे जिसे बहुधा पाठ में लिखे गये गलत अक्षर को लुप्त करने के लिए अथवा गलतियों को छुपाने के लिए प्रयोग करते थे । आज के सन्दर्भ में इसे **वाइट्नर** (Whitener) कह सकते है ।

सुनहरी एवं रुपहरी - सोने और चाँदी की स्याही का प्रयोग राजा-महाराजा लोग ग्रन्थ लिखवाने के लिए करते थे क्योकि वे ही कीमती स्याहियों का व्यय वहन कर सकते थे । ये स्याहियाँ सोने-चाँदी के वरक से बनती थी । वरक को गोंद के साथ खरल में डाल कर खूब कूटते थे । जब चूर्ण बन जाता था तो इसे शक्कर के पानी में खूब हिलाया जाता था । चूर्ण पात्र में नीचे तल में बैठ जाने पर पानी निकाल लेते थे । इस प्रकार दो तीन बार धो लेने पर गोंद लिकल जाती थी और शेष रह जाती थी स्याही[९] । प्राच्य-विद्यामन्दिर में सुनहरी स्याही से लिखा सम्पूर्ण भगवद्गीता एवं भागवतपुराण के दो स्क्राल है जो महाराज सयाजिराव गायकवाड़ तृतीय द्वारा प्रदत्त अनेक व्यक्तिगत बहुमूल्य उपहारों में संचित हैं ।

---

७. भारतीय लिपिमाला - गौरीशंकर ओझा, पृ. १५५, पाण्डुलिपि-विज्ञान, पृ. ५८ में उद्धृत

८. वही

९. पाण्डुलिपि-विज्ञान, पृ. ६६

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चित्रों के रंग

जिन हस्तलिखित प्रतियों में पाठ के साथ चित्र भी प्राप्त होते है उन्हें चित्राङ्कित Illustrated कहते हैं । यह प्रवृत्ति सम्भवतः १४वीं शताब्दी से प्रारम्भ हुयी । जैन चित्र-शैली जिसे अपभ्रंश चित्र-शैली कहते है, इस शैली के चित्र ११वीं से १६वीं शताब्दी तक के ग्रन्थों में मिलते हैं । मात्र कागज ही नही, ताड़पत्र की हस्तप्रतियों में भी रंगीन चित्र प्राप्त होते है । विभिन्न रंगो की स्याही बनायी ज़ाती थी । लाल-रंग हिंगोलक, अलक्तक अथवा लाक्षारस से बनाया जाता था । पीला हरताल से, सफेद रंग चूने से, हरताल एवं हिंगोलक से नारंगी, हिगोलक एवं सफेद से गुलाबी, हरताल एवं काली-स्याही से नीला अथवा नील से भी नीला रंग बनता था । हरे रंग के लिए पीला एवं नीला (हरताल एवं नील) मिश्रित कर बनाया जाता था ।

चित्रों में रंग वर्तिका से भरते थें । यह भी हस्त-निर्मित होती थी । इसे मिट्टी से बनाते थे । मिट्टी(काली या पीली) में चावल या गेहुँ का आटा मिला कर गूँथ कर पेन्सिल की आकार का बना लेते थे । सूखने पर रंग में डुबो कर उपयोग में लेते थे । आज के पेंटिंग ब्रश का प्राचीनतम रूप यही था ।

उपसंहार

एक पाण्डुलिपि बनाने में मूल-रूप से जो-जो घटक आवश्यक होते थे, उन सबका ध्यान ग्रन्थ का लिपिकार रखता था । इनका विशद अध्ययन करने पर हम पाते है कि ग्रन्थ-लेखन एक कला थी तथा ग्रन्थ-लेखक यदि स्वयं के लिए एक सफल लेखक/कायस्थ/लिपिकार/लईया के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त करना चाहता था तो उसको इसमे निष्णात होना आवश्यक था । क्योकि किसी रचना की जितनी हस्तप्रतिलिपियाँ तैयार होगी वह रचना उतनी ही देश के विभिन्न प्रान्तों में पहुँचती थी तथा इससे लेखक का प्रचार भी होता था जैसे आज प्रकाशित पुस्तकों के प्रिन्टेड कॉपी की विक्रय संख्या पर पुस्तक की सफलता निश्चित होती है । ये हस्तलिखित-प्रतियाँ क्षेत्रीय लिपि में भी नकल की जाती थी ताकि उस क्षेत्र के लोग भी संस्कृत के ग्रन्थों का लाभ ले सके । इसी कारण हम रामायण या महाभारत की विभिन्न लिपियों में लिखी प्रतियाँ भारत के हर प्रदेश में पाते हैं । मूल-रचना से उनमें थोड़ा पाठ-भेद हो सकता है किन्तु यह संशोधित-आवृत्ति बनाने वाले का कर्तव्य होता है कि वह उनका संस्कार कर एक विश्वसनीय-पाठ (मूल-रचना का निकटतम-पाठ क्योकि मूल-रचना का शब्दशः-पाठ रचयिता के द्वारा स्वयं लिखित हस्तप्रति में ही संभव हो सकता है) तैयार करे जिसमे महीनों और कभी-कभी वर्षों की साधना निहित होती है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

THE GAEKWAD'S ORIENTAL SERIES

GOS. Nos.		
169	NYĀYĀLAṄKĀRA - of Abhayatilaka Upādhyāya - Edited by A. L. Thakur & Late J. S. Jetly (1981)	Rs. 143.00
170	ṬṚCABHĀSKARA by Bhāskararāya - Edited by R. G. Sathe (1982)	Rs. 53.00
171	ŚRĪ GAṆEŚAVIJAYAKĀVYAM - Edited by B. N. Bhatt (1984)	Rs. 46.00
172	PĀDA INDEX OF THE CRITICAL EDITION OF VĀLMĪKI RĀMĀYAṆA Vol. I - Edited by R. T. Vyas (1989)	Rs. 303.00
173	GANDHASĀRA - GANDHAVĀDA - Edited by R. T. Vyas (1989)	Rs. 128.00
174	NYĀYAKANDALĪ - Edited by Late J.S. Jetly & Vasant G. Parikh (1991)	Rs. 275.00
175	FATUHAT-I-ALAMGIRI of Ishwar Das Nagar Persian Text; English Trans. by Prof. M.F. Lokhandwala & Sir Jadunath Sarkar - Edited by Dr. Raghubir Sinh & Quazi Karamtullah. Ist Edition (1995)	Rs. 287.00
176	VIŚVĀMITRĪMĀHĀTMYA - Critically Edited with a Critical Study of the text by J. P. Thaker. Ist Edition (1997)	Rs. 280.00
177	THE PĀDA INDEX OF THE VĀLMĪKI RĀMĀYAṆA Vol. II (1997) - A comprehensive Index of verse-quarters of the Critical Edition of Vālmīki Rāmāyaṇa - Edited by R.I. Nanavati. (1997)	Rs. 455.00
178	AN ALPHABETICAL LIST OF MSS IN THE ORIENTAL INSTITUTE Vol. III - Edited by P. H. Joshi & B.P. Pandya (1998) Ist Edition.	Rs. 670.00
179	ANUMĀNAKHAṆḌADŪṢAṆODDHĀRA of Narahari Upādhyāya - Edited by V. G. Parikh (1999) - Ist Edition.	Rs. 155.00
180	GUJARAT UNDER THE MAITRAKAS OF VALABHĪ - Edited by H.G. Shastri (2000).	Rs. 410.00
181	PĀDA INDEX OF THE VĀLMĪKI RĀMĀYAṆA - Vol. III - Edited by R. I. Nanavati (2001)	Rs. 310.00
182	THE SŪRYAPRAKĀŚA OF SŪRYADĀSA - Edited by Pushpa Kumari Jain (2002)	Rs. 265.00
183	KALANDIKĀPRAKĀŚA OF SOMANĀTHA VYĀSA - Edited with an Introduction by Babulal Shukla Shastri (2002)	Rs. 255.00
184	PRIYAṀVADĀCARITAM OF BHIKŪDEVA - Edited with an Introduction by Purushottam H. Joshi (2002)	Rs. 140.00
185	KṚTYAKALPATARU (ŚĀNTIKĀṆḌA). - Edited by M.L. Wadekar (2008)	Rs. 265.00
186	AN ALPHABETICAL LIST OF MANUSCRIPTS IN THE ORIENTAL INSTITUTE (Vol. IV) - Compiled & Edited by U.M. Brahmachari & S. C. Prajapati (2008)	Rs. 515.00
187	MEGHADŪTA VYAKHYA BY JANARDANA - Edited by P. H. Joshi, B. P. Pandya & M. L. Wadekar (2009)	Rs. 170.00
40.	ADVAYAVAJRASAMGRAHA- by Advayavajra, Edited by Haraprasad Shastri (Reprint), 2014	Rs. 220.00

Books are available at :

Co-ordinator, The University Publications Unit

Opp. C. C. Mehta Auditorium, Pratapgunj, Vadodara - 390 002, Gujarat-India

Phone : 0265 2781700

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अकलंक शोध संस्थान : एक परिचय

संस्कृति जैन*

राजस्थान की शौर्य व सांस्कृतिक गाथाओं की ख्याति से विदेशी पर्यटक भारत में आकर राजस्थान की कला संस्कृति और विरासत के भ्रमण को सुनिश्चित करता है । यहाँ की पुरातन सम्पदा समृद्ध है । कला, संस्कृति (विशेष रूप चित्रकला, पुरातत्त्व एवं ग्रन्थ भण्डार) से सम्बद्ध सहस्रों की संख्या में पाण्डुलिपियाँ हैं । राजस्थान के हाडौती क्षेत्र कोटा, बून्दी, बांरा में असंख्य पाण्डुलिपियाँ हैं । इन सबका संरक्षण एवं संवर्धन अति आवश्यक है । इसी मन्तव्य ने अकलंक शोध संस्थान को साकार रूप प्रदान किया है ।

कोटा में अकलंक स्कूल एशोसिएशन ने ज्ञान के प्रसार प्रचार के लिए शिक्षा केन्द्रों को स्थापित किया है । शिक्षा क्षेत्र की सुप्रसिद्धि से संस्थान को महत्वपूर्ण पाण्डुलिपियाँ दान में प्राप्त हुई । उन पाण्डुलिपियों में आयुर्वेद की वैधक ग्रन्थ चिन्तामणि १९३८, गुणरत्नमाला १९२१, सन्निपात पदचन्द्रिका, पाकार्णव आदि एवं ज्योतिष के ज्ञान प्रदीप पाण्डुलिपियाँ, ज्योतिषगणितसारणी, अभिधानचिन्तामणि, भुवनदीपक आदि अन्य धार्मिक व अधार्मिक साहित्य की पाण्डुलिपियाँ हैं । ये पाण्डुलिपियाँ अमूल्य ज्ञान की धरोहर हैं ।

प्राचीन समय के आचार्यों के कठोरतम तप व परिश्रम से प्राप्त ज्ञान सटीक सर्वश्रेष्ठ था । उस समय भी भीषण व्याधियाँ एवं दुर्घटनाएँ होती थीं, किन्तु तब भी विकसित संसाधनों का अभाव होने पर भी उचित उपचार होते थे । वर्तमान समय की अपेक्षा हाहाकार नहीं था और ज्योतिष के आधार पर कालगणना मौसम की जानकारी आदि का भी पूर्वानुमान लगा लिया जाता था । अतएव विदेशी विद्वान यहां के मौलिक ज्ञान का अन्वेषण कर प्रथम खोज का लाभ प्राप्त कर रहे हैं । भारतीय ज्ञान का मन्थन इस धरा में ही हो यह प्रयास आवश्यक है । हम स्वयं हमारे ज्ञान को खो चुके हैं । वर्तमान में कुछ संस्थायें अन्वेषण का कार्य करने का प्रयत्न कर रही हैं ।

सन् 2009 में अकलंक विद्यालय एसोशिएशन की एक शाखा के रूप में अकलंक शोध संस्था प्रस्फुटित हुई । संस्था ने आयुर्वेद की पाण्डुलिपियों पर कार्य योजना बनाई, तथा संरक्षण का कार्य करने लगी । जनचेतना के अभाव में प्राचीन हस्तलेख को नष्ट न होने का निश्चय किया । इस कार्य को आरम्भ करने के बाद ऐसी घटनायें सामने आयी कि इन अमूल्य विरासत को नदी, तालाब, कुए में खमा दिया । निरक्षर महिला मन्दिर की मालिन

'स्वाध्याय' - पु. ५६, वर्ष २०१९, पृ. १५३-१५५. ISSN 2250-0391

* अकलंक शोधसंस्थान, कोटा, राजस्थान, M: 9352458768

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(सेविका) पाण्डुलिपि की सार्थकता को समझ सकती है, किन्तु पढा लिखा सम्भ्रान्त समाज इसकी महत्ता को क्यों नहीं पहचान पा रहा है और अनावश्यक वस्तु के समान पाण्डुलिपियों को नदी में खमाकर अमूल्य थाती को खो रहा है । अकलंक शोध संस्थान ने बडा मंदिर रामपुरा कोटा की सेविका की सूचना पर उन पाण्डुलिपियों को नदी में प्रवाहित होने से बचाया तथा उन पाँच सौ ग्रन्थों की रक्षा करके संरक्षण का कार्य प्रारम्भ किया और वर्तमान में लगभग 2000 ग्रन्थों को संग्रहित कर लिया है । जन चेतना के कार्यक्रम एवं सम्पर्क प्रचार प्रसार से पाण्डुलिपि के प्रति सुरक्षा की भावना में वृद्धि होने लगी । संख्या में वृद्धि होने से कार्यभार बढने लगा । सन् 2010 में केन्द्र सरकार के संस्कृति मंत्रालय के अन्तर्गत राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन के सहयोग से कार्य उचित रूप और अधिक व्यवस्थित होने लगा है तथा पाँच संरक्षण उपकेन्द्र बनाये हैं, उनमें से दो केन्द्रों में संरक्षण कार्य पूर्ण हो चुका है ।

संस्थान में उपलब्ध महत्त्वपूर्ण पाण्डुलिपियाँ

संस्था का मुख्य कार्य महत्वपूर्ण और विशेष ग्रन्थों पर शोध करके जनहित के लिए प्रस्तुत करना है । संस्था में ज्योतिष और आयुर्वेद के दुर्लभ ग्रन्थ उपलब्ध है । जिससे जटिल समस्याओं और बीमारियों का निदान प्राप्त हो सकता है । वर्तमान में छोटे-छोटे नुस्खें से रोगों से निजात प्राप्त कराने वाली राजस्थानी लोक भाषा की आयुर्वेद की पाण्डुलिपियों और यन्त्रों पर शोध चल रहा है । पाँच सौ वर्ष पुराने दुर्लभ यन्त्र, भोज पत्र और कागज में वर्णित ग्रंथ संस्थान में उपलब्ध हैं तथा एक यन्त्र सनातन धर्म का और शेष पाँच जैन धर्म से सम्बन्धित है जो संस्थान द्वारा सुरक्षित है ।

कोटा के सबसे पुराने जैन मंन्दिर में एक अनूठा मुस्लिम ग्रन्थ प्राप्त हुआ है जिसकी लिपि देवनागरी तथा लिपिकार ब्राह्मण है इस ग्रन्थ की भाषा अरबी फारसी है । इसके प्रारम्भ में अल्लाह की कहानियाँ हैं तथा बाद में रोगों के उपचार वर्णित हैं ।

संस्था में जैन धर्म की पूजा पाठ, स्तोत्र, दर्शन, साहित्य का बाहुल्य है तथा सनातन परम्परा की भी पाण्डुलिपियाँ हैं । इसमें ताडपत्र की दो पाण्डुलिपि कन्नड भाषा में है तथा शेष एक सौ सत्ताईस ग्रन्थ कागज में हिन्दी व संस्कृत भाषा के हैं । यथा वैशाखमाहात्म्य, भैरवस्तोत्र, श्रीगोपालपटल, श्रीत्रिपुरसुन्दरी अन्तर मात्र का एवं बहिर मात्र का न्यास आदि ।

इस प्रकार इतिहास के शोध कर्ताओं के लिए 150-200 वर्ष पुराने बहीखातों को भी संरक्षित किया जा रहा है ।

संस्थान के उपकेन्द्र चाँदखेडी की विशेष पाण्डुलिपियाँ

संस्थान के एक केन्द्र चाँदखेडी राजस्थान में लगभग पाँच सौ पाण्डुलिपियाँ हैं । वहाँ का भी सूचीकरण का कार्य पूर्ण हो चुका है । वहाँ आयुर्वेद, ज्योतिष आदि ग्रन्थों के साथ कुछ विशेष ग्रन्थ भी हैं । वेलियमाला, जिनशतकावचूरि, प्रवज्याझलक, मानवती चौपाई, चित्रसेनपद्मावती कथा, नंदिकेश्वरपुराण, परमहंसरासो, मधुमालती,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कर्णामृतपुराण, दत्तात्रेयतन्त्र, यशोधरचरित्र के वंशवृक्ष का चित्र इत्यादि । अन्य चार केन्द्रों में सूचीकरण का कार्य जारी है ।

सामान्यतः जनसमुदाय पाण्डुलिपि की महत्ता से बेखबर है । वे उन्हें नदी तलाब में खमाकर नष्ट करते जा रहे हैं । अतः पाण्डुलिपि की सुरक्षा के लिए जनचेतना कार्यक्रम आयोजित करवाये जा रहे हैं परिणामतः साधारण हस्तलेखादि सांस्कृतिक धरोहर के प्रति अभिरुचि में वृद्धि हुई है । देश की धरोहर की रक्षा ही संस्कृति की रक्षा है । यही हमारा ध्येय है, लक्ष्य है ।

धार्मिक पत्रपत्रिका और पेपरमेशी

पाण्डुलिपि संरक्षण संकल्प के साथ एक कार्य का बीडा उठाना आवश्यक हो गया था, जीर्ण शीर्ण पाठ्य सामग्री का सदुपयोग । वर्तमान समय के छापाखाना युग में सहस्रों धार्मिक ग्रन्थ, पूजापाठसंग्रह, पत्रपत्रिकाओं का प्रकाशन होता रहता है । सभी धर्मो सम्प्रदायों के सन्त गुरु के सानिध्य में सकारात्मक ऊर्जा के लिए भव्य आयोजन होते रहते हैं । इन आयोजन की सफलता के लिए निमन्त्रण पत्रिका, बैनर, चित्र आदि तैयार किये जाते हैं । इन सभी धार्मिक सामग्री के प्रति श्रद्धाभाव होता है । तथा किसी प्रकार से धार्मिक कागजों की अवमानना न हो ऐसा प्रयास रहता है ।

संस्थान में भी मंदिर से आई पाण्डुलिपि के साथ छपी हुई धार्मिक पाठ्यसामग्री भी प्राप्त हो रही थी । इस जीर्ण शीर्ण ग्रन्थ और पुरानी मासिक पत्रिका के लिए एक विचारणीय समस्या खडी हो गई थी । परिणामतः पेपरमेशी से निर्मित कलाकृतियों से समस्या का समाधान हो सका । यह समस्या मात्र हमारी संस्थान की नहीं है वरन् सभी भक्त जन की समस्या है ।

पेपरमेशी की उपयोगिता

हमारी इस पवित्र योजना का प्रचार प्रसार होने पर मंदिरों घरों से पुराने धार्मिकग्रन्थ, पत्रिकायें आने लगी और उनके साथ बहुमूल्य पाण्डुलिपियाँ भी प्राप्त हुईं । इस प्रकार की महान पवित्र योजना से राष्ट्रहित में सहयोग प्राप्त हो रहा है वे हैं -

१ नदी तालाब आदि की स्वच्छता
२ ज्ञान निधि एवं सांस्कृतिक धरोहर की सुरक्षा
३ कलाकृति के प्रति अभिरुचि में अभिवृद्धि
४ स्वस्थ पर्यावरण में महती सहयोग
५ कलानिपुण बेरोजगार महिलाओं को रोजगार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

Manuscript-copies Procuring Charges*

Charges for Indian Scholars

Sr. No.	Material	Handling Charge	Referring Charge	Digitization Charge	Using own Camera
1.	Paper Manuscript	Rs. 15/- (per MS)	Rs. 15/- (per MS)	Rs. 20/- (per page)	No Charges but the scholar has to submit one digitized copy of the work free of cost to the Institute
2.	Palm Leaf Manuscript	Rs. 30/- (per MS)	Rs. 30/- (per MS)	Rs. 40/- (per page)	No Charges but the scholar has to submit one digitized copy of the work free of cost to the Institute
3.	Illustrated Manuscript	Rs. 30/- (per MS)	Rs. 30/- (per MS)	Rs. 700/- per Exposure/ page	No Charges but the scholar has to submit one digitized copy of the work free of cost to the Institute

Charges for Non-Indian / Foreign Scholars

Sr. No.	Material	Handling Charge	Referring Charge	Digitization Charge	Using own Camera
1.	Paper Manuscript	Rs. 45/- (per MS)	Rs. 45/- (per MS)	Rs. 40/- (per page)	No Charges but the scholar has to submit one digitized copy of the work free of cost to the Institute
2.	Palm Leaf Manuscript	Rs. 90/- (per MS)	Rs. 90/- (per MS)	Rs. 80/- (per page)	No Charges but the scholar has to submit one digitized copy of the work free of cost to the Institute
3.	Illustrated Manuscript	Rs. 90/- (per MS)	Rs. 90/- (per MS)	Rs. 1400/- per Exposure/ page	No Charges but the scholar has to submit one digitized copy of the work free of cost to the Institute

Kindly note -

- **Copies can be delivered On-line or in CD/DVD** by registered Post- parcel/Courier or can be collected in person.
- **Money** can be **transferred** in the following Current Bank Account of **Oriental Institute**

  Bank : **Bank of Baroda** (Current Account at Dandia Bazar Branch, Vadodara)
  Account No. : 05780200000213
  Branch Code : BARB0DANDIA (Fifth Character is Zero)
  Swift Code : BARBINBBRM

- **Contact details of the Oriental Institute:**

  Phone No. : 0265-2425121
  E-Mail : director-oriental@msubaroda.ac.in
  Director's Mobile No. : 09898472669

- The four volumes of **'An Alphabetical List of Manuscripts'** available on **www.msubaroda.ac.in**

* Charges as per the Letter No. 289, dated 10.9.2012 of S.R. No.14, dated 31.07.2012

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कारिकामयं हस्तलेखशास्त्रम्

(Versified Science of Manuscripts)

बनमाली बिश्वालः*

प्रस्तावना (Prologue)

विगत दशकद्वयात् प्रयागस्थे गङ्गानाथ-झा-परिसरे मदीये सेवाकाले मया हस्तलेखानां पाठालोचन-सम्पादनादि-कार्येषु यथाशक्यं यत्-किञ्चिद् योगदानं कृतम् । तदवसरे नव-दिल्लीस्थ-राष्ट्रिय-पाण्डुलिपि-मिशन-द्वारा-निर्मित-विवरणतालिका-(डाटा-सीट)-निरीक्षण-क्रमे सन्देहस्थितावनेकेषां हस्तलेखानां दर्शनावसरे मया प्रायोऽवलोकितं यत् लेखकैः लिपिकारैर्वा ग्रन्थस्योभयविध-पुष्पिकासु (आद्यासु अन्तासु च) कानिचन प्रसिद्ध-पद्यानि उद्धृतानि सन्ति । वस्तुतस्तेषु तेषु पद्येषु हस्तलेख-सम्बद्धस्तेषामादरभावो व्यक्तीभवति । तत एव पद्यद्वयमहमत्रोद्धर्तुमिच्छामि यत्र विदुषां प्रसङ्गे हस्तलेख-ग्रन्थानामुपयोगिता-महत्त्वादि-विषयको भावो महता कण्ठेन प्रतिपादितो वर्तते-

ग्रन्था ममाग्रतस्सन्तु ग्रन्था मे सन्तु पृष्ठतः । ग्रन्था मे सर्वतस्सन्तु ग्रन्थेष्वेव वसाम्यहम् ॥
भग्नपृष्ठ-कटिग्रीवः स्तब्ध (वक्र)दृष्टिरधोमुखः । कष्टेन लिखितं शास्त्रं यत्नेन परिपालयेत् ॥

एवमेवाध्ययनाध्यापन-क्रमे हस्तलेखानां विषये मया यत् पठितं, श्रुतं ज्ञातञ्च तद् व्यवस्थितं कृत्वा पुस्तकाकारेण प्रकाशनाय योजना बहुदिनेभ्यः सङ्कल्पिता आसीदेव । परन्तु स्व-सारस्वत-व्यस्ततावशात् तद्योजनायै मूर्तरूप-प्रदाने बिलम्बो जातः । किन्तु बिलम्बस्यापि किञ्चिन्महत्त्वं भवत्येव । समयः व्यक्तिं बहु किमपि शिक्षयति । एषु दिनेष्वपि मया यत् किञ्चिदधीतं, श्रुतं ज्ञातञ्च तत्सर्वमपि प्रस्तुत-कारिकासु समावेशितमस्ति । वस्तुतः उपर्युक्त-सङ्कल्पित-पुस्तकस्य प्रस्तावना-लेखनसमये मनसि कश्चन विचारस्समागतो यदुपर्युक्तस्य सङ्कल्पितस्य पुस्तकस्य कृते काचित् पद्यमयी प्रस्तावना लेखनीया इति । एवमनुष्टुप्-छन्दसा आदौ पञ्चविंशतिः, ततः पञ्चाशत् ततश्च शतं पद्यानि रचितानि । तदा मे मनसि विचार आगतो यदस्मिन् विषये सम्पूर्णं तथ्यं कारिकारूपेण कथं न प्रस्तोतव्यम् । एवमेव हस्तलेख-शास्त्रसम्बद्धासु प्रस्तुत-कारिकासु सर्वे सम्बद्ध-विषयास्सामग्रिकतया समासेन वर्णिताः । प्रसङ्गतोऽत्र संस्कृत-शोधप्रविधेरपि संक्षिप्य चर्चा विहिता । वस्तुतः कारिकानिर्माणावसरे कदा शतकत्रयं जातमिति नैव ज्ञातवान् । परन्तु एतेन विस्तारेण प्रस्तुत-सामग्रीजातस्य महत्ता चावश्यमेव संवर्धितेति मे मतिः ।

'स्वाध्याय' - पु. ५६, वर्ष २०१९, पृ. १५७-१७३. ISSN 2250-0391

* सेन्ट्रल-संस्कृत-विश्वविद्यालयः, श्रीरघुनाथ-कीर्ति-केम्पस, देवप्रयागः, पौडी, उत्तराखण्डः - २४९३०१,
M: 919450781742, 7839908471, Email: banamali7@gmail.com

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अस्ति भारतीय-शास्त्रस्य काचित् सुमहती एव परम्परा । तत्र च काचित् कारिकामय-शास्त्र-परम्पराऽप्यन्तर्भवति । तस्यां परम्परायां प्रस्तुत-हस्तलेख-शास्त्रस्यापि किमपि योगदानमवश्यं सेत्स्यति । शासनात् शास्त्रमित्याहुरिति व्युत्पत्त्या पाण्डुलिपि-विज्ञानमपि शास्त्रश्रेण्यामन्तर्भवति । मदीयेऽस्मिन् कारिकामये हस्तलेखशास्त्रे पाण्डुलिपि-विज्ञानस्य सामान्यः परिचयः, हस्तलेख-स्वरूपं तद्भेदाश्च, हस्तलेख-भौतिक-साधनानि, हस्तलेख-ग्रन्थरचन-प्रक्रिया, लिपिपरम्परा, लेखनकलाया उत्पत्तिर्विकासश्च, लेखक-लिपिकाराणां गुण-दोष-विवेचनम्, शास्त्र-सम्मत-लेखक-प्रकाराः लेखन-प्रकाराश्च, लेखनोत्कर्षहेतवः, हस्तलेख-संरक्षणस्य विविधोपायाः, अनुसन्धान-पद्धतिः शोधप्रविधिर्वा, संस्कृतशोधपरम्परा, शास्त्र-टीका-परम्परा, हस्तलेखसम्पादनविधिः तथा सङ्केताङ्क-स्वरूपनिरूपणञ्चेत्यादयो बहवो विषयाश्चात्र सुष्ठु निरूपितास्सन्ति । अद्यत्वे जनानां प्राचीनतां प्रति महदाकर्षणं दरीदृश्यते । वस्तुतः एषा प्रवृत्तिः उत्तर-आधुनिकतावादस्यैव परिणामः ।

अद्यत्वे पाण्डुलिपि-विज्ञानस्याध्ययनं प्रति विद्यार्थिनामभिरुचिस्संवर्धिता एव । एम.फील.-विद्यावारिधि (पी.एच्.डी)-प्राक्-शोधपाठ्यक्रमेषु (Pre-Ph.D Course) निर्धारितानुसन्धान-पद्धति- (Research Methodology) पाठ्यक्रमेष्वपि हस्तलेख-शास्त्रमांशिकरूपेण योजितमस्ति । अद्यत्वे भारतवर्षस्य विविधसंस्थाभिः विविध-स्थलेषु मासिक्यः त्रिसप्ताहात्मिक्यो वा कार्यशालास्समायोज्यन्ते । ताश्च क्वचित् प्रारम्भिक्यः क्वचिदुच्चस्तरीयाश्च भवन्ति । तासु तासु नैकासु कार्यशालासु तथा पाण्डुलिपि-विज्ञानसम्बद्ध-राष्ट्रिय-संगोष्ठिषु चाधारपुरुषरूपेण व्याख्यानसमये तथा नवदेहल्लीस्थ-राष्ट्रिय-पाण्डुलिपिमिशनद्वारा प्रकाशितायां कृतिरक्षणाख्यायां द्वैमासिक-पत्रिकायां तथा चान्य-शोधपत्रिकासु चैतद्विषयक-लेख-लेखन क्रमे यच्च सामग्रीजातं मया सङ्कलितं तदाधारेणेयं कारिकामयी हस्तलेखशास्त्र-सम्बद्धा सामग्रीयं सज्जीकृता वर्तते । एतेन मे प्रयासेन यदि पाण्डुलिपिविज्ञान-क्षेत्रे प्रवेशाकाङ्क्षिणः । जिज्ञासवश्छात्राः शोधार्थिनश्च उपकृता भविष्यन्ति तर्हि मे श्रमस्सार्थकीभविष्यतीति शम् ।

हस्तलेखशास्त्रम् (Science of Manuscripts)

मङ्गलाचरणम् (Benedictory Verses)

प्रणम्यादौ वेदव्यासं कृष्णद्वैपायनाभिधम् । महाभारतकर्तारं वन्दे व्यास-परम्पराम् ।१।
ततो गणपतिं वन्दे महाभारत-लेखकम् । निर्विघ्नं लिखितं येन व्यासमुखाद्यथाश्रुतम् ।२।
वन्दे हस्तलेखान् देवान् तत्प्रणेतृस्ततः परम् । हस्तलेखीय-शास्त्रञ्च वन्दे परम्परागतम् ।३।

अनुबन्ध-चतुष्टयम् (Introductory Shastric Reasons)

हस्तलेखीय-शास्त्राणां सुमहती परम्परा । तत्र प्रवेशकामोऽहं तन्मीमांसा-चिकीर्षया ।४।
मातृका-कार्यशालासु ये सन्ति प्रतिभागिनः । तेषां कृते सहायिका सामग्रीयं विशिष्यते ।५।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पारम्परिक-सामान्य-विश्वविद्यालयेषु च । प्राक्शोधपाठसामग्र्यामन्तर्भवितुमर्हति ।६।

शास्त्रेषु भारतीयेषु विज्ञानं निहितं क्वचित् । प्राच्यार्वाचीनयोः नूनं सम्बन्धः सुप्रतिष्ठितः ।७।

अप्रकाशितविद्यानां प्रकाशनं यथा भवेत् । प्रोत्साहनविधौ तत्र प्रयोजनं प्रमाणितम् ।८।

हस्तलेखस्य शास्त्रत्वम् (Manuscript as an Ancient Science)

शासनात् शास्त्रमित्याहुः हस्तलेखस्तु लेखनात् । शास्त्रन्तद् हस्तलेखीयं विज्ञानपरकं मतम् ।९।

शास्त्रस्य विविधाः पक्षाः सन्ति चात्र समाहिताः हस्तलेखेन सम्बद्धात्तन्नाम्नैव निगद्यते ।१०।

मातृका-पाण्डुलिप्योश्च विज्ञानमेतदेव हि । नामान्तरं विजानीयाद् भेदो न तत्त्वतः क्वचित् ।११।

पुरातत्त्व-शिलालेख-विज्ञानाभ्यां सुसंयुतम् । पुस्तकालय-विज्ञानमेतच्छास्त्रप्रमाणकम् ।१२।

सहायकानि सिद्ध्यन्ति शास्त्रान्तराणि चात्र वै । जिज्ञासुभिरतो ज्ञेया चास्मच्छास्त्रपरम्परा ।१३।

हस्तलेख-विद्यानां श्रुतिपरम्परा (Oral Tradition of Manuscript-lore)

वेदवेदाङ्गविद्यास्ताः धर्मदर्शनसङ्गताः । अत्याधुनिकविद्याभिरायुर्विज्ञानसंयुताः ।१४।

पारम्परिकविद्यानामुपविद्याः भवन्ति काः । दृष्टाः प्रोक्ताः ऋषिभिश्च भारतीयैर्मनीषिभिः ।१५।

भारतीयाः समाः विद्याः पूर्वजैर्याः विचिन्तिताः । अक्षुण्णास्तास्तथैवासन् श्रुतिपरम्पराश्रिताः ।१६।

लिपि-परम्परा (Tradition of Scripts)

विस्मरणभयात्तासां रक्षणं कल्पितं बुधैः । लिपिबद्धाः कृताः ताश्च पत्रारोहणमाध्यमैः ।१७।

चित्रलिपिं समारभ्य ब्राह्मीलिपि-सुमध्यमा । आधुनिकिर्लिपिर्यावद् धन्या लिपिपरम्परा ।१८।

लिपयो बहुधा प्रोक्ताः नेवारी-ग्रन्थ-शारदाः । ओडिआ-तुलु-बङ्गाश्च खरोष्ठी-तमिलास्तथा ।१९।

लैटिन-हुंगुलारबी-कानो-काञ्जी-मराठयः । गुर्जर-गुरुमुख्यश्च तेलुगु-मैथिलास्तथा ।२०।

अशोकस्य शिलालेखे ब्राह्मीलिपिः समादृता । एवं तदभिलेखेषु खरोष्ठ्यपि लिपीकृता ।२१।

संस्कृते बहवो ग्रन्थाः नागरीलिपिसम्भूताः । कालान्तरेऽन्यदेशेषु ते च लिप्यन्तरीकृताः ।२२।

देवनागरीलिप्याश्च तिस्रोऽवस्थाः सुप्रथिताः । गुप्त-कुटिल-नागरी-नामभिर्याश्च संज्ञिताः ।२३।

राधाकान्तादिभिः कैश्चिद् भारतीयैः विदेशिभिः । हेटिंग्टनेन जेम्सफोर्डैः लिपिलेखाः प्रवाचिताः ।२४।

हस्तलेख-सङ्ग्रह-योजनाः (Projects of Manuscript-Collection)

लिपिबद्धाः सदा धार्याः यावद्विद्याः सुरक्षिताः । भारते च तदारभ्य हस्तलेखाः गृहे गृहे ।२५।

केचित् प्रकाशितास्तेषु नैकेऽप्रकाशिताः पुनः । तेषां सङ्ग्रहणं नूनं कार्यं भारतीयैस्सदा ।२६।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नैकास्संस्था राराजन्ते विदेशे भारते तथा । नित्यं सङ्कलिताः यत्र मातृकाः विविध-स्थलात् ।२७।

बहुभिस्सङ्गृहीतास्तास्स्थानिताः पुस्तकालये । प्रायस्सांस्थानिके ताश्च क्वचित्पुनर्वैयक्तिके ।२८।

मठे वा मन्दिरे ते च सतां सङ्ग्रहणे पुनः । केवलं भारते नैव विदेशे सङ्ग्रहालये ।२९।

सङ्ग्रहे हस्तलेखानां मार्गाः सन्ति पृथक् पृथक् । क्वचित्सांस्थानिकास्ते च क्वचित्सन्ति वैयक्तिकाः ।३०।

स्वान्तःसुखाय कैश्चिच्च कैश्चिद् वेतनभोगिभिः । सोद्देश्यान्वेषणं क्वचिन्माध्यमैर्व्यावसायिकैः ।३१।

हस्तलेख-ग्रन्थप्रकाराः (Types of Manuscripts)

विभक्ताः हस्तलेखास्ते लिप्यासनप्रकारकैः । तदाधारेण नामानि प्रसिद्ध्यन्ति भिन्नानि वै ।३२।

पुस्तिका-पुस्त-पुस्ताश्च पोथयः पोथकाः पोथाः । आदर्शाः मूलकोषाश्च मातृकाः पुस्तकानि वै ।३३।

पाण्डुलेख-लिपिभ्यां ये हस्तलेख-प्रकारकाः । एकत्र नोपलभ्यन्ते स्थान-काल-प्रभावतः ।३४।

पूर्व-दक्षिण-देशेषु ताडपत्र-विनिर्मिताः । प्रायशश्चोत्तरे क्षेत्रे मातृकाः भूर्जपत्रिताः ।३५।

श्रीताडः खरताडश्च ताडभेदावुभौ स्मृतौ । पुस्तक-लेखने किन्तु श्रीताडोऽत्र विशिष्यते।३६।

वस्त्र-चर्मपटीयाश्च मातृकाः धातुनिर्मिताः । लौह-रजत-ताम्रेषु सुवर्ण-फलकेषु याः ।३७।

पाषाणीयाः शिलालेखाः स्तम्भाः मन्दिरभित्तिगाः । मृण्मयाः काष्ठीयाश्च ताः मातृकाः सर्वदेशगाः ।३८।

क्वचिद्वृक्षत्वचि ग्रन्थाः लिख्यन्ते चिक्कणीकृते । वल्कलेषु प्रसिद्ध्यन्ति भूर्ज-पेपीरसादयः ।३९।

अगरु-तुलि-पत्रैश्च साञ्चिपत्रादिनिर्मिताः । कर्गदीयाः पटीयाश्च मृद्धातु-चर्म-मातृकाः ।४०।

भारते चर्मपत्राणां प्रयोगो न विधीयते । क्वचिच्च वेष्टनादिषु तत्प्रयोगो विशिष्यते ।४१।

क्वचिन्मध्यैसियाक्षेत्रे यूनानारबयोः पुनः । क्वचिद्यूरोपदेशेषु चर्मपत्रं प्रयुज्यते ।४२।

आकृत्याधारेण हस्तलेख-ग्रन्थप्रकाराः (Types of Manuscripts on the Basis of Size)

गण्डी-कच्छपि-मुष्ट्याख्याः सम्पुटफलकाः पुनः । अपरे छेदपाट्याख्याः ग्रन्थास्ते पञ्चधा मताः ।४३।

मानञ्च हस्तलेखस्य भवेच्छास्त्रप्रमाणकम् । नाधिकं सार्धहस्ताच्च न्यूनं न स्याद्दशाङ्गुलात् ।४४।

षडङ्गुलाधिकः हस्तादुत्तमः परिकल्पितः । मध्यमो हस्तमात्रोऽस्ति सामान्यो मुष्टिमात्रकः ।४५।

अन्ये त्रयः प्रकाराश्च पृष्ठरूपविधानतः । त्रिपाटः पञ्चपाटश्च शुण्डश्चेत्यपरो मतः ।४६।

त्रिपाटे पञ्चपाटे च विधिः कश्चित् समाश्रितः । स्थूलाक्षरैश्च मध्ये तु मूलग्रन्थो निवेशितः ।४७।

प्रायः सूक्ष्माक्षरैष्टीकाश्चोपर्यधः निवेशिताः । नामद्वयं तयोः किन्तु केवलं भागभेदतः ।४८।

भागत्रयात् त्रिपाटो वा त्रिपाठो वा क्वचिद्भवेत् । पञ्चभेदैः क्वचित्पञ्चपाटः पाठोऽपि वा स्मृतः ।४९।

अन्येऽपि मातृकाभेदाः सत्येन्द्रेण निरूपिताः । सचित्रपुस्तकं ख्यातं विविध-चित्र-चित्रितम् ।५०।

लिप्याधारेण चत्वारो भेदास्तत्र समङ्किताः । स्थूल-सूक्ष्माक्षराः केचित् सुवर्ण-रजताक्षराः ।५१।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लेखनस्य कलात्वम् (Writing as an Art)

भारतस्य कलाक्षेत्रे स्थानमुच्चतरं मतम् । यत्र सर्वप्रसङ्गेषु काचित्कला प्रसिद्ध्यति ।५२।
साहित्येऽस्ति कला चात्र सङ्गीतेऽपि तथैव च । नृत्ये वाद्ये तथा कामे कला काचिन्महीयते ।५३।
वास्तुशिल्पे वाचने च भिन्ना कला विशिष्यते । भाषणे लेखने चित्रे कला परा समीहते ।५४।
द्वासप्ततिकलाः स्त्रीभिः सम्बद्धाः सन्ति भूतले । पुरुषैश्च चतुष्षष्टिः कलास्सन्ति सुसंयुताः ।५५।

लेखनकलाया उत्पत्तिः (Origin of Writings)

लेखनकलाया जन्म भाषोत्पत्तेः परं मतम् । उत्पत्तिः पौरुषेयी स्याद्दैवी स्यादथवा क्वचित् ।५६।
प्राग्वैदिकी कला चासावथवा वैदिकी पुनः । पौराणिकी कला वा स्यात्सर्वथा वैदिकोत्तरी ।५७।
अक्षराणि तु सृष्टानि विधात्रा ब्रह्मणा पुरा । षण्मासानन्तरं भ्रान्तिः ज्ञाने सञ्जायते यतः ।५८।
उत्खनने हडप्पायाः दृष्टा लिपिः सुचिन्तिता । लिपिज्ञानामभिज्ञानमद्याप्यसम्भवं क्वचित् ।५९।
ब्रह्मणा निर्मिता चेयं लिपिः ब्राह्मी निगद्यते । सा तु सरस्वतीरूपा भारते परिकल्पिता ।६०।
मिस्रे देशे तु थोथोऽस्ति लिपिदेवस्सुकल्पितः । नेबो स बेबीलोनेऽस्ति साक्षाल्लेखेश्वरो मतः ।६१।
मूसा पैगम्बरः ख्यातः यहूद्यां लेखदेवकः । आदमाय लिपिं प्रादात् अल्लाहो यवनेषु च ।६२।
यूनान्यनुश्रुतौ ख्यातः हेर्मेसः लेखनप्रभुः । फिनीशियन-लिप्याश्च यूनानी साऽप्यजायत ।६३।
पाणिनिना प्रयुक्तास्ते शब्दाः लेखनसंयुताः । लिपि-लिवि-समाश्चान्ये महाभारतसंज्ञकाः ।६४।
भिक्षुनाट्यादिशास्त्राणि प्रयुक्तानि च कानिचित् । यवनानां लिपिस्तेन यवनानीति संज्ञिता ।६५।
लेखनी-तुलिका-पट्ट-पीठ-पर्ण-सम्पुटकाः । लेखास्तित्वं वदन्ति ते वर्णवाक्याक्षरादयः ।६६।
अङ्क-रचाख्य-धातुभ्यां लिख-टङ्कादि-धातवः । लेखार्थवाचकाश्चैते धातुपाठे निवेशिताः ।६७।
लिपि-लेप-लेपनानि लेपक-लेपनादयः । लेखास्तित्वेन बद्धानि रूपाणि लिप-लिम्पयोः ।६८।
पश्यन् वाचं न दृष्टवान् वेदे मन्त्रः प्रसिद्ध्यति । लिप्यभावे कथं वाचो दर्शनं सम्भविष्यति ।६९।
मन्त्रश्चाथर्वणि प्रोक्तः कोषाद् वेदः समुद्धृतः । लिपिबद्धो न चेद् वेदः कोषान्निष्काषनं कथम् ।७०।

हस्तलेख-ग्रन्थरचना-प्रक्रिया (Procedural details of Manuscript Writings)

ग्रथने हस्तलेखस्य लेखकः प्रथमो मतः । लिपिकारो द्वितीयोऽस्ति चित्रकारस्ततः श्रुतः ।७१।
कश्चित् संशोधकोऽभीष्टः पाठवक्ता तथाऽपरः । हस्तलेखः भवेत्शुद्धो ह्येतेषां समुपस्थितौ ।७२।
एताश्चानुश्रुतयः स्युः तत्र पाठप्रवर्तने । एकोऽस्ति ग्रन्थकर्ताऽत्र व्यासो द्वैपायनो यथा ।७३।
अपरो लेखकस्तत्र लिपिकारोऽपि कथ्यते । श्रीगणेशो यथा तत्र लेखकः परमः स्मृतः ।७४।
ग्रन्थकारप्रणीते च पाठे सञ्चरणं क्वचित् । पाठसञ्चरणस्यापि मार्गद्वयं प्रमुखतः ।७६।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मुख-परम्परायान्तु व्याख्यानं स्मरणं तथा । अन्या परम्परा किन्तु लेखाश्रिता च सर्वथा ।७७।
सञ्चरितस्य पाठस्य भेदाश्चतुर्विधाः स्मृताः । दृष्ट-कृत-श्रुत-प्रोक्तैः साहित्यं सुविभाजितम् ।७८।
दृष्टे वेदादयः ख्याताः संहिता-ब्राह्मणादयः । महापुरुषवाणी तु श्रुतेऽन्तर्भाविता पुनः ।७९।
प्रोक्ते स्मृति-पुराणानि सूत्रसाहित्यमेव च । कृतसाहित्यकोटौ तु काव्यं शास्त्रं प्रकीर्तितम् ।८०।
हस्तलेखप्रतीनान्तु त्रयो भेदाः प्रमुखतः । मूलश्च ग्रन्थकारेण स्वहस्तलिखितो मतः ।८१।
मूलादर्शप्रतिस्त्वन्या प्रतिलिपिस्ततः परम् । पूर्वजा वंशजा चेति प्रतिलिपिर्द्विधा कृता ।८२।
पाठ-सञ्चरणे सन्ति लिखिते स्खलनानि वै । अनुलेखनतन्त्रे तु स्वेच्छयाऽनिच्छया पुनः ।८३।
अनिच्छास्खलने त्रीणि कारणानि विशेषतः । अनवधानमज्ञानं शारीरिक्यसमर्थता ।८४।
स्वेच्छायां पाठभेदो वा सरलीकरणं पुनः । क्षतिपूर्तिः प्रक्षेपश्च स्थलगतञ्च मिश्रणम् ।८५।
लिखिते सन्ति चान्यानि स्खलनानीह कानिचित् । जलतैलादि-प्रक्षेपात् कीटदंशनकारणात् ।८६।
छिद्रीकरणकाले वा क्वचिच्छिथिलबन्धनात् । वातावरणदोषाच्च स्खलनानि भवन्त्यपि ।८७।
बहुविधास्वशुद्धिषु लुप्तांशः प्रथमो मतः । वर्ण-वाक्य-पदानाञ्च लोपो वर्गीकृतस्त्रिधा ।८८।
वर्णलोपप्रकाराश्च सम्भवन्त्यत्र केचन । सामान्योऽस्ति क्वचिल्लोपो लोपस्समाक्षरः क्वचित् ।८९।
क्रमविपर्ययादत्र वर्णानां परिवर्तनम् ॥ पुनरुक्तेः क्वचिच्छन्दोबन्धवशादशुद्धयः ।९०।

लेखक-प्रकाराः (Types of Writers)

प्रणेतारस्सर्जकास्तु भवन्ति मूललेखकाः । प्रतिलिपिं प्रकुर्वन्ति लिपिकारास्तु कर्णिनः ।९१।
लेखकास्त्रिविधाः प्रोक्ताः हस्तलेख-प्रसङ्गतः । कायस्थ-शासनाख्यौ च तथा पुस्तकलेखकः ।९२।
पुस्तकानि लिखन्ति ये ते च पुस्तकलेखकाः । लेखाविभागकार्यं तु कायस्थलेखकाश्रितम् ।९३।
शासनलेखकस्त्वन्यो व्यापिका तस्य चायतिः । सम्भवन्ति प्रसङ्गाच्च तस्य नामान्तराणि वै ।९४।
सन्ति शासनिनः केचित् केचिच्च धर्मदेशिनः । केचिद्धर्मलेखिनः स्युः केचित् शासनलेखिनः ।९५।

शासनलेख-प्रकाराः (Types of Government Writings)

शासनलेखनस्यापि भेदाश्चाष्टौ प्रकल्पिताः । कश्चित्प्रज्ञापनो लेखः सूचनार्थं विधीयते ।९६।
आज्ञालेखोऽपरो लेखः यत्रादेशः प्रदीयते । परिदानाख्य लेखे तु दानपत्रमुदीर्यते ।९७।
परिहाराभिधे लेखे करादिमुक्तिरिष्यते । निसृष्टावधिकारश्च परस्मै नु प्रदीयते ।९८।
सुख-वृत्ति-प्रसङ्गेषु प्रवृत्तिलेख इष्यते । लेखोत्तरप्रसङ्गेषु प्रतिलेखो विधीयते ।९९।
लेखः सर्वत्रगः कश्चिद्घोषणार्थं विनिश्चितः । एवमष्टविधाः लेखाः शासनाख्याः प्रकीर्तिताः ।१००।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उपसंहरणे विधाविति-शब्दः प्रयुज्यते । इति-प्रयोगमात्रेण लेखान्तश्चानुमीयते ।१०१।

अर्थशास्त्रस्य दृष्ट्याऽत्र सर्वे भेदाः विचारिताः । वचो वैचित्र्यमात्रन्तु लेखकस्य विभाव्यताम् ।१०२।

न्यायालयीय-लेखाश्च कर्णिका-पदसंज्ञकाः । एवं शब्दाः प्रसिद्ध्यन्ति बहवस्तु प्रसङ्गतः ।१०३।

लेखप्रयोजनानि (Purport of Writings)

कौटिल्येनार्थशास्त्रे च लेखपक्षाः विचारिताः । लेखप्रयोजनान्येवं व्याख्यातानि त्रयोदश ।१०४।

दोषाख्याने भवेन्निदा प्रशंसा गुणकीर्तने । कथमेतद्भवेत् पृच्छा चाख्यानमेवमित्यतः ।१०५।

देहीति प्रार्थना काचित् प्रत्याख्यानं तिरस्कृतौ । एतदननुरूपं ते चोपालम्भः प्रकीर्तितः ।१०६।

मा कार्षिः प्रतिषेधस्स्यात् चोदना क्रियतामिदम् । ममास्ति यत्तवैवेति चोपग्रहश्च सान्त्वनम् ।१०७।

साहाय्यं व्यवसाये चेदभ्युपपत्तिरेव सा । अभिभर्त्सनमेतच्च सदोषायतिदर्शनम् ।१०८।

जगत्यनुनयः ख्यातः अर्थकृतावतिक्रमे । पुरुषव्यसने चैव त्रिविधः सम्प्रकीर्तितः ।१०९।

लेखदोषाः (Defects of Writings)

पञ्चधा लेखदोषाश्च कौटिल्येन प्रकीर्तिताः । पुनरुक्तापशब्दाभ्यां व्याघातोऽकान्ति-सम्प्लवाः ।११०।

पुनरुक्तिः द्विरुक्तिः स्यादकान्तिश्चारुहीनता व्याघातः कथ्यते प्राज्ञैः पूर्वापरविसङ्गतौ ।१११।

लोकेऽन्यथाप्रयोगोऽसावपशब्दः प्रकीर्तितः । वर्गगुणविपर्यासः सम्प्लवः कथ्यते बुधैः ।११२।

लेखनोत्कर्षहेतवः (Causes of Excellency in Writings)

अर्थशास्त्रे विनिर्दिष्टाः लेखनोत्कर्षहेतवः । पूर्वन्यासः प्रधानस्य चार्थक्रमो निगद्यते ।११३।

पूर्वसम्प्रस्तुतार्थस्यानुपरोधो यथा भवेत् । तथोत्तरविधानं च सम्बन्धः समुदीरितः ।११४।

अर्थपदाक्षराणाञ्च ह्यन्यूनानतिरिक्तता । अश्रान्तपदता शास्त्रे कथ्यते परिपूर्णता ।११५।

सुखोपनीत-चार्वर्थ-शब्दाख्यानं यदा भवेत् । तदा शास्त्रानुरोधेन माधुर्यं कथ्यते बुधैः ।११६।

अग्राम्य-शब्दविन्यासादौदार्यं परिकल्पितम् । कथने सुप्रतीतिश्चेत् स्पष्टार्थता निगद्यते ।११७।

पङ्क्तिबद्धा भवेयुस्ते लेखाः पाण्डुलिपिश्रिताः । समानाः पङ्क्यो वर्णाः रिक्तस्थानं समं पुनः ।११८।

मातृकासु प्रसिद्धाऽस्ति सम्मिलिताक्षरावली । संशोधनप्रतीकैर्या विरामचिह्निता क्वचित् ।११९।

लेखन-विरामे शुभाशुभफलानि (Merits and Demerits in Pause of Writings)

विरामं लेखने कुर्यात् यथाशास्त्रं शुभेऽक्षरे । शुभाशुभाक्षराणान्तु फलश्रुतिः पृथक् पृथक् ।१२०।

विरामश्चेत्ककारे स्यात् भवति कर्तनं ध्रुवम् । तकारे त्वरितो लाभो फले चैवं शुभाशुभे ।१२१।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लेखनोचित-दिन-स्थानानि (Appropriate Time and Place of Manuscript-Writings)

शुभे दिने सुनक्षत्रे कृतस्नानः कृतार्चनः । सुमुहूर्ते शुभं वस्त्रं परिधाय मनोहरम् ।१२२।
अलङ्कृतस्स्वयंशुद्धः भूत्वा पूर्वदिशामुखः । बुद्धिमान्पुस्तकं लिखेत् लिपिज्ञो लेखकोत्तमः ।१२३।
कीटादिरहिते दिव्ये निरुदके पवित्रिते । मनोरमे गृहे लिप्ते सुधया गोमयेन वा ।१२४।
लेखनीं मसीपात्रञ्च लेखाधारं तथैव च । गृहे पूर्वोत्तरे देशे आलेख्यानि प्रपूजयेत् ।१२५।
स्थाने शान्तिप्रदे तत्र चोपविश्य सुखासने । लिपिकारः लिखेद् ग्रन्थं लेखको वा यदा तदा ।१२६।

हस्तलेख-भौतिक-साधनानि (Instruments of Manuscript-Writings)

मसी-लेखनी-पत्राणि मुख्यानि साधनानि च । सहायकानि वर्तन्ते बहुन्यन्यानि तत्र वै ।१२७।
हडतालेन मातृका-संशोधनं विधीयते । तद्बन्धने तु सूत्राणि वेष्टनाच्छादकानि च ।१२८।
पङ्क्तिश्च सरलीकर्तुं रेखापाटी प्रयुज्यते । पट्टिका समपट्टी सा काम्बिका काष्ठपट्टिका ।१२९।
हस्तलेखप्रसङ्गेषु भौतिक-साधनानि वै । लेखकानुपकुर्वन्ति यथायोग्यं पदे पदे ।१३०।

मसी (Ink)

सामान्यतो मसी कृष्णा हस्तलेखे समादृता । सज्जीकर्तुं प्रयुज्येते स्वर्णा वा रजता मसी ।१३१।

लेखनी (Pen or Stylus)

लेखने चोपयुज्यन्ते लेखनी-तुलिकादयः । धातुषु ताडपत्रेषु शलाकाऽपि प्रयुज्यते ।१३२।
अधमा वंशसूची स्यात्ताम्रसूची तु मध्यमा । स्वर्ण-शलाकयाऽवश्यमुत्तमाऽस्ति बृहन्नला ।१३३।
कर्गज-भूर्जपत्रेषु ताडपत्रेषु च क्वचित् । लेखन्या लिखिताः ग्रन्थास्तुलीभिर्लेपिताश्च के ।१३४।
वर्णको वर्णिका चाथ तुलिका वर्णवर्तिका । शलाका-कलमेषिकाः लेखनी-नाम-संज्ञिताः ।१३५।

लिप्यासनानि लेखनविधिश्च (Types of Bases and Methods of Writing)

कथ्यन्ते लेखनाधाराः लिप्याधाराश्च ते क्वचित् । पत्र-लिप्यासनाख्याभिः प्रसिद्ध्यन्ति बहुत्र ते ।१३६।
लिप्यासनानि नैकानि कठोराणि मृदूनि च । लेखन-लेपनोत्कीर्णैरभिलेखो विधीयते ।१३७।
लेखनी-लिखिताः ग्रन्थाः शलाका-कोरिताश्च के । पटेषु लेपिताः केचिदुत्कीर्णाः धातुषु क्वचित् ।१३८।
अन्ये च खोदिताः सन्ति शिलासु मृत्तिकासु वा । एवं बहुविधा ग्रन्थाः स्थाने स्थाने सुरक्षिताः ।१३९।
कर्गज-ताडपत्रेषु भूर्जपत्रेषु च क्वचित् । ग्रन्थास्समुपलभ्यन्ते विविध-लिपि-गुम्फिताः ।१४०।
शिलालेखेषु चैतिह्यं राजाज्ञा वा प्रशस्तयः । पञ्चाङ्गाः यन्त्रमन्त्राश्च वस्त्र-धातु-विनिर्मिताः ।१४१।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हस्तलेख-संरक्षणम् (Preservation of Manuscripts)

जलतैलानिलाग्निभ्यः मूषकेभ्यो यदा तदा । वातावरणवैषम्यात् कीटेभ्यो रक्षणं सदा ।१४२।

वेष्टनैर्दृढबन्धैश्च कीटनाश-रसायनैः । विविध-विधिभिस्तेषां संरक्षणं विशिष्यते ।१४३।

सततं भूषणीयास्ते लालनीयास्त्वपत्यवत् । रक्षणीयास्समे ग्रन्थाः परकराच्च क्षेत्रवत् ।१४४।

नित्यं संशोधनीयास्ते क्वचित्तु व्रणिताङ्गवत् । मित्रवद्वीक्षणीयास्ते बन्धनीयास्सुबध्यवत् ।१४५।

स्मरणीयाश्च ते सन्ति मन्दिरे हरिनामवत् । एवमाचरिते प्रायो हस्तलेखो न नश्यति ।१४६।

हस्तलेखसम्पादनम् (Editing of Manuscripts)

संरक्षणात्परं तेषां सम्पादनमभीष्यते । सम्पादिताश्च ते ग्रन्थाः यथाकालं प्रकाशिताः ।१४७।

सम्पादनविधावादौ मातृकाचयनं ध्रुवम् । सङ्ग्रहेभ्यश्च भिन्नेभ्यस्तत्प्रतिलिपिसङ्ग्रहः ।१४८।

नैके भारतवर्षेऽस्मिन् मातृका-पुस्तकालयाः । हस्तलेख-सुरक्षायै प्रतिप्रान्तं प्रतिष्ठिताः ।१४९।

प्रयागराज-संस्थाने गङ्गानाथाभिधे पुनः ॥ षष्टिसहस्रसंख्याकाः हस्तलेखाः सुरक्षिताः ।१५०।

भण्डारकर-संस्थाने नगरे पुण्यपत्तने । भिन्न-विषयका ग्रन्थाः प्राच्यविद्यासमर्थिताः ।१५१।

क्वचिद्विश्वेश्वरानन्दे क्वचिदाड्यायरे पुनः । बडौदा-प्राच्यविद्याख्ये संस्थाने वेङ्कटेश्वरे ।१५२।

एसियाटिक्-समित्योश्च बङ्ग-लन्दनयोः पुनः । सन्ति चान्यासु संस्थासु लक्षाधिकाश्च मातृकाः ।१५३।

राष्ट्रभाषाख्य-संस्थायां भारताख्ये कलागृहे । सन्ति वै मातृकागाराः जोधाख्ये नगरे पुनः ।१५४।

बह्वीषु शोधसंस्थासु संस्थानपोषितासु वै । चिन्मयानन्दसंस्थाने प्रज्ञापाठालये तथा ।१५५।

मन्दिरे पूर्णप्रज्ञे च वैदिके शोधमण्डले । ग्रन्थालये च जम्मुस्थे रघुनाथाभिधे क्वचित् ।१५६।

मिथिलायां कुरुक्षेत्रे चोज्जयिन्यां क्वचित्पुनः । एवमहमदावादे शिमला-द्वारकादिषु ।१५७।

विश्वविद्यालयास्सन्ति संस्कृताय समर्पिताः । केन्द्रीय-संस्कृताख्यस्तु परिसरैस्समन्वितः ।१५८।

कश्चित् पुर्यां प्रयोगे च त्रिशूरे लक्ष्मणे पुरे । जम्मौ जयपुरे चैव शृङ्गेर्यां गरलौ तथा ।१५९।

भोपालेऽगरतालायां क्वचिद्देवप्रयागके । कश्चित्परिसरोऽप्यस्ति मुम्बईनगरे पुनः ।१६०।

श्रीक्षेत्रे चोत्कले कश्चित् परिसरस्सदाशिवः । जगन्नाथ-प्रसादाच्च संस्कृतरक्षणे रतः ।१६१।

इलाह्बादे प्रयागे वा प्रयागराज-संज्ञके । गङ्गानाथाभिधश्चास्ति परिसरः प्रतिष्ठितः ।१६२।

परिसरः त्रयोदशः भाति देवप्रयोगके । कीर्त्यन्तः रघुनाथस्तु नाम यस्य प्रसिद्ध्यति ।१६३।

नवपरिसरश्चायं संस्थानस्य मनोरमः । प्रवाहयति राष्ट्रेऽस्मिन् संस्कृतजाह्नवीं नवाम् ।१६४।

गुरुवायुस्त्रिशूरे च जम्मौ रणविरस्तथा । त्रिपुरास्वेकलव्यश्च वेदव्यासो हिमाचले ।१६५।

वेद-वेदान्त-साहित्य-न्याय-व्याकरणादयः । समेऽप्युद्घाटिताश्चैषु विभागाः ज्योतिषादयः ।१६६।

द्वारबङ्गे प्रसिद्धोऽस्ति कश्चित्कामेश्वराभिधः । सम्पूर्णानन्द-नाम्ना च वाराणस्यां सुविख्यातः ।१६७।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जगन्नाथाभिधः पुर्यां नागपुरे तथाऽपरः । कालाड्यां शङ्कराचार्यः जयपुरे जगद्गुरुः ।१६८।
गुर्जरे सोमनाथो वै उज्जयिन्याञ्च पाणिनिः । असमे नलवाड्याञ्च पञ्चकुल्याञ्च वाल्मीकिः ।१६९।
अपरश्चोत्तराखण्डः हरीद्वारे प्रतिष्ठितः । तेष्वनेकेषु सन्त्येव हस्तलेखास्सुरक्षिताः ।१७०।
विद्यापीठयुगं ख्यातं स्तरीयं राष्ट्रियं पुनः । लालबहादुरं दिल्लयां तिरुपतावथापरम् ।१७१।
ग्रन्थानां शुद्धपाठार्थमनिवार्यं समीक्षणम् । आलोचनात्मकः पाठः पाठभेदैः स्थिरीकृतः ।१७२।
पाठालोचनसिद्धान्तास्सन्ति नैके विचारिताः । सिद्धान्तास्ये यथायोग्यं सम्पादने निवेशिताः ।१७३।
तत्क्रमे हस्तलेखानां वंशवृक्षस्सुनिश्चितः । यदाधारेण पाठानां वरीयस्त्वं विनिश्चितम् ।१७४।
सम्पादने स्थितिद्वयं सामान्यं परिदृश्यते । मूलपाठानुसन्धानं पाठसंस्कार एव च ।१७५।
भाष्यैश्च वंशवृक्षैश्च मूलपाठविनिश्चयः । निर्णयः शुद्धपाठस्य पाठसंस्कार उच्यते ।१७६।
हस्तलेखेषु चेतव्यः कोऽस्ति सर्वपुरातनः । चयनीयस्तथा चान्यः सर्वथा नवीनः पुनः ।१७७।
कालनिर्धारणं कार्यं मध्यगानां प्रमाणशः । प्रक्रियैषा विशिष्यात्र वंशवृक्षोऽभिधीयतो ।१७८।
प्रायशः पाण्डुलिप्यान्तु द्विविधास्त्रुटयो मताः । सापेक्ष्या निरपेक्ष्याश्च ते प्रत्येकं द्विधा स्मृताः ।१७९।
सापेक्ष्यास्त्रुटयस्सन्ति सार्थकाश्च निरर्थकाः । त्रुटयो निरपेक्ष्याश्च साधारणविशेषकाः ।१८०।

शोध-शोधार्थि-शोधनिदेशक-स्वरूपविमर्शः (Nature of Research, Researchers & Supervisors)

शुधु-धातोर्घञ्-योगेन शोधश्च शाब्दिकैर्मतः । गोशब्दो ज्ञानवाच्योऽस्ति गोरेषणा गवेषणा ।१८१।
समुपसर्ग-धा-धातोः ल्युट्प्रत्ययः प्रयुज्यते । अनुसन्धानशब्दोऽयमनुयोगान्निष्पद्यते ।१८२।
आवृतं स्वर्णपात्रेण सत्यमुखं च सर्वदा । तदपावरणञ्चेष्टं तत्त्वान्वेषणपूर्वकम् ।१८३।
जिज्ञासा-प्रश्न-शङ्काभिश्शोधः पोषणमाप्नुयात् । शङ्का चोत्थाप्यते तत्र कथं कदा केनादिभिः ।१८४।
उत्तरं समाधानञ्च शोधशब्देन गृह्यते । शोधतन्त्रे प्रसिद्ध्यन्ति बिन्दवः पञ्चषाः पुनः ।१८५।
आदौ शोधसमस्यायाश्चयनमिष्यते बुधैः । शोधार्थिभिस्ततः कुर्यात्तथ्यसङ्कलनं सम्यक् ।१८६।
तथ्यसङ्कलने सन्ति विधयः पञ्चषास्स्मृताः । साक्षात्कारविधिः कश्चित् ततोऽवलोकनात्मकः ।१८७।
अनसूचीविधिस्तत्र प्रश्नोत्तरी विधिः पुनः । जीवनवृत्तविधिश्च प्रायोगिको विधिस्तथा ।१८८।
तथ्यविश्लेषणं तत्र तृतीयः पक्ष उच्यते । तथ्यविश्लेषणोत्तरं विधेया परिकल्पना ।१८९।
आदौ संरचना तस्याः सत्यापनं ततः परम् । एवं क्षेत्रेषु सर्वेषु शोधतन्त्रं महीयते ।१९०।
आदौ बोधस्ततश्शोधः क्रमोऽयस्ति निश्चितः । एतत्क्रमं विना शोधे नैपुण्यं नाधिगम्यते ।१९१।
अधीत्यनन्तरं बोधस्तदन्वाचरणं भवेत् । प्रसारणञ्च शोधेऽपि चान्तिमः क्रम इष्यते ।१९२।
तात्पर्यनिर्णयस्यास्ति शोधेऽपि भूमिका दृढा । तत्र सप्त हेतवश्च शास्त्रे सन्ति निरूपिताः ।१९३।
उपक्रमोपसंहारावभ्यासापूर्वते तथा । एवं फलार्थवादाभ्यामुपपत्तिश्च सप्तधा ।१९४।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

असन्देहोऽल्पकायश्च सारश्चानावृतो मुखः । अतिशयोक्तिशून्यश्च अनिन्द्योऽयं शोधो भवेत् ।१९५।

एवं सूत्र-गुणास्सर्वे शोधस्यापि भवन्ति ते । एकं सूत्रं च शोधञ्च यः पश्यति सः पश्यति ।१९६।

शोधार्थिषु ह्यपेक्ष्यन्ते नैके गुणा विशेषतः । गृहीतविषये ज्ञानं स्वभाषादक्षता तथा ।१९७।

शोधार्थी विनयोपेतः साधुरपि भवेत्पुनः । एवं तच्छोधभाषायां नम्रता साधुता भवेत् ।१९८।

नवसम्भावनापक्षे चोन्मुक्ता दृष्टिरिष्यते । सर्वज्ञोऽस्मीति भावश्च नापेक्ष्यते कदाचना ।१९९।

नैपुण्यं लेखने सम्यग् दृष्टिः वैज्ञानिकी पुनः । स्वविषयेऽपि जिज्ञासा कार्यरुचिः कृतज्ञता ।२००।

स्थितिश्शोधानुकूला च विषये दक्षता क्वचित् । शोधे चानुभवः कश्चित् कालसीमा सुनिश्चिता ।२०१।

धनमपेक्षितं भवेत् सौविध्यं पुस्तकालये । शोधविषयसम्बद्धं पर्याप्तं पुस्तकं पुनः ।२०२।

विवरणात्मिकास्सूच्यो भवेयुः शोधपत्रिकाः । हस्तलेखाः सुलभास्स्युः सम्पादनविधौ पुनः ।२०३।

शैक्षिकी पृष्ठभूमिश्च प्रतिभा भावसंयुता । अध्यवसाय-सामर्थ्यं शोधार्थिनो भवेद् ध्रुवम् ।२०४।

शोधनिर्देशकस्यापि गुणाः केचिदपेक्षिताः । शोधार्थिनोऽनुसन्धान-गुणैश्च स्युः प्रभाविताः ।२०५।

विद्वान् सत्यप्रियो वाग्मी नित्यं छात्रहिते रतः । वत्सलो मृदुभाषी च सर्वशास्त्रविशारदः ।२०६।

निर्लोभस्समदर्शी च निरहंकार एव च । नित्यस्वाध्यायशीलश्च गुरुश्शोधोचितो भवेत् ।२०७।

संस्कृत-पत्रकारिता (Sanskrit Journalism)

पुष्पिताः फलिता नैकाः पल्लविताः परम्पराः । तास्वेवान्यतमा विश्वे समृद्धा पत्रकारिता ।२०८।

पत्रकारिता चाद्यत्वे पृथग्विधाऽभिमन्यते । तस्याश्च गद्यकाव्यत्वे परिगणनमिष्यते ।२०९।

या विद्या सर्वविद्यासु चाद्या विद्या प्रकीर्तिता । तां विद्यां सन्तनोत्येषा संस्कृत-पत्रकारिता ।२१०।

शोधकार्यं कृतं कैश्चित् कृतभूरिपरिश्रमैः । पत्रकारिता-सम्बद्धाः पक्षा यत्र विवेचिताः ।२११।

सम्बद्धश्च कृतश्शोधो रामगोपालवर्मणा । स च पुस्तकरूपेण प्रकाशितोऽस्ति सागरात् ।२१२।

एवञ्च बलदेवेन चेतिहासोऽस्ति वर्णितः । लालाशङ्करवर्येण पक्षाः केचिद् विवेचिताः ।२१३।

नानाविषयसम्बद्धाः नानारस-परिप्लुताः । पत्रिका विविधास्सन्ति भारताच्च प्रकाशिताः ।२१४।

प्रान्तीयभाषाबन्धैश्च हिन्द्याङ्ग्लोर्दूसमाश्रितैः । संस्कृतपत्रिकास्सन्ति नित्यं नवाः प्रकाशिताः ।२१५।

एकभाषात्मिका काचिद् द्विभाषीयाऽपि काचन । एवं काचित् प्रसिद्धाऽत्र भाषात्रय-समन्विता ।२१६।

निस्सन्देहं समृद्धेयं संस्कृत-पत्रकारिता । सन्ति प्रकाशिता यत्र पत्रिकास्त्रिशताधिकाः ।२१७।

सन्ति शोधात्मिकाः काश्चित् पत्रिकाः सर्जनात्मिकाः । प्रकाश्यन्तेऽधुना नैकाः सन्त्यनेकाः प्रकाशिताः ।२१८।

इदानीं जीवितास्सन्ति पत्रिकास्तु शताधिकाः । दैनिक्यः पत्रिकाः काश्चित् सप्ताहिक्यो भवन्ति काः ।२१९।

पाक्षिक्यस्सन्ति मासिक्यो द्वि-त्रिमासान्विताः पुनः । षाण्मासिक्यो भवन्त्यत्र वार्षिक्यस्सन्ति काश्चन ।२२०।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शोध-पत्रिकाः (Research Journals)

भारताच्च प्रकाश्यन्ते नैकाश्च शोध-पत्रिकाः । नामानि तासु कासाञ्चिदुल्लिख्यन्ते समासतः ।२२१।
पण्डितानामधीतीनां प्रत्यग्रशोधचक्षुषाम् । शोधलेखाः प्रकाश्यन्ते बहुमानञ्च तत्र वै ।२२२।
राष्ट्रियाः पत्रिकाः काश्चित् सन्ति शोधपरायणाः । एवं हि काश्चिदेवान्याश्चान्ताराष्ट्रिय-पत्रिकाः ।२२३।
भण्डारकर-संस्थायाः प्रसिद्धा शोधपत्रिका । नित्यं प्रकाशमायाति नगरात्पुण्यपत्तनात् ।२२४।
प्रकाश्यते वार्षिक्येव प्राच्यविद्यापरायणा । विश्वे प्रसिद्ध्यति गङ्गानाथ-झा-शोधपत्रिका ।२२५।
प्राच्यविद्याख्य-संस्थाऽस्ति बडौदायां प्रतिष्ठिता । ततः प्रकाशिते च द्वे प्रसिद्धे शोधपत्रिके ।२२६।
संस्थानाम्ना प्रसिद्धाऽस्ति तत्रत्या शोधपत्रिका । स्वाध्यायाख्याऽपरा चात्र विदुषां मार्गदर्शिका ।२२७।
अर्वाचीनञ्च संस्कृतं तथा शोधप्रभाऽपरा । विमर्शस्संस्कृतस्यापि सर्वाः दिल्ल्याः प्रकाशिताः ।२२८।
सौरभं देवभूम्याश्च देवप्रयाग-सङ्गमात् । सन्तनोत्युत्तराखण्ड-सौरभञ्चैव सर्वथा ।२२९।
स्वर्गादि-त्रिषु लोकेषु गङ्गा त्रिपथगामिनी । शाब्दी त्रिपथगा-नाम्नी ततश्चास्ति प्रकाशिता ।२३०।
एवमादिप्रयागाद्धि सुरनद्योश्च सङ्गमात् । नाम्ना संस्कृतगङ्गैषा प्रवाहयति संस्कृतम् ।२३१।
प्रदेशादुत्कलाच्चैव व्यासश्रीश्शोधपत्रिका । ततः प्राचीसुधाख्याऽपि नित्यमस्ति प्रकाशिता ।२३२।
आरा-प्रयागराजाभ्यामारण्यकञ्च मङ्गलम् । सागरान्नाट्यमेवेदमेर्णाकुलाच्च वाङ्मयम् ।२३३।
भद्रकाल्लोकप्रज्ञा च प्राच्या दिब्रूगडात् पुनः । सङ्गमनी प्रयागाद्धि ततश्च चितिवीथिका ।२३४।
लक्ष्मणाच्च पुरादेषा ज्ञानायनी प्रकाश्यते । एवं प्रकाश्यते नित्यं बङ्गादृतायनी पुनः ।२३५।
दृक्पत्रिका प्रयागाच्च सागरिका च सागरात् । सुषमोत्तर-संयुक्ता सारस्वती च काशीतः ।२३६।

विशुद्धाः मिश्रिताश्च सर्जनात्मिकाः पत्रिकाः (Pure and Mixed Creative Journals)

प्रकाश्यन्ते विशुद्धाश्च पत्रिकास्सर्जनात्मिकाः । किन्तु तासाञ्च संख्याऽत्र विरला नात्र संशयः ।२३७।
काव्याय पद्यबन्धाऽस्ति सा काव्यामृतवर्षिणी । एवं कथाविधायै तु प्रसिद्ध्यति कथासरित् ।२३८।
काश्चन मिश्रितास्सन्ति संस्कृतमञ्जरी यथा । दुर्वाऽजस्रासमाः काश्चिदुशती-भारती-समाः ।२३९।
साहित्याकादमीयाऽस्ति संस्कृतप्रतिभाभिधा । परिशीलन-नाम्न्यन्या काचिच्च स्वरमङ्गला ।२४०।
काशीतः विश्वभाषा सा गाण्डीवञ्च ततः पुनः । संस्कृते चन्दमामाऽपि नित्यं प्रकाश्यतेऽधुना ।२४१।
संस्कृतभवितव्यञ्च प्राचीप्रज्ञाऽणुपत्रिका । सन्देशः मासिकः ख्यातस्सम्भाषणाय चार्पितः ।२४२।

वार्ता-पत्रिकाः (Newsletter)

अन्याश्च पत्रिकास्सन्ति वार्ता वार्तावली तथा । यत्र वार्ताः प्रकाश्यन्ते स्व-स्व-संस्थानसंयुताः ।२४३।
न्यूज्लेटराभिधानन्तु प्रसिद्धमाङ्ग्लभाषया । वार्तास्संस्थागतास्तत्र भवन्त्येव प्रकाशिताः ।२४४।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रघुनाथ-प्रसादाच्च वार्तावली प्रकाश्यते । वार्ताश्चाभिनवास्तत्र यथास्तम्भं प्रकाशिताः ।२४५।
सुधर्मा दैनिकी वार्ता साहित्यैस्समलङ्कृता । एवमेवात्र सन्त्यन्या वार्तान्विताश्च पत्रिकाः ।२४६।

पाण्डुलिपिविज्ञानसम्बद्धाः पत्रिका (Journals Related to Science of Manuscripts)

विज्ञानं हस्तलेखस्य शोधप्रविधिना समम् । प्रकाश्यतेऽपि नैकासु पत्रिकासु विशेषतः ।२४७।
राष्ट्रिय-पाण्डुलिप्याख्य-मिशनेन च दिल्लीतः । कृतिरक्षणनाम्न्येका पत्रिकाऽस्ति प्रकाशिता ।२४८।
प्राच्यविद्यापरा चात्र विश्ववारा प्रकाश्यते । वरणीया भवेद्विश्वे शोधार्थिभिर्विशेषतः ।२४९।
पाण्डुलिपि-सम्बद्धैव सामग्री चोपकारिणी । प्रत्यङ्कं विश्ववारायां छात्रहिते प्रकाश्यते ।२५०।

शोध-प्रविधिः (Research Methodology)

विधिना प्र-प्रयोगेण प्रविधिः सुनियोजितः । शोधप्रबन्धविन्यासप्रक्रियेति मतं क्वचित् ।२५१।
प्रविधिः पद्धतिः शैली विशेष-विधिनिश्चता । अतो नामान्तरं सिद्धमनुसन्धानपद्धतिः ।२५२।

संस्कृत-शोधपरम्परा (Tradition of Research)

प्राचीना भारतस्यास्ति दीर्घा शोधपरम्परा । टीका-व्याख्या-समीक्षाश्च शोधादन्याः न कुत्रचित् ।२५३।
टीका च मल्लिनाथेन कृताऽन्वयमुखेन वै । नामूलं लिखितं किञ्चिच्छोधबीजं तदुच्यते ।२५४।
टीकाकारैस्तथैवान्यैः शोधस्स्व-स्व-दिशा कृतः । शोधपरम्परां द्रष्टुं ज्ञेया टीका-परम्परा ।२५५।

शास्त्रपरम्परा टीकापरम्परा च (Shastric Tradition and Tradition of Commentaries)

संस्कृवाङ्मये दृष्टा द्विधा मुख्या परम्परा । शास्त्रपरम्परा चैका काव्यपरम्पराऽपरा ।२५६।
टीकापरम्परा चान्या प्रसिद्धा काव्य-शास्त्रयोः । प्रतिकूलाऽनुकूला च द्विधा टीकापरम्परा ।२५७।
टीकाऽऽख्या टीकनात्प्राप्ता समीक्षाऽस्ति समीक्षणात् । अन्तर्भाष्यं समीक्षेति राजशेखरसम्मतम् ।२५८।
मूल्याङ्कनं तटस्थञ्चेत् विवेचनपरायणम् । तत्समालोचनं ज्ञातमालोचनं क्वचित्पुनः ।२५९।
दीपनाद्दीपिका प्रोक्ता नाम्ना ग्रन्थ-प्रकाशिका । आख्यायते विशेषेण तस्माद्व्याख्या प्रकीर्तिता ।२६०।
पदार्थोक्तिः पदच्छेदैर्वाक्यञ्च विग्रहान्वितम् । आक्षेप-समाधानञ्च व्याख्याने बहुधा श्रुतम् ।२६१।
फक्क-धातोर्ण्वुलि टापि निष्पद्यते च फक्किका । अर्थनिर्णयदृष्ट्योक्तमेकग्रन्थस्तु फक्किका ।२६२।
टीकाऽपि पद्धतिः प्रोक्ता सूत्रवृत्तिविवेचनात् । पञ्जिका पञ्चिका चापि विषमपदभञ्जिके ।२६३।
व्याख्याने धर्मग्रन्थानां संज्ञा निर्युक्तिरिष्यते । निरुक्तिर्वच-धातोस्स्यात् निरुपसर्गपूर्वकात् ।२६४।
वृ-धातोर्व्युपसर्गाच्च ल्युटि विवरणं मतम् । क्तिन्-प्रत्यये स्थितौ तस्यां विवृतिः कथ्यते बुधैः ।२६५।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रकटयति लुप्तार्थं लीनमर्थं तनोति या । करोत्यल्पमनल्पञ्च विवृतिस्तु विशिष्यते ।२६६।
कोशे हलायुधे साक्षाद् व्याख्या विवरणं स्मृतम् । निष्पन्नौ चूर्ण्यवचुर्ण्यौ चुर्णे त्विन्-प्रत्ययेन च ।२६७।
टिप्पणी-टिप्पणौ कोशे चान्यत्र तिलकं क्वचित् । एते शब्दाः प्रयुज्यन्ते टीकार्थे बहुविश्रुताः ।२६८।
पूर्वपक्षमुपस्थाप्य समाधिश्चोत्तरे पुनः । आक्षिप्य भाषणाद् भाष्यमिति भाष्यस्य लक्षणम् ।२६९।
भाष्यते सूत्रार्थो यत्र भाष्यमिति निगद्यते । सूत्र-वाक्यपदैः साकं वर्ण्यन्ते स्वपदानि वै ।२७०।
सन्ति बहूनि भाष्याणि नानाशास्त्रार्थसिद्धये । अद्वितीयं महाभाष्यं न भूतं न भविष्यति ।२७१।
उक्तानुक्तदुरुक्तानां विचारणाच्च वार्तिकम् । टीकार्थे च सुनिष्पन्नं वृत्तेर्ढक्प्रत्ययात्पुनः ।२७२।
तत्र परम्पराः नैकाष्टीकायास्सन्ति प्राक्तनाः । मुख्यं प्रसिद्ध्यति किन्तु तासु परम्पराद्वयम् ।२७३।
दण्डान्वयटीकानाम्ना चाद्या टीकापरम्परा । मल्लिनाथादीनां टीकाः सन्ति चैतद्विधागताः ।२७४।
टीकाः काश्चित्प्रसिद्धाश्च खण्डान्वयविधावपि । टीका शाकुन्तलीया च राघवभट्टनिर्मिता ।२७५।
आकाङ्क्षोत्थापनेनात्र प्रश्नस्समुपस्थाप्यते । प्रश्नोत्तरमाध्यमेन खण्डान्वयो विधीयते ।२७६।

टीकाया अवान्तरभेदाः (Secondary Divisions of Commentaries)

अवान्तरभेदास्सन्ति टीकायाश्च विशेषतः । शृङ्खला शास्त्रीया काचित् क्वचिच्च तुलनात्मिका ।२७७।
सुव्यवस्थापिका टीका चानुगामिन्यतः परम् । अन्याऽस्ति व्यापिका टीका रसग्रहान्विताऽपरा ।२७८।

तन्त्रयुक्तिः (Tools of Interpretation)

श्रवणात्तन्त्रयुक्तेश्च जिज्ञासैव भवेत् स्वतः । का चात्र तन्त्रयुक्तिश्च किं तस्यास्स्वरूपं पुनः ।२७९।
असद्वाद्युक्त-वाक्यानि निषिद्ध्यन्ते यया क्वचित् । यया स्ववाक्यसिद्धिश्च सा तन्त्रयुक्तिरिष्यते ।२८०।
वाक्यार्थयोजनञ्चैव तन्त्रयुक्तेः प्रयोजनम् । क्वचिद् वाक्ययोजनं स्यात् क्वचित् स्यादर्थयोजनम् ।२८१।
सुव्यक्तानामनुक्तानां लेशोक्तानाञ्च कुत्रचित् । लुप्तार्थानाञ्च गूढानां तन्त्रयुक्त्या प्रसाधनम् ।२८२।
अधीत्य सर्वशास्त्राणि तन्त्रयुक्तिं विना पुनः । नावगच्छति शास्त्रार्थानधीयानः कदाचन ।२८३।
तन्त्रयुक्ति-प्रकाराश्च शास्त्रेषु सन्ति सूचिताः । चरक-सुश्रुताभ्याञ्च कौटिल्येन विशेषतः ।२८४।
योगोऽधिकरणञ्चैव पदार्थश्च क्वचित् पुनः । हेत्वर्थश्चोपदेशश्च तथोद्देशोऽपि कुत्रचित् ।२८५।
अपदेशोऽतिदेशश्च प्रदेशश्च विपर्ययः । प्रसङ्गश्चोपमानञ्च तथार्थापत्तिरेव च ।२८६।
अनेकान्तस्तथैकान्तः पूर्वपक्षश्च निर्णयः । अनुमतं विधानञ्च व्याख्यानं संशयस्तथा ।२८७।
निदर्शनं नियोगश्च विकल्पोथ समुच्चयः । वाक्यशेषोऽपवर्जश्च ऊह्यं निर्वचनं तथा ।२८८।
अवेक्षणञ्च तत्रोक्तं द्विविधञ्च विशेषतः । क्वचिदनागतञ्चैतत्तथातिक्रान्तमेव हि ।२८९।
तन्त्रयुक्तेश्च भेदेषु स्वसंज्ञान्तर्वेत् पुनः । कौटिल्यो निर्णयस्थाने चोत्तरपक्षमिच्छति ।२९०।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

टीकायामुत्कृष्टा गुणाः (Merits of Commentaries)

टीकायां बहवस्सन्ति गुणाश्चोत्कृष्टकोटिकाः । दुर्बोधं न त्यजेट्टीका स्पष्टार्थं न च विवृयात् ।२९१।

अस्थाने जल्पनं त्याज्यं यतो भ्रमो वितन्यते । उत्कृष्टैश्च गुणैरेतैः टीका परमकोटिका ।२९२।

मुख्यतया प्रतिभाऽत्र द्विविधा परिकल्पिता । एकाऽस्ति कारयित्री सा भावयित्री तथाऽपरा ।२९३।

कवयः कारयित्र्या च भावयित्र्या समीक्षकाः । तत्पर्यागतास्सन्ति संज्ञाश्च भावकादयः ।२९४।

समीक्षकाश्चतुर्विधा भावयित्रीपरायणाः । सत्तत्त्वाभिनिवेशी स्यादविवेकी च मत्सरी ।२९५।

चतुर्थोऽत्र विवेक्यस्ति तस्य भेदावुभौ स्मृतौ । सहजगुणदोषज्ञः कश्चिदभ्यासको मतः ।२९६।

लेखक-लिपिकारयोः गुणदोषाः (Merits and Demerits of Author and Scribe)

लेखक-लिपिकारौ च विद्वांसौ परिकीर्तितौ । तयोरनवधानात्तु पाठोऽनर्थो भवेद्ध्रुवम् ।२९७।

लेखक-लिपिकारौ च सर्वशास्त्र-विशारदौ । मेधाविनौ स्यातां तौ च बहुलिपि-विशारदौ ।२९८।

तौ च बह्वर्थवक्तारौ वाक्पटू च सुलेखकौ । सकृदुक्त-गृहीतार्थौ लघुहस्तौ जितेन्द्रियौ ।२९९।

सम्पादको यदि ज्ञानी ग्रन्थः प्रामाणिकस्तदा । ग्रन्थस्सम्पादितो भ्रष्टः तदल्पज्ञानकारणात् ।३००।

अतस्तैर्ज्ञानिभिर्भाव्यं सम्पादकैश्च लेखकैः । लिपिकारैस्तथा भाव्यं शुद्धपाठस्ततो मतः ।३०१।

समीक्षात्मक-सम्पादनविधिः (Methods of Critical Edition)

द्रष्टव्या मातृकासूची सम्पादनविधौ समैः । क्वचित् सूच्यस्ति सामान्या क्वचिद्विवरणात्मिका ।३०२।

पाठं दोषयुतं त्यक्त्वा शुद्धपाठ-विनिश्चयः । विरोधानां परिहारः स्फुटव्याख्यानमाध्यमैः ।३०३।

पूर्णता सङ्गतिश्चैव लक्ष्यानुसरणेन वै । पौनरुक्त्य-समाधानं संक्षेपानाकुलं तथा ।३०४।

समीक्षाध्ययने चेष्टं शिष्टवाक्यविवेचनम् । एतेन मानकं सिद्ध्येत् सम्पादन-समीक्षयोः ।३०५।

हस्तलेखप्रयुक्ताः सङ्केताङ्काः कूटाक्षराश्च (Codes used in Manuscripts)

पुष्पिकासु यथास्थानं सङ्केताङ्काः समङ्किताः । मातृका-परिचयोऽत्र कूटाक्षरैस्तु सूचितः ।३०६।

आकाश-बिन्दु-रन्ध्राणि शून्यार्थवाचकानि वै । चन्द्रसूर्यधराभिश्च मेरुरेकार्थबोधकः ।३०७।

यमाश्विनौ कुचौ नेत्रे द्विसंख्यां सूचयिष्यतः । त्रिसंख्याबोधनार्थं वै रामगुणौ तथा जगत् ।३०८।

वेदवर्णाश्रमाश्चैते चतुःसंख्या-प्रबोधकाः । पाण्डव-बाण-भूताश्च पञ्चसंख्यानिवेदकाः ।३०९।

रसर्तुभ्यां गुणस्कन्दाः षट्संख्यार्थप्रबोधकाः । नगर्षिहयसागराः सप्तसंख्याप्रवाचकाः ।३१०।

द्योतयन्त्यष्टसंख्यां च वस्वहि-सिद्धिभूतयः । बोधयितुं समर्थास्ते चाङ्कग्रहादयो नवम् ।३११।

दशाङ्कं बोधयन्तस्स्युः दिगवतार-रावणाः । अक्षौहिणी-महादेवौ एकादशार्थबोधकौ ।३१२।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उपलक्षणमेतद्धि नेदमित्थन्तु मन्यताम् । सन्त्यन्ये बहवश्शब्दाः संख्याबोधनतत्पराः ।३१३।
अन्यास्संख्याः प्रबोद्धव्याः वस्तुसंख्याऽनुरोधतः । विस्तारभयमाशङ्क्य तदङ्कनाद्विरम्यते ।३१४।

पूर्वशोधसर्वेक्षणम् (Survey of Research Methodology and Science of Manuscripts)

सम्पादितं महत्कार्यं शोधे चाधुनिके पुनः । वामनपाण्डुरङ्गेन सातवलेकरादिभिः ।३१५।
भारतीकृष्णतीर्थेन मङ्गलदेवशास्त्रिणा । बलदेवारविन्दाभ्यां बालगङ्गाधरेण च ।३१६।
कृतं मोक्षमुलारेण वासुदेवादिभिस्तथा । मेक्डानेल-कीथाभ्याञ्च औफ्रेट-ग्रिफिथादिभिः ।३१७।
विल्सनोल्डनवर्गाभ्यां ह्विटनी-राथ-जोन्सादिभिः । बर्नेल-ब्लूमफिल्डाभ्यां स्टेंजलरादिभिः पुनः ।३१८।
वेबर-जाकबाभ्याञ्च ओझा-विन्टर्नित्जादिभिः । भारतीयैश्च पाश्चात्यैः शोधः स्व-स्वदिशा कृतः ।३१९।
विद्वद्भिर्विषये चास्मिन् नैकं शास्त्रं विचर्चितम् । मातृकाशोधसम्बद्धाः पक्षास्तैश्च समीक्षिताः ।३२०।
व्याख्या पद्यमयी काचिन्निर्मिताऽस्ति क्वचित्पुनः । शोधप्रविधिमाश्रित्य नैकैर्यत्नः महान् कृतः ।३२१।
अनेकाः कार्यशालाश्च विषयेऽस्मिन्ननुष्ठिताः । दीर्घकालात्मिकास्ताश्च स्वल्पकालात्मिकाः क्वचित् ।३२२।
सन्त्यस्मिन्विषये चान्ये व्याख्यातारः प्रतिष्ठिताः । केचित् सम्पादकाः केचित् समन्वयक-लेखकाः ।३२३।
कैश्चित् सूचीविनिर्माणे योगदानं कृतं महत् । कृतकार्यप्रसङ्गेषु सन्त्युल्लेख्याश्च केचन ।३२४।
कात्रे-राघवनाभ्याञ्च बरो-बेल्बकरादिभिः । पी.एल वैद्य-पी.के.गोडे-सुक्थङ्करादिभिः पुनः ।३२५।
किल्हर्न-बुह्लराभ्याञ्च सिनिरुद्धादिभिः पुनः । कुञ्जनी-चौफ्रेटाभ्याञ्च कृतं योगदानं महत् ।३२६।
बहवश्शोधलेखाश्च हीन्दाङ्ग्ल-संस्कृतेषु वै । नैकपक्षान् समाश्रित्य विद्वद्भिर्लिखिताः पुनः ।३२७।

नेपथ्यम् (Behind the Curtain)

आधारपुरुषत्वेन बहुत्राहं निमन्त्रितः । तद्व्याख्यानप्रसङ्गे च यत्किञ्चित् पठितं मया ।३२८।
समुपस्थापिताश्शङ्काः व्याख्याने प्रतिभागिभिः । जिज्ञासा बहुधा तेषां यथामति समाहिताः ।३२९।
तत्सर्वं परिशील्यात्र किञ्चिन्निवेदितं मया । नापूर्वं लिखितं किञ्चित् शैली किन्तु विशिष्यते ।३३०।
क्लेशाय सिद्ध्यतां न मे गद्यविश्लेषणं क्वचित् । हस्तलेखीय-शास्त्रञ्च कारिकासु निवेदितम् ।३३१।

लेखकीयम् (From Author's Pen)

एतेन मे प्रयासेन सोत्साहं निर्मितेन वै । उपकृताः यदिच्छात्राः श्रमो मे सार्थकीभवेत् ।३३२।
सूक्ष्मेक्षणेन सामग्र्यस्सङ्कलिताः यथाविधिः । संशोध्य पठनीयास्ताः त्रुटयो यदि काश्चन ।३३३।
स्वान्तस्सुखायच्छात्राणामुपकाराय कल्पिता । हस्तलेखमीमांसैषा मोदाय विदुषां भवेत् ।३३४।
सर्वान्महानुभावांश्च स्मराम्यत्र प्रसङ्गतः । यैश्च प्रोत्साहितोऽस्म्यस्य लेखनेऽथ प्रकाशने ।३३५।
बडौदा-प्राच्यविद्याख्य-संस्थायाश्च निदेशिका । श्वेताप्रजापतिस्त्वत्र चोल्लेख्याऽस्ति विशेषतः ।३३६।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

देवकृपां विना लोके कर्मसम्पदादनं कुतः । कृतज्ञेन मया चातः क्रियते देववन्दनम् ।३३७।

बद्रिनारायणं वन्दे वन्दे केदारनाथकम् । वन्दे वेरावलस्थन्तं सोमनाथं महेश्वरम् ।३३८।

नौमि तम्रघुनाथञ्च देवप्रयागवासिनम् । नौम्यक्षयवटं देवं त्रिवेणी-सङ्गमे स्थितम् ।३३९।

प्रसीदन्तां जगन्नाथाः नीलाचलनिवासिनः । विश्वनाथ-कृपादृष्टिर्वर्षतु वनमालिनि ।३४०।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वाल्मीकिरामायणम् (समीक्षित आवृत्ति)

अयोध्याकाण्ड

Edited by P.L.Vaidya, 2007
Price Rs. 600/-
(Reprint)

अरण्यकाण्ड

Edited by P.C. Diwanji, 2012
Price Rs. 410/-
(Reprint)

सुंदरकाण्ड

Edited by G.C. Jhala, 2012
Price Rs. 520/-
(Reprint)

किष्किन्धाकाण्ड

Edited by D.R. Mankad, 2014
Price Rs. 525/-
(Reprint)

Books are available at :

Co-ordinator, The University Publications Unit
A. I. C. S. Building
Opp. C. C. Mehta Auditorium
Pratapgunj, Vadodara - 390 002, Guajarat
Ph. No. 0265 2781700

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ગ્રંથાવલોકન

''કવિવર પ્રેમાનંદ ગૌરવગ્રંથ'', સંપાદક-સિતાંશુ મહેતા, પ્રકાશન-પ્રેમાનંદ સાહિત્ય સભા, વડોદરા, વર્ષ ૨૦૧૯, પૃ. ૫૦૦, મૂલ્ય : રૂા. ૫૦૦/-

મધ્યકાલીન કથાસાહિત્યમાં, મુખ્યત્વે ફાગુકાવ્ય, બારમાસી, રાસ-રાસા અને પદ્યવાર્તા જેવા ખેડાયેલા પ્રકાર-વૈવિધ્યમાં, સૌથી વિશેષ આખ્યાન ઉલ્લેખનીય છે. ભાલણ, નાકર અને અન્ય કવિઓથી વિશેષ તત્કાલીન લોકભોગ્ય, લોકપ્રિય અને કલાસ્વરૂપની દૃષ્ટિએ પણ સર્વોત્તમ નીવડેલા પ્રેમાનંદ 'આખ્યાન શિરોમણિ' છે. પ્રેમાનંદના કાર્યકાળમાં નંદુરબાર અને વડોદરાનો મહત્તમ ફાળો છે. વડોદરા, તેનું જન્મસ્થળ હોવા ઉપરાંત એકાધિક દૃષ્ટિએ બડભાગી છે. પ્રેમાનંદ વડોદરાનો, અને તેથી વિશેષ તે ગુજરાતી સાહિત્યનું પણ ગૌરવ છે. વડોદરામાં વાડી વિસ્તારમાં પ્રેમાનંદ કવિની પોળ છે. તો વળી એના નામ સાથે જોડાયેલી પ્રેમાનંદ સાહિત્ય સભા પણ સાહિત્ય-સેવાર્થે આજપર્યંત ધબકતી સંસ્થા છે. ૧૯૧૬માં સ્થપાયેલી આ સંસ્થાએ ક્રમશઃ રજતજયંતી, સુવર્ણજયંતી અને અમૃત જયંતી વર્ષના વિશેષાંકો પછી, 'શતાયુ પ્રેમાનંદ સાહિત્ય સભા'નું ગૌરવ પ્રાપ્ત કરી, શતાબ્દીના સંભારણારૂપે કવિવર પ્રેમાનંદ ગૌરવગ્રંથનું એક સીમાચિહ્નરૂપ સંપાદન કર્યું છે.

૧૬મી સદીમાં જે પ્રેમાનંદ સમાજના સીધા સંપર્કમાં હોવાથી પ્રજાવત્સલ હતો તે ૨૧મી સદીમાં ગ્રંથાલયોમાં પુસ્તકોની હારમાં ગોઠવાયેલો કે પછી પાઠ્યપુસ્તકોમાં પૂરાયેલો છે. વર્તમાન પરિસ્થિતિમાં ગુજરાતી સમાજને વિકસાવવા માટે પ્રેમાનંદના આખ્યાનના પ્રસંગો, પાત્રો, કેવી રીતે ફળદાયી બને એમ છે ? પુરાણનું વિષયવસ્તુ સમકાલીન પ્રજા માટે કેવોક રસમય સંબંધ ગૂંથી શકે એમ છે ? પ્રેમાનંદનાં આખ્યાનોમાં મળતી રાજ, ધર્મ, સત્તા, અર્થની મીમાંસા વર્તમાન પ્રજાના ઉત્કર્ષ માટે કેટલે અંશે ઉપયોગી નીવડે ? એ વિચાર ભારતીય કવિઓના કવિકર્મ અને અનુસરણ સંદર્ભે પણ સમયોચિત ગણાય ? ટૂંકમાં ૧૭મી સદી સાથે ૨૧મી સદીનો વિશેષતઃ સર્જક અને સર્જન માટે પ્રેમાનંદનાં આખ્યાનોનાં કેટલાંક પાસાંઓ દ્વારા સેતુ રચી શકાય એની શક્યતાઓની તપાસ પ્રેમાનંદની મિલનભૂમિના કેન્દ્રમાં રહી કરવી ઉચિત છે. આ પ્રકારના કેટલાક ઉદ્દેશ નજર સમક્ષ રાખી વર્તમાનમાં પ્રેમાનંદની પ્રસ્તુતતાનો હેતુ પણ એમાં સૂચિત છે. આ પ્રસ્તુતતાની તપાસનો પ્રયાસ પ્રેમાનંદની મિલનભૂમિમાં સહિયારા પ્રયત્નથી, પ્રેમાનંદના આખ્યાનમાં નિરૂપિત પાત્રત્વ સંદર્ભે, ૧૭મી સદીના આખ્યાનમાં ઉઠતા સવાલો સાથે, અનેક રીતે જણાતા, સામ્ય, સ્વરૂપ,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

નિરાકરણ, પ્રેમાનંદના સર્જન સંદર્ભે ૨૧મી સદીમાં ઊઠતા પ્રશ્નોમાં જ તેની પ્રસ્તુતતા કઈ રીતે સિદ્ધ થાય તેની તપાસનો પ્રયત્ન છે.

લોકભોગ્ય મનોરંજન માટે જે પ્રજા ૧૭મી સદીમાં અભાવગ્રસ્ત હતી તે હવે ૨૧મી સદીમાં પ્રભાવગ્રસ્ત છે. ઇચ્છાનુસાર, સગવડતા પ્રમાણે અને જરૂરિયાત પ્રમાણે આજે જ્યારે મનોરંજન હાથવેંત છે ત્યારે જ્ઞાન, ગમ્મત કે મનોરંજન માટે ૧૭મી સદીનાં પ્રેમાનંદનાં આખ્યાન કેટલાં સક્ષમ છે ? એ સંદર્ભે પણ પ્રેમાનંદનાં આખ્યાનોની પ્રસ્તુતતાનો વિચાર ઉચિત છે. છતાં એ પણ સત્ય છે કે, પ્રજામાનસમાં સુધારો અને વર્તમાન વાસ્તવ વચ્ચે પણ પ્રેમાનંદનાં આખ્યાનો વિસરાયાં નથી તેનો પ્રભાવ કે તે નામશેષ થયાં નથી. તેની ઐતિહાસિકતા અને સાહિત્યકતા આજે પણ અણનમ છે. આભ્યાસક્રમોમાં અચૂક પ્રેમાનંદનું સ્થાન રહ્યું છે. તેને માટે આજે પણ લોકાદર અને ગૌરવ પરથી સ્પષ્ટ થાય છે કે પ્રેમાનંદની પ્રસ્તુતતા સાવ નથી જ, એવું તો છે જ નહીં તો પછી કયા ક્ષેત્રે, કયા સંદર્ભે, કેટલા અંશે, કેવી રીતે અને કયા હેતુઓ માટે પ્રેમાનંદ પ્રસ્તુત છે એની આ ગ્રંથમાં મુદ્દાસર સદષ્ટાંત રસપ્રદચર્ચા સાથે પ્રેમાનંદની પ્રસ્તુતતાને સમર્થન આપ્યું છે.

૨૧મી સદીમાં પણ, ૧૭મી સદીના પ્રેમાનંદની રસસનિષ્પત્તિની કળાને વિવિધ પરિમાણોમાં મૂલવી શકાય. કેટલાંક આખ્યાનોમાં પ્રેમાનંદ અલૌકિકોની પણ મજાકમાંથી પોતે વાંકમાં આવ્યા વિના, કેવી રીતે હાસ્ય નિષ્પન્ન કરે છે એ કળા આજે પણ કયા ક્ષેત્રમાં, કેવી રીતે કામે લગાડી શકાય એ શિખવા જેવું છે. આજે વિશ્વસ્તરે (Supper Ego) મોટી સત્તાઓને સાનમાં સમજાવી દેવા માટે આ કૌશલ ઉપયોગી નીવડી શકે, વકરેલી દેશી વિદેશી સત્તાઓને વશમાં રાખવા માટેનો પ્રેમાનંદી વિનોદનો આ કીમિયો કામિયાબ સૂચક અને અસરકારક પણ છે. ભારતીય નાટકોમાં આ જ આશયથી વિદૂષકના પાત્રની ભૂમિકા છે. પ્રેમાનંદના હાસ્યને જાણીને, માણીને, એવું જરૂર લાગશે કે પ્રજાઓના લમણે તાકીને બેઠેલી સત્તાઓના પરિબળ સામે લડત આપી શકે, તેમ જ સંરક્ષક થઈ શકે એવી કળા પ્રેમાનંદની સર્જકતામાં અવશ્ય ઉલ્લેખનીય છે.

૧૭મી સદી હોય કે ૨૧મી સદી હોય, સદી ભલે બદલાય પણ માણસના સ્વભાવમાં ઝાઝો તફાવત કે સુધારો જોવા મળતો નથી. પ્રેમાનંદનાં આખ્યાનોમાં એ સંદર્ભે સ્વભાવદર્શનનું પણ અનુસંધાન જોવા મળે છે. સમય બદલાય પણ માણસ બદલાતો નથી એનો નિર્દેશ ૧૭મી સદીનાં આખ્યાનોમાં જે મળે છે એનું પ્રમાણ ૨૧મી સદીમાં પણ દુર્લભ નથી. માનવસ્વભાવ દર્શન માટેની આખ્યાનમાં પ્રયોજેલી રીત અને તેના હેતુ વર્તમાનમાં પણ કામે લગાડી શકાય. એમાં કેટલાક તો સર્વકાલીન પ્રભાવક રહે તેવા પણ છે. પ્રેમાનંદ આખ્યાનના દરેક અંગને પાસાદાર બનાવે છે, એમાં પાત્ર નિરૂપણમાં તેની આ સંદર્ભે માવજત માટે 'ચંદ્રહાસ આખ્યાન' સવિશેષ ઉલ્લેખનીય છે. આ આખ્યાન મુખ્યત્વે ભક્તિની સાથે પાત્રોના સ્વભાવનિર્દેશ માટે પણ દષ્ટાંતરૂપ છે. ૧૭મી સદીના તાબાઓ માટેની તત્કાલીન પ્રજાને ગમે તેવી ગ્રંથમાં કરેલી ચર્ચા ૨૧મી સદીની પ્રજાને પણ ગમે તેવી છે.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

પ્રસ્તુત સંદર્ભે 'સુદામાચરિત્ર'ના અંતિમ કડવામાં 'બુદ્ધિમાને......બોલો શ્રીહરિ' (પૃ. ૨૬) પંક્તિઓ છે. એમાં લીલા કરનાર કોણ ? બુદ્ધિમાન કોણ ? એ સંદર્ભે ગઈ કાલે કથા કરી ગયા એ પ્રેમાનંદ તો મિથ્યા નથી જ. કારણ કે તેણે પ્રાચીન ભારત સાથે જોડાઈ શકે એવું રૂપાંતર કર્યું છે. પ્રેમાનંદ સાથે સંબંધ સજીવ થતાં જ કશું અલગ સમજવાની શરૂઆત થાય છે. પાશ્ચાત્ય સાહિત્યમાં માણસાઈની લીલા માટે, શેક્સપિયર અને માર્કેઝે જે અવકાશ રચી આપ્યો છે તે કામ ગુજરાતી કવિતામાં પ્રેમાનંદે કર્યું છે. ત્યાં પણ પ્રેમાનંદ પ્રસ્તુત જણાશે. ક્યાંક માનવસ્વભાવ, ક્યાંક પાત્રનિર્દેશ, ક્યાંક સમસ્યાનિવારણ, કેટલાક સવાલોમાં, રાજ્યવિચાર, પ્રજામાનસને ધ્યાનમાં રાખી, ઇતિહાસ, સમાજ, રસાનુભૂતિને લક્ષમાં રાખી સંપાદકે પ્રેમાનંદની પ્રસ્તુતતાને સદૃષ્ટાંત ચર્ચા દ્વારા સમર્થન આપ્યું છે.

આ ગ્રંથમાં પ્રેમાનંદના જીવન, કવન અને પ્રેમાનંદ સંલગ્ન અન્ય મહત્ત્વની સૂચી, વિદ્વાન લેખકોના અભ્યાસપૂર્ણ ૩૧ લેખો ગ્રંથનું સમૃદ્ધ પાસું છે. મુખ્ય ૧૦ વિભાગોમાં સુવ્યવસ્થિત રીતે વિભાજિત આ વૈવિધ્યસભર વિચારસરણી ધ્યાનાર્હ ગણી ગુણવંત શાહે ''ગ્રંથની વિચારસમૃદ્ધિ કોઈ પણ વાચકને તરબતર કરે તેવી છે'' એમ કહી નોંધ લીધી છે.

કવિવર પ્રેમાનંદ ગૌરવગ્રંથના પ્રથમ વિભાગમાં રાજેશ પંડ્યા અને અભય દોશીએ કથાત્મક સાહિત્યમાં વિશાળ વ્યાપના સંદર્ભે ઊંડી તપાસ કરી છે. જેમાં રાજેશ પંડ્યાએ જૈનેતર પટ સાથે અને અભય દોશીએ જૈન પરંપરાને સાથે રાખી આખ્યાનની વિશદ ચર્ચા કરી છે. બન્ને લેખકોના અભિગમની દિશા જુદી છે પરંતુ બન્નેથી પ્રેમાનંદના સમયની સાંસ્કૃતિક ઇતિહાસના સંદર્ભે તપાસના મુદ્દે હેમંત દવે એ બે લેખકોથી જુદા પડે છે.

બીજા વિભાગમાં ચંદ્રકાંત ટોપીવાલાનો લેખ 'રણયજ્ઞની મીમાંસા' માટે, તો ચંદ્રકાંત શેઠનો લેખ આખ્યાનનાં સુદીર્ઘ કાવ્યોની સૌંદર્યયાત્રા માટે રસપ્રદ છે. રમણ સોનીનો લેખ સૂક્ષ્મદર્શી અભ્યાસની પ્રતીતિ કરાવે છે. હરીશ મિનાશ્રુના લેખમાં ભાવકને રસ પડે એવી માહિતી છે. દલપત પઢિયાર તેમના લેખમાં નવજીવન લયહિલ્લોળ છેક નજીકથી ઝીલે છે. 'પ્રેમાનંદ એરિયલવ્યૂ'માં નરોત્તમ પલાણ ગુજરાતના સાંસ્કૃતિક ઇતિહાસની માર્ગી તેમજ દેશી, બન્ને દૃષ્ટિએ કલા-મીમાંસકની મુદ્રા ઉપસાવે છે.

ત્રીજા વિભાગમાં જનક રાવલે, દશમસ્કંધને કેન્દ્રમાં રાખી, આખ્યાનોમાં સામાજિક અનુબંધ નિમિત્તે, તત્કાલીન પાત્રો, અસત-સતની પ્રતીતિ, મધ્યકાળના જીવનમાં અવનવાં પરિમાણો, અને ભાષા આદિ પાસાંઓની ચર્ચા કરી છે. ભરત મહેતાના લેખમાંથી, આખ્યાનના સમાજશાસ્ત્રીય અભ્યાસ નિમિત્તે, મોટી સિદ્ધિઓ મેળવવા માંગતા કોઈપણ કવિને 'ચારસો વર્ષો પહેલાનાં પ્રેમાનંદનાં આખ્યાનોનું સર્વાંગસ્પર્શી ઊંડાણપૂર્વકનું પરિશીલન કરવું પડશે' એ સૂર પકડાય છે. લેખકે એ વાતનું પણ ધ્યાન દોર્યું છે કે જ્યાં ગુજરાતી ભાષા હશે ત્યાં સુધી પ્રેમાનંદ મિથ્યા નહીં થાય. જેમ ઈંગ્લેન્ડની ઓળખ શેક્સપિયર કે ચોસર થકી છે એમ આપણા માટે પ્રેમાનંદ છે. એમાં પણ પ્રેમાનંદની પ્રસ્તુતતાનો સંકેત મળે છે. દક્ષા ભાવસારે પ્રેમાનંદની કૃતિઓના વિશાળ ફલકમાંથી દેશી દ્વારા કેટલીક ભાવી

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

શક્યતાઓનો પણ ખ્યાલ આપ્યો છે. આખ્યાનમાં ઉલ્લેખનીય રાગોના નિર્દેશ થકી ઉપજ્ઞા પંડ્યાએ આખ્યાનોની તપાસની નવી દિશા ચીંધી છે. હસિત મહેતાએ ચયન વિભાગનું સંપાદન કરીને, પ્રેમાનંદની વિવેચનાનો આપણા પૂર્વસૂરિઓ સાથે સેતુ રચી આપ્યો છે. એ દૃષ્ટિએ ગ્રંથની સમૃદ્ધિમાં હસિત મહેતાની ભૂમિકા મહત્ત્વની રહી છે.

પ્રેમાનંદના જીવન અને સર્જકત્વ સંદર્ભે, કૃતિઓ સંદર્ભે, ગ્રંથમાં સમાવિષ્ટ લેખોમાંથી વાચકને ઘણી માહિતી મળી રહે એમ છે. આ ગ્રંથમાં પ્રેમાનંદ વિશેનાં પ્રકાશનોની માહિતી તેમજ વિવેચનો અંગેની ગ્રંથસૂચિ મણીભાઈ પ્રજાપતિએ આપી એનું મહત્ત્વ બે રીતે છે. એક તો એના વિના 'કવિવર પ્રેમાનંદ ગૌરવગ્રંથ' અધૂરો રહેત. તેમજ પ્રેમાનંદ વિશેના હવે પછીના માર્ગ આ સૂચિ ચીંધે છે. પ્રેમાનંદની કાવ્યપ્રસાદી પણ આ ગ્રંથમાં ઉપલબ્ધ છે. તદુપરાંત વૈવિધ્યમાં હસ્તપ્રત, આખ્યાનનાં કડવાં, કેટલાંક મૂલ્યવાન ચિત્રો પણ ગ્રંથની સમૃદ્ધિમાં વધારો કરે છે.

પ્રેમાનંદના નામ સાથે જોડાયેલી પ્રેમાનંદ સાહિત્ય સભા દ્વારા શતાબ્દી વર્ષના સંભારણારૂપે આ ગ્રંથનું પ્રકાશન થયું એ સંદર્ભે પ્રેમાનંદ સાહિત્ય સભાના પ્રમુખે સંસ્થાનો ઇતિહાસ અને કાર્યો વિશેનો લેખ, તેમજ સંસ્થાન કાર્યાધ્યક્ષ સુરેશ શાહે ભૌતિક સુવિધા અને વિકાસ સંદર્ભે માહિતી લેખ જેવા પરિચયાત્મક લેખો પણ આ ગ્રંથમાં છે. સંસ્થાના મહામંત્રી વિરંચિ ત્રિવેદીએ કરેલા વિભાગ અને પેટા વિભાગોમાં નિર્દેશ માટે પ્રસ્તાવનામાં પદ્મશ્રી સિતાંશુ મહેતાએ, તેમજ લેખમાં 'ઝીણવટભરી દૃષ્ટિનો પરિચાયક...' લેખ તરીકેનો ઉલ્લેખ કર્યો છે. વિવેચક ડૉ. કિશોર વ્યાસે ડૉ. વિરંચિ ત્રિવેદીના લેખ સંદર્ભે જણાવ્યું છે કે "પ્રેમાનંદ સાહિત્ય સભાનો પરિચય અને પ્રવૃત્તિઓનો અહેવાલ દર્શાવે છે કે સંસ્થા ધારે તો કેવાં ઉત્તમ કામો હાથ ધરીને જીવંત રાખી શકે છે." બાબુ ગોર ગ્રંથનું મૂલ્યાંકન કરતાં લખે છે કે "... પ્રેમાનંદજીના જીવન-કવન સાહિત્ય યાત્રા વિશે લખાયેલા લેખો આ ગ્રંથને દૈદીપ્યમાન બનાવે છે." "...સભાની પ્રવૃત્તિઓ કેટલી વૈવિધ્યપૂર્ણ છે તેનો ખ્યાલ આ અહેવાલ પરથી આવશે" એમ જણાવી વિવિધ આખ્યાનના પઠન અને ગાનની ધ્વનાંકિતા (સી.ડી.) સાથે ગ્રંથનું ગૌરવ દર્શાવતા વિનાયક રાવલે નોંધ લીધી છે કે ".... સમગ્ર સંપાદન પછવાડે સંપાદકની જાગૃત અને ચકોર નજર કામ કરી ગઈ છે.... ગ્રંથનું સંપાદન સૂઝ, સમજ અને સજ્જતાથી થયું છે" એ જોતાં આ અભ્યાસપૂર્ણ કવિવર પ્રેમાનંદ ગૌરવગ્રંથ એક દસ્તાવેજી ગ્રંથ તરીકેનું મૂલ્ય ધરાવે છે એમ કહેવું યથાર્થ છે.

વિરંચિ ત્રિવેદી

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

વડોદરાનો વૈભવ, લેખક : જગજીવનદાસ દયાળજી મોદી, પ્રકાશક-એમ. સી. કોઠારી, કાપડી પોળ, વડોદરા, પ્રથમ આવૃત્તિ, ઈ. સ. ૧૯૨૩, પૃ. ૫૮, મૂ. રૂા. ૦-૬-૦

શ્રી સયાજી બાલજ્ઞાનમાળા અંતર્ગત (પુષ્પ ૨૭) પ્રસિદ્ધ થયેલું આ પુસ્તક વડોદરાના જૂના સમયની ઝાંખી કરાવે છે. વડોદરાનાં આઝાદી પહેલાનાં સ્થળોની ઐતિહાસિક માહિતી વાચકવર્ગને ગમ્ય બની રહે એ રીતે અહીં રજૂ થઈ છે. પુસ્તકની લખાવટ વિશિષ્ટ શૈલીની છે. ભાણેજ મામાને પત્ર લખે અને મામા વડોદરે આવે પછી મામાને આખું વડોદરા બતાવવું એવી યોજનાને આકાર આપવા નાનાં નાનાં ૧૦ પ્રકરણોમાં વર્ગીકરણ કરાયું છે. પુસ્તકમાં આગળ કોઈ અનુક્રમણિકા નથી. એકાદ પાનાનું નિવેદન ને બે પૃષ્ઠની પ્રસ્તાવના પછી સીધો પુસ્તકપ્રવેશ શક્ય બને છે. પ્રસ્તાવનામાં લેખક કહે છે તેમ : ''અજાણ્યા મુસાફરને તો આ પુસ્તક ભોમિયાની ગરજ સારસે અને એ વાચતા વડોદરું નજર આગળ ખડું થઈ જશે''-એ વાત યથાર્થ પુરવાર થાય છે. જે સમયમાં લખાયું છે એ સમયે તો આ પ્રકારનાં પુસ્તકો નહિવત્ હશે એટલે એનું એ સમયમાં અદકેરું મૂલ્ય હશે જ.

પુસ્તકના પ્રથમ પ્રકરણમાં લેખક પોતાના મામાને બાપુજીના કહેવાથી કેવી રીતે કાગળ લખ્યો એની નાની એવી પૂર્વભૂમિકા રચીને બે પૃષ્ઠોમાં આખો કાગળ રજૂ કરે છે. એમાં કુશલમંગળ અને મામાને પરિવારસહિત વડોદરે આવવાનું આમંત્રણ છે. પત્રની વિગતો બહુ અગત્યની છે. એ વખત વડોદરા એક લાખ માણસની વસ્તીવાળું છે એ જાણવા મળે છે. મામાને લખાયેલી પત્રની વિગતોમાંથી જ જાણવા મળે છે કે એ વખતે વડોદરામાં રેલ્વેનું મોટું સ્ટેશન વસી ચૂક્યું છે. ઘેરઘેર પાણીના નળ આવી ચૂક્યા છે. વીજળીના દીવા પણ છે ને શહેરની વચ્ચે દરિયા જેવું મોટું તળાવ પણ બંધાઈ ચૂક્યું છે. પ્રકરણ ૧નું શીર્ષક છે ''દિગ્દર્શન''

પ્રકરણ ૨ ''પ્રથમ દર્શન''માં વળતી ટપાલે મામાનો કાગળ આવે છે. મામા ગામડામાં રહે છે એટલે વડોદરાને નાનું જાણી માત્ર રવિવારે આવશું એટલું લખે છે. પરંતુ લેખક ગાડીનાં સમય મુજબ સ્ટેશન પર જાય છે. ઘરમાં પોતે અને પિતાજી બે જ છે. માતા ચારેક વર્ષ વહેલા સ્વર્ગવાસી થયેલાં છે. ઘરમાં પાણીને માટે એક ભટ રાખેલ છે. કામકાજ માટે ચાકર પણ છે. ભટને કહી રાખ્યું છે કે ''આ ગાડીમાં મામા આવવાના છે માટે બે ત્રણ માણસની રસોઈ વધારે કરજો.'' તૈયારીપૂર્વક લેખક સ્ટેશને જાય છે. એ જ ગાડીમાં મામા આવે છે. એ વખતનું વર્ણન જુઓ : ''જોતજોતામાં તો સુસવાટા કરતી ગાડી આવી પહોંચી. મારા ધારવા પ્રમાણે એ ગાડીમાં જ મારા મામા હતા. બહાર ડોકું કાઢીને તે આમતેમ જોયા કરતા હતા. તેથી દૂરથી જ મેં તેમને ઓળખી કાઢ્યા ને તરત તેમની પાસે જઈને હું ઊભો.''

આ સમયનું મામાનું વડોદરા જોયાનું કુતૂહલ, સ્ટેશન બહાર ઘોડાગાડીઓની ઠઠ, દુકાનોની હાર અને સારાં સારાં મકાનો વડોદરાની તત્કાલીન રાજ્યની જાહોજલાલી સૂચવે છે. એ વખતે વડોદરું સ્ટેશનથી બે માઈલ દૂર છે ને ગાડીમાં બેસી મામાને ઘરે લઈ જાય છે. એ સ્થળ એટલે બાજવાડા. આજે પણ બંને સ્થળો પોતાની જગ્યાએ જ સ્થિત છે પરંતુ વચ્ચે નગર વસી ચૂક્યું છે. એ વખતે વડોદરા એટલે ચાર દરવાજાવાળો વિસ્તાર જે સ્ટેશનથી બે

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

માઈલ દૂર યથા સંદર્ભ ઉચિત ઠરે છે. રસ્તામાં કમાટીબાગ પાસેનું સ્ટેચ્યું જોઈ મામા આશ્ચર્ય વ્યક્ત કરે છે. મામા એકલા જ આવ્યા છે. એ ઘરે આવીને પૂછે છે ''ભાણાભાઈ ! આપણે આવ્યા એટલું વડોદરું કે ? બહુ મ્હોટું છે.'' લેખક કહે છે તેમ ''મામા ! એ તો વડોદરાનો એક ભાગ પણ પૂરો નથી. એવું તો ચારે દિશાએ શહેર પડેલું છે.'' લેખક મામાને આઠ દહાડા નિરાંતે રહેવાનું છે ને જીવ્યા કરતાં જોયું ભલું એમ કહે છે.'' બાપજી પણ કહે છે શહેર જોવા જેવું છે અને લેખકને કહે છે કે ''સારી રીતે ફરીને બતાવજે, ભાઈ !''

પ્રકરણ ૩ નું શીર્ષક પુરાતન કથા છે. આ પ્રકરણમાં વડોદરાનું નામ વડોદરા કેવી રીતે પડ્યું ? એવા મામાના પ્રશ્નના જવાબમાં લેખક વિગતે સમજાવે છે. વડોદરા ક્યારથી વસ્યું ને દૌલતાબાદ શા માટે કહેવાતું એની પૌરાણિક - ઐતિહાસિક હકીકતો આકર્ષક છે. દલા પટેલ, વાઘજી પટેલ અને સુરેશ્વર દેસાઈ, દાજી પટેલ પીલાજીરાવ ગાયકવાડને ગુજરાતમાં તેડી લાવે છે ને ગાયકવાડ સરકારને કેવી મદદ કરે છે એ વિગતોના મૂળમાં મુસ્લિમ સલ્તનત વિરુદ્ધની માહિતી મળે છે. દલા પટેલ એ વખતે બહુ જબરા ગણાતા હતા. ''ઉપર અલા ને નીચે દલા'' એવી કહેવત એમના માટે બોલાતી. એ સમયે વડોદરું લીધા પછી ગાયકવાડ સરકારે માંડવી પાસે હવેલી બંધાવી અને ચાર દરવાજા અને શહેરની ફરતે કોટ બંધાવ્યો. કોટની બહાર જંગલ હતું. પણ વધતી વસ્તીને પરિણામે ત્યાં પણ પરાં વસ્યાં ને મોટું શહેર આકાર પામ્યું.

પ્રકરણ ૪માં શહેરનો દેખાવ -કોટની અંદર શીર્ષક અંતર્ગત વિવિધ મંદિરો, માંડવી, શહેરનાં બજારો, ચાર દરવાજા, બાજવાડા, સુલતાનપુરા, નવલખા શેઠની હવેલી, શહેરની પોળો, શહેરનાં મેદાન, દરેક દરવાજાની આજુબાજુ આવેલાં સ્થાનો, સેન્ટ્રલ લાયબ્રેરી, વડોદરા બેંક વગેરે સ્થળોનો પરિચય મળે છે. પાણીગેટને પાણીનો દરવાજો ને ગેંડી ગેટને કેમ ગેંડીગેટ કહેવાય છે એની વિગતો રસપ્રદ છે.

પ્રકરણ ૫ માં શહેરનો દેખાવ-કોટની બહાર અંતર્ગત દરવાજાની બહારનાં એ વખતે વસેલાં સ્થળો જેવાં કે ન્યાયમંદિર, સુરસાગર, લાડબાદેવીનું મંદિર, ખંડેરાવ માર્કેટ, શ્રી સયાજી વિહાર ક્લબ, કલાભવન, ઇંદુમતી મહેલ, વિશ્વાસબાગ, કાશીવિશ્વેશ્વર મહાદેવજીનું મંદિર, બગીખાનું, ચિમનબાગ, સેન્ટ્રલ જેલ, વિવિધ કચેરીઓ, રાવપુરા વગેરે સ્થળોનો પરિચય મળે છે. એ વખતે મામાને લઈ લેખકનું હોટેલમાં જવું ને એ વખતનો લેખકનો દૃષ્ટિકોણ જોવો રસપ્રદ છે : દા. ત. ''લહેરીપુરાના દરવાજાની બહાર ન્હાની બે ત્રણ ભપકાદાર હોટેલો છે. એમાંથી એક હોટેલમાં હું મામાને લઈ ગયો..... ચા, ચેવડો, ભજિયાં પૂરી વગેરે મરજી મુજબ ઉડાવીને સૌ ચાલ્યા જાય. આ બધું મામા તો ઊભા ઊભા જોયા જ કરે. ગામડાના લોકોને આ બધું નવાઈભરેલું જ લાગે, તેથી કેટલાક તો શોખ મારવા આવે જે શહેરમાં આવીને જાણે સ્વર્ગનું સુખ ભોગવતા હોય એવો આનંદ માને.......કેટલાક લોકો તો એવા હોય છે કે આખો દિવસ મજૂરી કરવા છતાં બે-ત્રણ ચાના પ્યાલા અને થોડીક બિસ્કીટથી ચલાવી લે છે. આથી તેમનું શરીર જલદીથી ઘસાઈ જાય છે ને આવરદા ટૂંકી થાય છે. નાનાં નાનાં છોકરાં પણ ભાઈબંધ દોસ્તારો સાથે હોટેલોમાં આવે છે ને જીભડીને વશ થઈ ચોરીઓ કરતાં શીખે છે.'' (પૃ. ૨૫) લેખક કહે છે કેટલાંક મૂર્ખ મા-બાપો તો પોતાનાં બાળકોને પણ હોટેલમાં લઈ આવે છે ને ચા પીવાની તથા હોટેલનું ખાવાની ટેવ પાડે છે. પોતે હોટેલમાં રંગઢંગ ને ભ્રષ્ટાચાર જોઈને કંઈ પણ લીધા વગર બહાર નીકળી ગયા.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ન્યાયમંદિર આગળથી મદનઝાંપે થઈ બેઠકની વાત કરતા લેખક ઉલ્લેખ કરે છે કે બેઠક આગળ મોરબી અને વાંકાનેર નાટકશાળાઓ છે. ખંડેરાવનું મંદિર અને એ કેવી રીતે બંધાયું એની વિગતો, બગીખાના વગેરે સ્થળો મામાને હેરત પમાડે છે તેથી જ લેખક કહે છે કે મામાને શહેર સારું લાગ્યું હોય એમ જણાયું. તે બોલ્યા ''શહેરની તો બલિહારીસ્તો ભાણાભાઈ, નગરે વસંતા દેવતા એમ કહેવાય છે તે ખરી વાત છે''. એ વખતે પોતે જોયેલ 'સતી અનસૂયા'નો ખેલ ને નાટ્યગૃહની જોયેલી ભપકાદાર વસ્તુઓનું વર્ણન પણ વાંચવું ગમે છે.

૬ઠ્ઠા પ્રકરણમાં કોટ બહારની વધુ વિગતો જોવા મળે છે. જેમાં સ્વામિનારાયણ મંદિર, બરાનપુરા, મીયાં મહંમદની વાડી, મહંમદ તળાવ, કંસારા પોળ, વાયડા પોળ, જૂનું તોપખાનું, રંગમહેલ ને રસ્તામાં ભાટવાડો, દાળિયાપોળ, ડભોઈયા પોળ, વચલી પોળ, છેલ્લી પોળોનાં નામ આશ્ચર્ય પમાડે છે. આપણા ગુજરાતના મહાકવિ પ્રેમાનંદ કવિની પોળનો પણ અહીં ઉલ્લેખ છે. રંગમહેલથી દક્ષિણે ગોપાળરાવ મૈરાળની હવેલી, તેમનું ગણપતિ મંદિર, સરદાર રાજે પાંઢરેનો વાડો ને ગોમતીતળાવની વિગતો આપેલી છે તે બધું જોઈ ઘરે આવ્યા. મામા મહેમાન હોવાથી આજે ઘરમાં બાસુંદી બનાવી છે. બપોરે જમી આરામ કરી ફરી શહેર જોવા નીકળે છે જેમાં કમાટીબાગ, જ્યુબીલીબાગ, વિવિધ પોળ, ટાવર, નાગરવાડા, સીયાપુરા, બાબાજીપુરા, ભૂતડીઝાંપા, હુજરાત પાગા, નૃસિંહાચાર્યનું મંદિર, વિવિધ અમલદારોના બંગલા, વિવિધ મંદિરો, બાગ બગીચાનો પરિચય મળે છે. રાવજી આપાજીએ રાવપરું ને બાબાજી આપાજીએ બાબાજીપરું વસાવ્યાની વિગતો અહીં છે. બાબાજી આપાજી ગાયકવાડ સરકારના દીવાન હતા ને એમની કાઠિયાવાડમાં બહુ ધાક હતી. એ સમયમાં એમની પોતાની એક બકરીને ચાંદીની ખરીઓ ને શીંગડીઓ કરાવીને છોડી મૂકેલી. પણ કોઈ એ બકરીને હાથ ન અડકાડી શકે એટલો એમનો દાબ હતો. એના ઉપરથી કહેવત પડી કે ''બાબા તારી બકરી કોઈ ન પકડે કાન''.

આગળ શિયાપરું, શાળા, ચિત્તેખાન મારુતી, નવાબ સાહેબની હવેલી, આંબેગાંવકરનો વાડો ને મોટી પોસ્ટ ઓફિસ જુવે છે. ચિત્તેખાન મારુતી આગળ પહેલા પાળેલા વાઘ બંધાતા હતા. તેથી એ સ્થળનું નામ આવું પડ્યું છે. આ ઉપરાંત હોસ્પિટલ, જેલ, જેલનું વિગતવાર વર્ણન, ખાખી બાવાનું મંદિર, કોલેજ, હાઇસ્કૂલનાં ભવ્ય મકાનો, ભીમનાથનું દેવાલય, જેવાં સ્થળોની વિગતો છે. મોટા સ્ટેશનેથી દક્ષિણે જેતલપરું છે. કમાટીબાગ, એમાંનું મ્યૂઝિયમ વગેરેની વિસ્તૃત ચર્ચા જોવા મળે છે. પ્રકરણ ૭માં જોવાલાયક જગ્યાઓ અંતર્ગત મુખ્ય મુખ્ય જગ્યાઓનાં નામ આપીને રાજમહેલ જોયાનું વર્ણન કર્યું છે. નજરબાગ અને એની વિવિધ વસ્તુઓનું વર્ણન પણ સુંદર ઢબે કર્યું છે.

આ ઉપરાંત મકરપુરા ને રસ્તામાં જુદાં જુદાં જોયેલાં મંદિરો, અખાડો, સ્મશાન, રામનાથ તળાવ, મહેલ વગેરે જોયાનું વર્ણન મળે છે. પ્રકરણ ૮માં શહેરની અન્ય જોવાલાયક જગ્યાઓ શ્રી સયાજી સરોવર અને હાથીખાનું મામાને બતાવ્યાનું વર્ણન છે. લેખક વિગતોમાં એવી રીતે લઈ જાય છે કે દરેક દશ્ય નજર સાથે તરી આવે દા. ત. આ પ્રકરણનો આરંભ જુઓ-રાત્રે જમતાં જમતાં મામાએ શંકા કરી કે, ઘરમાં આ ચકલી ફેરવીએ છીએ ને તરત ભગભગ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

પાણી નીકળે છે તે ક્યાંથી આવતું હશે ? બાપાજીએ કહ્યું અહીંથી પૂર્વ દિશાએ દશ માઈલ દૂર આજવા ગામ છે. ત્યાં શ્રીમંત મહારાજા સાહેબે સયાજી સરોવર નામે એક મોટું સાગર જેવું તળાવ બંધાવેલું છે, તેમાંથી એ પાણી આવે છે. પછી બાપાજીએ મને કહ્યું, ''ભાઈ કાલે તમારા મામાને આજવાનું તળાવ બતાવી આવજો. આજવા વહેલી સવારે પહોંચ્યા ત્યારનું વર્ણન પણ આહ્લાદક છે. જેમ કે – ભોં ભોં કરતી મોટર ઝપાટાબંધ ચાલી જે સાત વાગ્યાની અંદર આજવે આવી પહોંચી. આ વખતે પૂર્વ તરફ આકાશ લાલ થઈ ગયું હતું અને ધગધગતા લોઢાના મોટા ગોળા જેવો સૂર્ય જમીનમાંથી ડોકું કાઢી બહાર આવતો હતો. ઉગતા સૂર્યનાં સોનેરી કિરણો પડવાથી આખું તળાવ જાણે વાંકાચૂંકાં તાંબાનાં પતરાથી મઢી લીધું હોય એવું દેખાતું હતું. પાણીની ઉછળતી લહેરીઓમાં જાણે સેંકડો સૂર્ય ઝોલા ખાતા હોય એમ લાગતું હતું.''

લેખક પ્રવાસવર્ણન કરે છે. એ માત્ર દસ્તાવેજી વિગતો બની ન જાય એની પૂરી કાળજી રાખી છે. વિવિધ વિસ્તારો, પરા ને ફત્તેપુરાને છેડે આવેલું હાથીખાનું, તુલસીવાડી વગેરે વિગતો અહીં રસ પડે એ રીતે નિરૂપાઈ છે.

૯મા પ્રકરણમાં દશેરાની સવારી જોઈ એની વિગતો છે. બીજે દિવસે દરબારહોલમાં જોયેલ મુજરો, તાંજેરી નાચ અને દરબાર હોલનો શણગાર જોઈને સ્વર્ગમાં હોવાની અનુભૂતિ થાય છે ત્યાર પછી મામાને અગડમાં સાઠમારી જોવા લઈ ગયા જેમાં બંદૂક ફોડવી, તીર મારવું, બવાટી ફેરવવી, પોપટના ખેલ, કૂકડાની ને ઘેટાની ટક્કરો, અંગકસરતના ખેલ, મલ્લકુસ્તી ને પાડાની ટક્કરો જોઈ. હાથીઓની ને ઘોડાની સાઠમારી પણ જોઈ. અંતે સાઠમારી જોઈને ઘરે આવ્યા. મામાને આખું વડોદરા બતાવ્યું. એની ટૂંકી વિગતો પછી ડાકોર ગયા, ત્યાં ત્રણ દિવસ રહ્યા ને ત્યાંથી મામા પોતાને ગામ ગયા ને લેખક ઘરે આવ્યા. અંતમાં લેખક લખે છે કે મામીને તથા ભાઈઓને લીધા વગર એ એકલા આવ્યા હતા તેથી મેં તથા બાપજીએ એમને ખૂબ ઠપકો આપ્યો તેથી ફરીથી બધાને લઈને આવવાનું તેમણે વચન આપ્યું છે.

અહીં પ્રવાસવર્ણનની વિગતો સાથે સાથે કુટુંબભાવના તથા સંબંધોનું ગૌરવ એ સમયમાં કેવું જળવાતું એ જોવા મળે છે. મામાની સાથે વિતાવેલો સમય ને મામાને સ્થળો બતાવવાનો ઉત્સાહ વાક્યે વાક્યે જોવા મળે છે. દા. ત. નવરાત્રીમાં સિંધવાઈ માતાનો મોટો મેળો ભરાય છે તેમાં પણ હું મામાને લઈ ગયો હતો. આવા મેળા ગામડામાં ક્યાંથી ભરાય કે તેમણે જોવામાં આવે ? (પૃ. ૫૮); આજે મંગળવાર હોવાથી મંગળભોજનને માટે બાસુંદી મંગાવી હતી. ગામડાના લોકોએ બાસુંદી બાગ્યે જ જોઈ હોય છે. મામા તો બાસુંદીમાં પૂરીઓ ચોળીને ખાવા લાગ્યા તેથી મને જરા હસવું આવ્યું. હું ક્હેવા જતો કે, મામા, એમ ન ખવાય; પણ બાપજીએ આંખ દેખાડી એટલે નીચું જોઈને ખાવા મંડી પડ્યો.(પૃ. ૩૦)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

પ્રવાસવર્ણન છે એટલે પ્રવાસના શોખીન વાચકોને વિગતોમાં રસ પડે તે સ્વાભાવિક છે. લખાવટની શૈલી એટલી સરળ અને પ્રવાહી છે કે સામાન્ય વાચકથી માંડી નાના-મોટા સૌને પુસ્તકની વિગતો વારંવાર વાંચવી ગમશે. જૂના સમયમાં વડોદરાની કેવી રોનક હતી, હાથીઓના કેવા ખેલ થતા ને દરવાજે કેવા ગેંડા બંધાતા એની વિગતો આનંદદાયક બની રહે છે. એકી બેઠકે વાચી શકાય તેવું આ પુસ્તક શ્રી સયાજી બાલજ્ઞાનમાળામાં છપાયું હોય, બાળકોની સાથે સાથે ઇતિહાસ જેવા વિષય પર સંશોધન કરનાર અભ્યાસીઓ માટે એમાંની ઘણી વિગતો કડીરૂપ બની રહે તેમ છે. વડોદરા પ્રત્યે જાણવા માગતા પ્રત્યેક વ્યક્તિએ ''વડોદરાનો વૈભવ'' પુસ્તક જોવું રહ્યું.

જે. કે. ઉમરેઠિયા

ગુજરાતી બાળસાહિત્ય વિમર્શ, - સંપાદક : ડૉ. શ્વેતા પ્રજાપતિ, શ્રી જે. કે. ઉમરેઠિયા, પ્રકાશક : યુનિવર્સિટી પુસ્તક વેચાણ વિભાગ, મહારાજા સયાજીરાવ યુનિવર્સિટી ઓફ બરોડા, વડોદરા, પ્રથમ આવૃત્તિ ૨૦૧૬, પૃ. ૧૪૯, મૂલ્ય : રૂા. ૨૦૦/-

સમૃદ્ધ ગુજરાતી સાહિત્યમાં આપણા બાળસાહિત્યકારોએ આપેલું મૂલ્યવાન પ્રદાન ઉલ્લેખનીય છે. પરંતુ વર્તમાનમાં એ માટે પુનર્વિચાર આવશ્યક છે. એક તરફ અન્ય સાહિત્યરૂપોમાં સતત સર્જાતું સાહિત્ય અને તેની બીજી તરફ બાળસાહિત્યના સર્જન પ્રતિ આપણી ઉદાસીનતા બાળસાહિત્યના ભાવીના હિતમાં નથી. તદ્ઉપરાંત આ ઉદાસીનતાનો વ્યાપ વધીને હવે ઉચ્ચશિક્ષણમાં પણ ઉપેક્ષા સુધી વિસ્તર્યો છે. આપણા આવા વર્તમાનમાં પ્રાચ્યવિદ્યામંદિર, મહારાજા સયાજીરાવ યુનિવર્સિટીએ યોજેલો ભારતીય ભાષાઓમાં બાળસાહિત્ય વિષયક રાષ્ટ્રીય કક્ષાનો પરિસંવાદ ગુજરાતી બાળસાહિત્યના ઉત્કર્ષ માટે સ્તુત્ય, આવકાર્ય અને અનુકરણીય રહ્યો. આ પરિસંવાદમાં વિષયતજ્જ્ઞોએ બાળસાહિત્ય વિશે જે વિચારવિમર્શ કર્યો એ વિશેનાં વક્તવ્યોના લેખસંગ્રહનું સંપાદન થયું એ બાળસાહિત્યના હિતમાં મહત્ત્વનું ઉમેરણ બની રહેશે.

'ગુજરાતી બાળસાહિત્ય વિમર્શ' પુસ્તક લેખોનું, સાહિત્યિક ગુણવત્તા ધરાવતું સંપાદન છે. ડૉ. શ્વેતા પ્રજાપતિ અને શ્રી જે. કે. ઉમરેઠિયાસંપાદિત આ દસ્તાવેજી ગ્રંથમાં ૧૫ લેખનો સમાવેશ છે. એમાં સ્વરૂપલક્ષી, કૃતિલક્ષી ચર્ચા,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ચિંતન અને અભ્યાસપૂર્ણ બાળસાહિત્ય માટેની સમૃદ્ધ ઉપલબ્ધિઓનો નિર્દેશ છે. આ સંપાદનમાં બાળસાહિત્યનો ઐતિહાસિક વિકાસનો આલેખ, વિવિધ દષ્ટિકોણથી બાળસાહિત્યનાં મૂલ્યાંકનનો અભિગમ અને પ્રશિષ્ટ બાળસાહિત્યની પારિતોષિક વિજેતા કૃતિઓના અભ્યાસલેખનું સમૃદ્ધ વૈવિધ્ય ગુજરાતી બાળસાહિત્યવિમર્શની વિશેષતા છે.

આ ગ્રંથના ઉઘડતા પાને જ લબ્ધપ્રતિષ્ઠિત બાળસાહિત્યકાર ડૉ. શ્રદ્ધા ત્રિવેદીએ વાચનમાળાથી કેળવણીની ભૂમિકા, નવી શક્યતા/દિશામાં ઉઘાડ સાથે ગુજરાતી બાળવાર્તા વિશે ઉલ્લેખ કરી બાળવાર્તા સર્જનમાં વાર્તાશાસ્ત્ર, દક્ષિણામૂર્તિનું બાળસાહિત્યમાં પ્રદાન અને બાળભોગ્યતા માટે સૂઝ ખોલી આપવા માટે ગિજુભાઈ બધેકાનો તબક્કાવાર (Mile Stone) સીમાચિહ્ન તરીકે ઉલ્લેખ કર્યો છે. બાળસાહિત્યની તબક્કાવાર વિકાસરેખા દર્શાવતાં તેમણે જીવનવ્યવહારજ્ઞાન અને દર્શન, રસ, રમૂજ માટે બકોર પટેલની રસાળકથા, ગાંડીવ, બાળજીવન, બાળવિનોદ જેવી ચારેક સંસ્થાઓ, ઊંચા ગજાનાં બાળ સાહિત્યકારોની કલમે સત્ત્વશીલ સાહિત્ય સર્જન, બાળવાર્તામાં શેખચલ્લી જેવાં રમૂજી પાત્રો, જયભિખ્ખુનું જીવન ઘડતરલક્ષી બાળસાહિત્ય, મેઘાણીની બાળવાર્તાઓ સહિત વિવિધ દિશાઓમાં બાળસાહિત્યના વિકાસના પ્રભાવે ડૉ. શ્રદ્ધા ત્રિવેદીએ ચોથા પાંચમા દાયકાને બાળસાહિત્યનો સુવર્ણકાળ ગણાવ્યો છે. બાળસાહિત્ય બાળકોને પ્રિય બને એ હેતુથી વિજ્ઞાન આદિ વિષયનું વૈવિધ્ય, પાત્રનિર્માણ કરતી વાર્તાઓ, મૌલિક કથાઓ, વાર્તાવરણ અને બાળચિત્રકથામાં રમણલાલ સોની, જીવરામ જોશી, મૂળજીભાઈ ભટ્ટની બાળકિશોરકથાઓ માટે પણ ચોથો-પાંચમો દાયકો મહત્ત્વની ભૂમિકા સર્જે છે. ૧૯૬૦ અને તે પછી ૧૯૮૦ના ગાળામાં લખાયેલાં બાળનાટકોની લેખન, દિગ્દર્શન, અભિનય અને મંચન વિશેની સદષ્ટાંત ચર્ચા સાથે કેટલાંક બાળચરિત્રોને પણ ઉલ્લેખનીય ગણાવ્યાં છે. આ ગાળામાં અને છેક ૨૦૧૪ સુધીનાં બાળકાવ્યોમાં નવીન વિષયો, અભિવ્યક્તિની નૂતનતા, નવા લય-લહેંકા અને સર્જકતા માટે રક્ષા દવે, રમેશ ત્રિવેદી, વિરંચિ ત્રિવેદી અને કીર્તિદા બ્રહ્મભટ્ટનો ઉલેલેખ કર્યો છે.

આમ ડૉ. શ્રદ્ધા ત્રિવેદીએ વિભાગવાર બાળસાહિત્યની ગતિવિધિ અને તેમાં ધ્યાન ખેંચે તેવા વિકાસ નિમિત્તે, કૃતિ, કર્તા, સત્ત્વશીલ સર્જન, પ્રત્યેક દાયકામાં ઉપસતી બાળસાહિત્યની છબી, બાળસામયિકો, સંસ્થાઓ, પ્રવૃત્તિઓ ઉપરાંત ચિલ્ડ્રન યુનિવર્સિટી, બાળસાહિત્ય અકાદમી, બાળ વિશ્વકોશ, જેવાં બાળસાહિત્યને સ્પર્શતાં વિવિધ પાસાંઓને આવરી લઈ સમગ્ર ગુજરાતી બાળસાહિત્ય પર પ્રકાશ પાડતો, મહત્ત્વના બધા જ મુદ્દાઓને સ્પષ્ટ કરતો, મહત્ત્વપૂર્ણ દસ્તાવેજી લેખ આપ્યો છે.

સર્વાંગ બાળવિકાસ માટે રમીલાબહેન નાયકે કહ્યું છે કે નવજાત અવસ્થામાં બાલ્યાવસ્થાના પ્રત્યેક તબક્કાઓએ બાળસાહિત્યને પૂરક/પોષક સાબિત કર્યું છે. ગર્ભસ્થ શિશુના સંસ્કારસિંચનમાં ધર્મ ગ્રંથોનાં વાચન, પ્રેરક બાળગીતોનો ફાળો મહત્ત્વનો છે. ત્યાર પછી ક્રમિક વિકાસમાં લય માધુર્ય અને બાળકલ્પના જગાવતાં હાલરડાં, બાળમાનસમાં બુદ્ધિ અને ગુંજનક્ષમતા માટે જોડકણાં અને ઉખાણાં, બાળભાષા માટે રમતો અને રમકડાંનાં ગીતો, જ્ઞાન-માહિતી માટે ઋતુ, પશુ, પંખી, ઉત્સવ ગીતો, પરિવાર અને સંસ્કાર-સંસ્કૃતિનાં ગીતો ધરાવતું બાળસાહિત્ય આપણી મૂલ્યવાન સમૃદ્ધિનો

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ખજાનો છે. આધુનિક ઉપકરણોના આક્રમણની સામે પડકાર, ટક્કર, સાથે સંસ્કારબોધ આપતું આપણું બાળસાહિત્ય ઉત્તમ અસરકારક છે.

જીવન ઘડતર સંદર્ભે રેખાબહેન ભટ્ટે બાળવાર્તાને કેન્દ્રમાં રાખીને અને યાહ્યા સપાટવાલાએ બાળગીતોને આધારે સદષ્ટાંત ચર્ચા કરી છે. પંચતંત્ર, ઈસપની વાર્તાને ભવ્ય વારસો ગણાવી રેખાબહેને સંસારદર્શન અને જીવન વ્યવહારજ્ઞાન માટે બકોર પટેલની કથાઓ, પાત્રસૃષ્ટિ અને હાસ્યનિષ્પત્તિ માટે 'તારક મહેતાના ઉલ્ટા ચશ્મા'ને તપાસી બાળ-કિશોરો માટેની ઉપલબ્ધિઓ દર્શાવી છે. યાહ્યા સપાટવાલાએ કુતૂહલપ્રેરક પશુ-પંખીની ચેષ્ટાઓ, મૂલ્યશિક્ષણ, અને જ્ઞાન સાથે ગમ્મત આપતા બાળસાહિત્ય અંતર્ગત હાલરડાની શિશુકાવ્ય તરીકે મહત્ત્વની ભૂમિકા સ્પષ્ટ કરી છે.

દિલીપકુમાર ધોરિયા સર્જાતા બાળસાહિત્ય માટે કેટલીક સ્વરૂપલક્ષણની દૃષ્ટિએ, ઉત્તમ બાળઘડતરના સંદર્ભે અપેક્ષાઓ, સૂચનો અને તકેદારીઓ આપે છે. માત્ર ને માત્ર મઝા પડે, એવી આનંદની સૃષ્ટિ બાળવિશ્વની વિશેષતા હોવાથી એમાં વિષય, ભાવ, રસ, યાત્રાપ્રસંગ, ભાષા, અને દશ્યના નિરૂપણમાં બાળકની વય/રુચિને પ્રેરક/પોષક તેમજ, ઉપકારક ના હોય તેવા કેટલાક નિષેધ જણાવ્યા છે. બાળક કુદરત અને ભાષામાં રસ લેતો થાય તેવા બાળસાહિત્યની અપેક્ષા રાખી, ચિત્રવાર્તા અને ચિત્રાત્મકતાને આવકાર્ય લેખી છે.

બાળનાટકની સ્થિતિ, વ્યાપ, વિકાસને લક્ષમાં રાખી, દિગીશ વ્યાસે ગુજરાતી બાળનાટકના વિકાસ અને ચિંતા/ચિંતન સહિત ગુજરાતી બાળનાટકોના ઉજ્જવળ ભવિષ્ય વિશે ચર્ચા કરી છે. નાટ્યલેખન, દિગ્દર્શન અને અભિનય સમયે તેમણે નાટકનો હેતુ, ઉદ્દેશ, અપેક્ષા, વિષયનિરૂપણ, કથાતત્ત્વ, ગદ્ય, પદ્ય, ભાવ, રસ, પાત્ર, પ્રસંગમાં ઔચિત્ય, દશ્યનિર્માણ, આનંદતત્ત્વની માવજત અને વિવેકને ધ્યાનમાં રાખી તેમણે ગુજરાતી બાળનાટકની દિશા ચીંધી છે. લેખકે પોતાના મતના સમર્થનમાં પૂર્તતા, સ્પષ્ટતા માટે દષ્ટાંત પણ આપ્યાં છે.

ધો. ૬ થી ૮ના અભ્યાસક્રમમાં બાળસાહિત્યની કૃતિઓ વિશે વાત કરવાના જિજ્ઞા રાણાએ બાળવય, રસરુચિ, સમયાવધિ, વૈવિધ્ય, લક્ષ્યાંકો, ઉદ્દેશ્યો, ભાષાનાં કૌશલ્યો, ભાષાશિક્ષણ, કૃતિની ગુણવત્તા, પદાર્થપાઠ, ગદ્ય/પદ્ય, વ્યાકરણ. મૂલ્યસ્થાપન અને બાળઘડતર તેમજ વિકાસને ધ્યાનમાં લઈ કરેલાં સૂચનો બાળકના હિતમાં છે. તેમાં પણ પાઠ્યસામગ્રી અને પાઠ્યપુસ્તક માટેનો પરીક્ષાલક્ષી અભિગમ ઉપરાંત જીવનલક્ષી હોય એ સૂચન સર્વથા હિતકારી છે.

આ ગ્રંથમાં બાળવાર્તા વિશેના કેટલાક મુદ્દાઓની પણ રસપ્રદ ચર્ચા છે. પંચતંત્રને નજર સમક્ષ રાખી કૌશી ચાવડાએ બાળવાર્તામાં બાળભોગ્યતા, કથાનક વાર્તાની શૈલી, વાર્તાવિશ્વ અને જીવનબોધ જેવાં વિવિધ અંગોની સમજ આપી છે. જુદાં જુદાં પાંચ તંત્ર, એમાં આવતો મુખ્ય કથાતંતુ, એને રસપ્રદ બનાવતી આડકથાઓ, પશુપંખી દ્વારા માનવસ્વભાવ દર્શન અને જીવનનું ડહાપણ, સદષ્ટાંત કથાઓ, બાળકોને આજપર્યંત પ્રિય હોવાનું જણાવ્યું છે. આ કથાઓની બાળમોજ રંજકતા, બોધપ્રદ, પ્રેરક, ગુણદર્શી, પૂરક/પ્રેરક સુભાષિતો, જીવન વ્યવહાર, રાજનીતિ, પશુપંખીની બાળકોને મનગમતી સૃષ્ટિ જેવી વિશેષતાઓની નોંધ લીધી છે.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

અર્ચના પંડ્યા બાળવાર્તા અને બાળકથાઓને અલગ અભિગમથી જુએ છે. તેમણું એ વિધાન યથાર્થ સાચું છે કે બાળસાહિત્યના સર્જકો હંમેશા કોઈને કોઈ પદ્ધતિથી ભાવી પેઢી ઘડવાનું ધ્યેય પાર પાડે છે. એ સાથે સર્જક જ્ઞાન સાથે ગમ્મત, હળવાશ, જાળવીને બાળકની સૂઝના વિકાસને પણ ધ્યાનમાં રાખે છે. એમ પણ કહેવું જોઈએ કે આ રીતે સર્જક ભાર વિનાના ભણતરનો હેતુ પણ સિદ્ધ કરે છે. વ્યક્તિત્વ વિકાસ અને જીવનઘડતર માટેના સદ્‌ગુણોનું ભાથું પણ બાળકથાઓ અને વાર્તાઓ બાંધી આપે છે. આ સત્ય તેમણે સુંદરમ્‌ની બાળકથાઓના આધારે સૂચવ્યું છે. વ્યક્તિઓનો સમૂહ જ સમાજ રચે છે. એ સિદ્ધાંતે વ્યક્તિ દ્વારા મજબૂત સમાજ ઘડવાનું, બાળસાહિત્ય પાયાનું કામ કરે છે.

કોશા આચાર્યએ સુંદરમ્‌ના 'રંગરંગ વાદળિયા'ની કાવ્યસૃષ્ટિને નવરંગી કહી છે. ૬૩ કાવ્યોનું શિશુકાવ્ય, બાળકાવ્ય અને કિશોરકાવ્યના ત્રણ વિભાગોમાં વર્ગીકરણ કર્યું છે. લેખિકા વર્ગવાર કાવ્યોની વિશેષતાઓ દર્શાવે છે. પ્રથમ વિભાગમાં શબ્દચિત્રો, રવાનુકારી શબ્દો, લય દર્શાવતાં આવર્તનો, તેથી અનુભવાતું સંગીત, સમુચ્ચારી તેમજ ક્રિયા અને ક્રિડાસૂચક શબ્દોની સરળ પદ્ધતિનાં કાવ્યો શિશુવયને સ્પર્શે તેવાં, તેમની રસ, રુચિ, ક્ષમતા અને સમજને અનુરૂપ કહ્યાં છે. બાળકાવ્યો શિશુવયનાં કાવ્યોથી સહેજ ઉચ્ચસ્તરીય લાગશે. તેમાં બાળભોગ્ય વિષયોની અભિવ્યક્તિ, પ્રાસ, ગેયતા અને ગમ્મતની વિશેષતા, ઉપરાંત એ કાવ્યોમાં કલ્પના, પ્રકૃતિની રમણીયતા ઉલ્લાસ પ્રેરિત મનોભાવને ખીલવે છે. જ્યારે કિશોરકાવ્યો વય અનુસાર અનુભવો, દૃષ્ટાંત, કથાતત્ત્વ, ગુણપ્રેરક વિષયવસ્તુ, દૃશ્યાંકનો, સમજ કેળવાયા પછીની કાર્યશીલતા, તર્કપ્રેરક, જેવી વિશેષતાઓ સાથે નિરૂપણમાં પણ તે શિશુકાવ્યો અને બાળકાવ્યોથી અલગ અનુભવાય છે.

નિવ્યા પટેલે મેઘાણીનાં બાળકાવ્યોને નારીબોધની દૃષ્ટિએ જોયાં છે. 'શિવાજીનું હાલરડું', 'તલવારનો વારસદાર', 'ચારણકન્યા', 'માની યાદ,' અને 'કજિયાળો'ને તેમણે અનુક્રમે હાલરડાં દ્વારા બાળઉછેર અને સંસ્કાર સિંચન, શૂરવીરતાનો મહિમા, માતૃસ્મરણ અને બાળસંવેદન પ્રેરક બાળકાવ્યો ગણાવ્યાં છે. લેખિકાએ કાવ્યોને ભાવપોષક ભાષા, લોકલય,, બોલીથી અનુભવાતા પોતીકાપણાની વિશેષતા ધરાવતાં બાળકાવ્યો તરીકે પ્રમાણિત કર્યાં છે.

મૌલિકા પટેલે રમૂજપ્રેરક પાત્રો, મનોરંજક પાત્રો, વિશિષ્ટ પ્રકારનાં નામનિર્દેશ, નીતિબોધ, સદ્‌ગુણ અને જીવનમૂલ્યો, ભેરુનો ભાવ પ્રગટાવતી બાળભાષા, અને બાળવિશ્વમાં રસમય જીવન જીવતાં બાળકોની સાથે નિડરતાનો અનુભવ કરાવતી રમણલાલ સોનીની વાર્તાસૃષ્ટિની વિશેષતાઓ દર્શાવી કથાનકના ગદ્ય-પદ્યમાં ઝરણાં, 'લાડુની યાત્રામાં નિષ્પન્ન થતું હાસ્ય ધ્યાનાર્હ દર્શાવ્યું છે. લેખિકાએ ગાયનો ગોલો, ગીધ અને વાંદરા, ગલબો શિયાળ, ભગવાનના ટીંબાનો કજિયો, ગલબો વહુની જીભ ટીપાવે છે, પકડકાન, કંજૂસકાકા, જેવી મૂલ્યબોધદર્શી, રમૂજપ્રેરક કથાનક અને મનોરંજનપ્રેરક વાર્તાઓને આધારે રમણલાલ સોનીનું બાળવાર્તાક્ષેત્રે મૂલ્યવાન પ્રદાન ગણાવ્યું છે.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

વર્ષા પ્રજાપતિએ રમેશ પારેખનાં બાળકાવ્યોનું મૂલ્યાંકન કર્યું છે. રમેશ પારેખની બાળકાવ્યસૃષ્ટિને સાત વિભાગોમાં વિભાજિત કરી, તેમાં પશુ/પંખી જગત, ફળ પરિચય, જ્ઞાનગમ્મત અને બાળમનોવૃત્તિના વિષયો પર આધારિત તેમની બાળકવિતાને દર્શાવી છે. એમનાં કાવ્યોમાં બાળકની દલીલમાં તર્ક દૃષ્ટાંત, બાળકની વૃત્તિનું સ્પષ્ટદર્શન, બાળકના ઊર્મિલ મનને ખોલવામાં પશુ/પંખીની ચેષ્ટાનો ફાળો, રવાનુકારી શબ્દોની ગૂંથણીથી ભાવપોષક સુરેખ દૃશ્યાંકન, અનુરણન અને રવાનુકારિતા દ્વારા લય, ગેયતા, હાસ્ય, મનોરંજન, જ્ઞાન-વિજ્ઞાન ગમ્મત, બાળમનોભાવને ખીલવે છે.

હિના દેસાઈએ અરૂણિકા દરૂની પાંચ બાળવાર્તાને આધારે બાળસાહિત્યની આવશ્યકતા અને મહત્તા દર્શાવી છે. અટકચાળાનું પરિણામ, માફ કરવાની મઝા, અને ગધેડાની પૂંછમાંથી તારણ રૂપે મનોરંજન અને ઘડતરનો નિર્દેશ લેખિકાએ કર્યો છે. બિલ્લી વાઘ તણી માસી અને વરદાન વાર્તાને આધારે જિજ્ઞાસાવૃત્તિ અને તર્કશક્તિનો વિકાસ નોંધ્યો છે. તદ્દુપરાંત 'બિલ્લી વાઘ તણી માસી' બાળમનોરંજન તેમજ વાણીનું વરદાન વાર્તામાં પક્ષીની બોલી બાળવિસ્મય માટે પ્રેરક બની રહે છે. સાર્થક જોડકણાંવાળી વાર્તાની રચનારીતિ પણ ધ્યાનાર્હ છે. વાર્તાઓની રચનાશૈલી અને વિષયનું નાવીન્ય પણ ઉલ્લેખનીય છે. કથાનકમાં ક્રિયાવેગ માટે જોડકણાં પણ ઉપકારક છે. હિના દેસાઈએ તાટસ્થ્ય જાળવી લેખને અંતે કેટલાંક સૂચનો પણ કર્યાં છે. લેખિકાએ વાર્તાનાં કલાતત્ત્વોને નજર સમક્ષ રાખી વાર્તાઓનું મૂલ્યાંકન કર્યું છે.

જયંત ઉમરેઠિયાએ 'શૈશવના ઉપવનમાં' ને સર્જકની પ્રતિબદ્ધતાના સફળ પ્રયોગ રૂપે ઓળખાવ્યો છે. સંગ્રહનાં ગીતોમાં લય, વૈવિધ્ય, રજૂઆત સાથે કવિએ બાળકોની સુષુપ્ત લાગણીઓને વિકસાવવાનું કામ કર્યું છે. બાળકની અપેક્ષાએ શાળાનું વાતાવરણ, શિક્ષણપદ્ધતિ, કેળવણીક્ષેત્રે સૂચિત સુધારા એમનાં કાવ્યોમાં સહજ ગૂંથાઈને આવે છે. સર્જક વિરંચિ ત્રિવેદીએ આ સંગ્રહમાં મન ભરીને પ્રકૃતિનો મહિમા ગાયો છે. ઉત્સવગીતોમાં મોજમસ્તી છે તો સમયનું મૂલ્ય કુતૂહલ સાથે સંવાદ રચી બાળભોગ્ય બનાવે છે. કાવ્યોમાં જ્ઞાન ગમ્મત સાથે ગૂંથાઈને આવે છે. રવાનુકારી અને દ્વિરુક્ત શબ્દો પ્રયોજવાનું કવિનું કૌશલ ઉલ્લેખનીય છે. કાવ્યમાં નવા વિષયો, પરંપરાગત કાવ્યમાં આવતા વિષયોને નવી અભિવ્યક્તિથી રજૂ કરવામાં, વિષય અને ભાવવૈવિધ્યથી ભાવકને અનુભવ કરાવવાનું, સામર્થ્ય જોતાં 'શૈશવના ઉપવનમાં' બાળસાહિત્યમાં નવી આશાઓ જગાવે છે.

આમ ભારતીય ભાષાઓમાં બાળસાહિત્ય વિશેનાં વિવિધ પાસાંઓને શક્ય તેટલા પ્રયત્ને આવરી લેતા પરિસંવાદની ઉત્તમ ફલશ્રુતિરૂપે તૈયાર થયેલ આ ગ્રંથ, બાળસાહિત્યનો દૃષ્ટિવંત લેખસંચય છે.

વિરંચિ ત્રિવેદી

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सौंदर्यलहरी

(शंकराचार्यविरचिता)

(Text in Sanskrit with Translations in English, Hindi, Marathi and Gujarati with Multi-Colour Pictures)

Edited by
R. I. NANAVATI

Translation
English : HARISH ZAVERI
Hindi : RADHAVALLABH TRIPATHI
Marathi : SAROJA BHATE
Gujarati : R. I. NANAVATI

General Editor
M. L. WADEKAR

First Edition 2013

Price : Rs 1000

Copies available at :

The University Publications Unit
A. I. C. S. Building
Opp. C. C. Mehta Auditorium
Pratapgunj, Vadodara - 390002
Ph. No. 0265 2781700

The University Facilitation Centre
Below University Head Office
Fatehgunj
Vadodara - 390002
Ph. No. 0265 2795555

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्राच्यविद्यामन्दिर की वार्षिक गतिविधियाँ - २०१९-२०२०

वर्ष २०१९-२० के अन्तिम चरण में वैश्विक महामारी **कोरोना** अथवा **कोविड-१९** के कारण संस्था की गतिविधियाँ विशेष रूप से प्रभावित हुई । पचास दिन से भी अधिक समय तक संस्था के क्रिया कलाप ठप्प रहे । यद्यपि लॉक-डाउन के समय **वर्क फ्राम होम** के अन्तर्गत कुछ क्रियात्मकता रही तथा दि. १८ मई २०२० से नियमों मे शिथिलता के अन्तर्गत संस्था ने अंशकालिक रूप से कार्य करना आरम्भ किया । अब पिछले १ जून २०२० से यह पूर्ण रूप से कार्यरत है । फरवरी २०२० तक प्राच्यविद्यामन्दिर में शोध, प्रकाशन, व्याख्यान-आयोजन, हस्तप्रतिलिपि की प्रतिच्छाया सम्बन्धित आवेदनों की पूर्ति जैसी संस्था की स्वाभाविक व्यस्तता रही । सेमीनार/कार्यशाला आदि का आयोजन लॉक-डाउन के कारण नहीं हो सका क्योंकि उनका आयोजन फरवरी-मार्च में किया जाना था ।

अप्रेल २०१९ से २१ मार्च २०२० तक आयोजित गतिविधियाँ इस प्रकार रही -

पाण्डुलिपि-रक्षण एवं संरक्षण परियोजना

नेशनल मिशन फॉर मेन्युस्क्रिप्ट नई दिल्ली ने प्राच्य-विद्यामन्दिर, वडोदरा को **पाण्डुलिपि-रक्षण एवं संरक्षण परियोजना** के लिए गुजरात क्षेत्र का **संसाधन केन्द्र (रिसोर्स सेन्टर)** चुना है । संस्था में यह परियोजना दि. १.३.२०१९ को आरम्भ हुई । लम्बे समय तक चलने वाली इस परियोजना में अभी तक इसके अन्तर्गत ३०००० **पाण्डुलिपि**-पृष्ठों को धूल एवं अन्य क्षतियों से मुक्त कर उनका उपचार किया गया है ।

पाण्डुलिपि-विभाग (मेन्यूस्क्रिप्ट सेक्शन)

प्राच्यविद्यामन्दिर मूलतः पाण्डुलिपि-पुस्तकालय है । इसी कारण से समस्त विश्व के विद्वान यहाँ हस्तप्रत की प्रतिछाया लेने के लिए स्वयं आते है अथवा डाक (अब ई-मेल द्वारा) द्वारा उसको प्राप्त करते है । इस वर्ष हमने ९० पाण्डुलिपियों की प्रतिछाया ३० विद्वानों को उपलब्ध करायी ।

इस वर्ष संस्था को ३३ मूल पाण्डुलिपियाँ मुम्बई और बडोदरा के सुधिजनों से दान-स्वरूप में प्राप्त हुई हैं।

समीक्षित-आवृत्ति विभाग (क्रिटिकल-एडिशन विंग)

संशोधित-आवृत्ति विभाग कि स्थापना **वाल्मीकि-रामायण** की संशोधित आवृत्ति परियोजना हेतु की गयी थी । परवर्ती काल में इस विभाग ने **विष्णुपुराण** एवं **मार्कण्डेयपुराण** की भी संशोधित आवृत्तियाँ बना कर संस्था को और उज्जवल किया । इस समय यह विभाग **वायुपुराण** की संशोधित आवृत्ति तैयार करने में व्यस्त है जिसके

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अन्तर्गत **गयामाहात्म्य** का परितुलन/कोलेशन किया जा रहा है जहाँ चार पाण्डुलिपियों के एक से लेकर आठ अध्याय कोलेट किये जा चुके है । **वायुपुराण के एक से लेकर पैतालिस अध्याय की अन्विति तैयार हो चुकी है । एक से दस अध्यायों की प्रेस कापी की जाँच हो चुकी है । बासठवें अध्याय के संशोधित पाठ का टंकण कार्य हो चुका है ।**

मुद्रित - विभाग (लाइब्रेरी)

प्राच्यविद्यामन्दिर का मुद्रित ग्रन्थागार अनेक मूल्यवान पुस्तकों की प्रथमतम आवृत्ति के अधिकारी के रूप में विख्यात है । अनेकों भाषाओं में प्राच्य-साहित्य की पुस्तकों, भारतीय-विद्या (इन्डोलॉजी) की पत्रिकाओं के आकर्षण से अनेक विद्वान यहाँ दौडे चले आते हैं । हमारी संस्था द्वारा प्रकाशित पत्रिकाओं **जर्नल ऑफ ओरियेन्टल इंस्टीटयूट** (जे ओ आई) तथा **स्वाध्याय** के एवज में हमें १०८ पत्रिकायें निःशुल्क प्राप्त होती हैं । इस वर्ष हमें २८५ पत्रिकायें प्राप्त हुई हैं । २१९ नयी पुस्तकें हमारे पुस्तक-भंडार में सम्मिलित हुई हैं । बहुधा विद्वान-गण किसी पुस्तक-विशेष की डिजिटाइज कॉपी अथवा **गायकवाड ओरियेण्टल सीरीज** की पुस्तक की डिजिटाइज कॉपी या फिर हमारी पत्रिकाओं में छपे पुराने लेखों की प्रतिकृति की मॉग करते हैं तो उन्हें हम वह भी उपलब्ध कराते हैं । इस वर्ष हमने गायकवाड सीरीज की पॉच पुस्तकों की डिजिडल कॉपी, सयाजी साहित्यमाला का तीन पुस्तकों तथा जे ओ आई के तीन आलेखों की डिजिटल कॉपी विद्वानों को उपलब्ध करवायी हैं ।

संस्था के प्रकाशन

इस वर्ष **जर्नल ऑफ ओरियेन्टल इंस्टीटयूट** का **६८वॉ अंक** तथा **स्वाध्याय** का ५५वॉ अंक प्रकाशित किया गया हैं । दोनो पत्रिकाओं के अगले अंक प्रकाशाधीन है । गुजराती भाषा में **चरकनो स्वाध्याय, वडोदरा राज्यनो इतिहास** तथा संस्कृत में **संगीतमकरन्द, शक्तिसंगमतंत्र** (भाग तीन और चार) के पुनर्मुद्रण का कार्य चल रहा है ।

परिसंवाद तथा व्याख्यान

इस वर्ष संस्था में कुछ अतिविशेष संगोष्ठियों तथा व्याख्यानों का आयोजन किया गया -

१. दिनांक २८.८.२०१९ को प्रो. भगवतशरण शुक्ल, व्याकरण विभाग, बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय, वाराणसी, ने **संस्कृत अध्यापन की प्राचीन व आधुनिक पद्धतियों** पर एक व्याख्यान दिया । यह व्याख्यान **एकस्ट्रा म्युरल लेक्चर शृंखला** के अन्तर्गत आयोजित किया गया ।

२. दिनांक १८.११.२०१९ को संस्था में अमेरिका स्थित प्रवासी गुजराती कवि **श्री चन्द्रकान्त देसाई** के सम्मानार्थ एक संगोष्ठी का आयोजन किया गया । गुजरात साहित्य अकादेमी तथा प्राच्य-विद्यामन्दिर, वडोदरा द्वारा आयोजित इस कार्यक्रम की अध्यक्षता केन्द्रीय विश्वविद्यालय सागर (म.प्र) के कुलपति डॉ. बलवन्त जानी ने की।

३. दिनांक ३०.१२.२०१९ को महर्षि पाणिनि संस्कृत एवं वैदिक विश्वविद्यालय के पूर्व उप-कुलपति प्रो.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मिथिला प्रसाद त्रिपाठीजी ने **कालिदास के मेघदूत** पर दो व्याख्यान एकस्ट्रा म्युरल लेक्चर शृंखला के अन्तर्गत प्रस्तुत किये।

४. दिनांक ०१.०१.२०२० को **भारत-गौरव पंडित के. एस. रामास्वामी शास्त्री पुरस्कार** का भव्य शुभारम्भ शास्त्रीजी के परिवारजनों के द्वारा प्राच्य-विद्यामन्दिर में किया गया । इसके अन्तर्गत पहला पुरस्कार दो विख्यात विद्वानों - श्री लालबहादुर शास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, दिल्ली के प्रो. विष्णुपद महापात्र तथा श्री सोमनाथ संस्कृत विश्वविद्यालय, वैरावल के डॉ जानकीशरण आचार्य को प्रदान किया गया । कार्यक्रम के मुख्यातिथि साउथ गुजरात यूनिवर्सिटी के पूर्व उपकुलपति प्रो. आर. जी कोठारी व अध्यक्ष रूप में महर्षि पाणिनी संस्कृत एवं वैदिक विश्वविद्यालय के पूर्व उपकुलपति प्रो. मिथिला प्रसाद त्रिपाठीजी रहे । इस कार्यक्रम में पं. रामास्वामी शास्त्रीजी के परिवार के छः सदस्य भी उपस्थित रहे जो दुबई, मुम्बई और बेंगलुरु से आये थे ।

५. दिनांक २.१.२०२०को **एकस्ट्रा म्युरल लेक्चर शृंखला** के अन्तर्गत श्री लालबहादुर शास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, दिल्ली से पधारे प्रो.विष्णुपद महापात्र ने **न्याय-दर्शन का इतिहास** विषय पर रोचक व्याख्यान दिया ।

६. दिनांक १०.१.२०२० को राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन, दिल्ली तथा इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला-केन्द्र, वडोदरा क्षेत्र ने प्राच्यविद्यामन्दिर और फेमिली एण्ड कम्युनिटी साइन्स, म.स.वि.वि. के साथ मिल कर समवेत रूप से एक व्याख्यान का आयोजन किया । व्याख्यान का विषय था **भारत की पाण्डुलिपि-सम्पदा : हमारी विरासत का कोष** जिसे प्रस्तुत किया इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला-केन्द्र, दिल्ली के सदस्य-सचिव डॉ सच्चिदानन्द जोशीजी ने। यह व्याख्यान राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन, दिल्ली के **तत्त्वबोध-व्याख्यानमाला** के अन्तर्गत आयोजित किया गया।

७. दिनांक १५.२.२०२० को दिल्ली विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के प्रवक्ता और सम्प्रति इन्डियन इंस्टिटयूट ऑफ एडवान्स्ड स्टडीज, शिमला में विशेष परियोजना में कार्यरत संस्कृत, फारसी और प्राकृत के विद्वान डॉ बलराम शुक्ल ने **एकस्ट्रा म्युरल लेक्चर शृंखला** के अन्तर्गत **लिंग्विस्टिक फीचर्स ऑफ प्राकृत : कॉसिंग इट्स पोएटिक एक्सीलेन्स** पर व्याख्यान दिया ।

प्राच्यविद्यामन्दिर के अभ्यागत (विजिटर्स)

प्राच्यविद्यामन्दिर में प्रतिवर्ष पाण्डुलिपि और पुस्तकों की खोज में केवल विद्वान ही नहीं बल्कि स्कूल-कॉलेजों के छात्र, सरकारी संस्थाओ के कर्मचारी, समाज के हर स्तर का व्यक्ति, कभी स्थानीय तो कभी बाहर विदेशों से लोग हमारी समृद्ध विरासत के दर्शन करने आते हैं ।

समूह में आने वाले लोगो में - गुजरात रिफाइनरी, वडोदरा से १०८ छात्र; बम्बई यूनिवर्सिटी से १५ व्यक्ति नवजीवन हाईस्कूल बग्घीखाना से कक्षा १२ विज्ञान प्रवाह के ६ विद्यार्थी; म.स.वि.वि. वडोदरा के लाइब्रेरी साइन्स विभाग के १९ विद्यार्थी; संस्कृत-भवन, सौराष्ट्र वि.वि. राजकोट से २५ विद्यार्थी; नेचर वॉक ग्रुप के ७ सदस्य; अखिल भारतीय कडवा पाटीदार समाज, कच्छ के ८ सदस्य; २ जैन साधु मुख्य रहे । इन लोगो के अतिरिक्त कुछ उल्लेखनीय अभ्यागत अकेले ही संस्था की मुलाकात करने आये -

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संस्था में आये विशिष्ट अभ्यागत

क्रम सं	नाम एवं पता	दिनांक
१.	प्रो. भगवती प्रसाद, उप-कुलपति, गौतम बुद्ध वि.वि. ग्रेटर नोएडा, दिल्ली	११.८.२०१९
२.	श्री नवजीवन सिंह, आई.ए.एस., लोकसभा चुनाव पर्यवेक्षक टीम (चार सदस्य) के साथ	१२.४.२०१९
३.	प्रो. भगवतशरण शुक्ला, अध्यक्ष व्याकरण विभाग, संस्कृत-विद्या धर्म-विज्ञान संकाय, काशी हिन्दु वि.वि. वाराणसी	२९.८.२०१९
४.	डॉ सौम्या मंजुनाथ, ६/८ लेयार रोड, कोलम्बो-७ (श्रीलंका)	१८.७.२०१९
५.	डॉ डिम्पल कौर, डान्स थेरेपिस्ट, ग्रेटर कैलाश-१, दिल्ली	२५.७.२०१९
६.	सुश्री पारुल मशर, असि. मैनेजर, बैंक ऑफ बडौदा, अलकापुरी ब्रांच, वडोदरा	४.९.२०१९
७.	श्री दिनेश कामत, सचिव, अखिल भारतीय संस्कृत- भारती, २५ दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, नई दिल्ली	१६.६.२०१९
८.	डॉ डी. के. सिंहदेव, सहा. प्राध्यापक, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, भोपाल परिसर, भोपाल	१५.१०.२०१९
९.	श्रीमती रेवती डभोलकर, गृहिणी, आर. वी. देसाई रोड, वडोदरा	१३.११.२०१९
१०.	श्री चन्द्रकान्त के. पटेल, सचिव, अखिल भारतीय कड़वा पाटीदार समाज, मुम्बई	१६.११.२०१९
११.	श्री सुरेश सोनी, राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ, नागपुर	१०.२.२०२०
१२.	सुश्री कविता काणे, लेखिका (अंग्रेजी), पुणे	२५.२.२०२०
१३.	श्री जिग्नेश एम. पटेल, जिला शिक्षा कार्यालय, गोधरा	२.३.२०२०
१४.	डॉ दिलीप कुमार कार, असि. डायरेक्टर (रिसर्च), श्री कालकाजी वैदिक वि.वि., निम्बहेरा (राज.)	९.३.२०२०

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

Statement about the ownership and other particulars about newspapers

SVĀDHYĀYA (સ્વાધ્યાય)

(To be published in each issue)

FORM IV

(See Rule 8)

1.	*Place of the Publication :*	**Oriental Institute** The Maharaja Sayajirao University of Baroda Vadodara-390 001
2.	*Periodicity of its Publication :*	**Annual**
3.	*Printer's Name :* *Nationality :* *Address :*	**Jatin H. Somani** Indian Manager, The Maharaja Sayajirao University of Baroda Press (Sadhana Press) Vadodara - 390 001
4.	*Publisher's Name :* *Nationality :* *Address :*	**Dr. Sweta Prajapati** Indian C-62, Akshardham Society Aksharchawk, Vadodara - 390 020
5.	*Editor's Name :* *Nationality :* *Address :*	**Dr. Sweta Prajapati** Indian C-62, Akshardham Society Aksharchawk, Vadodara - 390 020
6.	*Names & Addresses of Individuals who own the newspaper and partners or shareholders holding more than one percent of the total capital*	**The Maharaja Sayajirao University of Baroda** Maharaja Fatehsinghrao Gaekwad Road Vadodara - 390 002

I, Sweta Prajapati, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Dr. Sweta Prajapati
Signature of Publisher

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लेखको से :

१. पृष्ठ के एक तरफ ही यूनिकोड फॉन्ट (१४ प्वाइन्ट में) टाइप कर आलेख की सॉफ्ट कॉपी निम्न ईमेल पर भेजें - director-oriental@msubaroda.ac.in
अस्वीकृत लेख वापस नहीं भेजे जायेंगे।

२. लेख में यदि उद्धरण, अन्य विद्धानों के मंतव्य आदि उद्धृत किये जाये तो उनका पूरा- पूरा विवरण देना अनिवार्य है। पादटीप (फुटनोट) में संदर्भ का विवरण देते समय इस क्रम में लिखें - लेखक अथवा संपादक/संशोधक का नाम (उपनाम/सरनेम पहले), पुस्तक का नाम, प्रकाशक, प्रकाशन-वर्ष, आवृत्ति (वोल्यूम/अंक संख्या), पृष्ठ संख्या।

३. स्वाध्याय में प्रकाशित सभी लेखों का प्रकाशन अधिकार (कॉपीराइट) प्रकाशक - प्राच्यविद्यामन्दिर, महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, वडोदरा के अधीन हैं। लेखक अथवा अन्य कोई व्यक्ति लेख का कोई भी अंश प्रकाशक की लिखित आज्ञा के बिना पुनः प्रकाशित नहीं कर सकता।

४. ग्रन्थों अथवा लेखक के लिये प्रयुक्त संक्षेप-शब्दों (एब्रीवियेशन) का प्रयोग करने से पहले उनका पूरा-पूरा रूप पहले उल्लेख किया जाना चाहिए, साथ ही आगे प्रयोग किया जाने वाला संक्षिप्त रूप भी संकेतित किया जाये ताकि पाठक को किसी प्रकार की दुविधा न हो।

५. पादटीप (फुटनोट) का क्रम पूरे लेख में लगातार रखा जाना चाहिए (संख्या एक से आरम्भ करके) तथा लेख में उन्हे यथा - स्थान निर्देशित करना चाहिए।

स्वाध्याय

स्वाध्याय एवं संशोधन की वार्षिक पत्रिका

संपादक : श्वेता प्रजापति

एक वर्ष में पत्रिका का एक अंक प्रकाशित किया जाता है जिसकी सदस्यता शुल्क निम्न रूप से है :

भारत में - ₹ १५०.०० (डाक व्यय सहित)

विदेश में - यूनाइटेड् स्टेट्स ऑफ अमेरिका के लिये - $ ५०.०० (डाक व्यय सहित)

सदस्यता-शुल्क निम्नलिखित पते पर चेक द्वारा भेजा जाना चाहिए -

नियामकश्री

प्राच्यविद्यामंदिर

महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, राजमहल गेट के पास

राजमहल रोड, वडोदरा - ३९०००१

फोन नं. ०२६५-२४२५१२१

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लेखक - विवरण

Regd. No. 9219/63

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

- **કીર્તિદા શ્રેણિક શાહ**
  સ્વાશ્રય ૧/એ, એ.ડી.સી. બેંક સોસાયટી, સહજાનંદ કોલેજ પાછળ, આંબાવાડી, અમદાવાદ-૧૫
- **રસીલા કડીઆ**
  ૮, જયમા સોસાયટી, સેટેલાઈટ માનસી ક્રોસ રોડ, પાણીની ટાંકીની બાજુમાં, સેટેલાઈટ કોમ્પ્લેક્ષની બાજુમાં, અમદાવાદ-૩૮૦ ૦૧૫, M: 07926765442
- **જે. કે. ઉમરેઠિયા**
  પ્રાચ્યવિદ્યામંદિર, મહારાજા સયાજીરાવ વિશ્વવિદ્યાલય, રાજમહેલ દરવાજા પાસે, રાજમહેલ રોડ, વડોદરા -૩૯૦ ૦૦૧
  M: 9427849843, Email: jkumrethiya70@gmail.com
- **શ્વેતા પ્રજાપતિ**
  પ્રાચ્યવિદ્યામંદિર, મહારાજા સયાજીરાવ વિશ્વવિદ્યાલય, રાજમહેલ દરવાજા પાસે, રાજમહેલ રોડ, વડોદરા -૩૯૦ ૦૦૧
  M: 9898472669, Email: sprajapati22@yahoo.com
- **વિપુલ પટેલ**
  પ્રાચ્યવિદ્યામંદિર, મહારાજા સયાજીરાવ વિશ્વવિદ્યાલય, રાજમહેલ દરવાજા પાસે, રાજમહેલ રોડ, વડોદરા -૩૯૦ ૦૦૧
  M: 9898656871, Email: vipul.1063@gmail.com
- **હર્ષલ ભટ્ટ**
  સંસ્કૃત, પાલિ અને પ્રાકૃત વિભાગ, કલાસંકાય, મહારાજા સયાજીરાવ વિશ્વવિદ્યાલય, વડોદરા -૩૯૦ ૦૦૨
- **વંદના લેલે**
  ૨૦૧, કેશવ, ગુરુપ્રસાદ સોસાયટી, અકોટા, વડોદરા - ૩૯૦ ૦૦૭, Email: vandana.lele1@gmail.com
- **મણિભાઈ પ્રજાપતિ**
  કડી સર્વ વિશ્વવિદ્યાલય, એઈ.ડી.આર.પી. એન્જિનિયરિંગ કોલેજ કેમ્પસ, સેકટર-૧૫, ગાંધીનગર-૩૮૨ ૦૧૫, M: 9601273836
- **वसन्तकुमार म. भट्ट**
  २, सुरभि अपार्टमेन्ट्स्, सुभाष सोसायटी, ईश्वरभवन के पीछे, नवरंगपुरा, अहमदाबाद - ३८० ००९
- **मनसुख के. मोलिया**
  संस्कृत भवन, सौराष्ट्र विश्वविद्यालय, राजकोट, M: 9687692933, Email: mansukh_moliya@yahoo.com
- **रवीन्द्रकुमार पण्डा**
  संस्कृत, पालि एवं प्राकृत विभाग, कलासंकाय, महाराजासयाजीराव विश्वविद्यालय, बडौदा-३९० ००२, M: 9974262038,
  Email: panda_rabindra@rediffmail.com
- **नन्दकिशोर मिश्र**
  प्राच्यविद्यामन्दिर, महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, वडोदरा, M: 9998807874, Email: mishrank187@gmail.com
- **शर्मिला बागची**
  प्राच्यविद्यामन्दिर, महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, वडोदरा - ३९० ००१, M: 9426947941,
  Email: bagchisharmila3@gmail.com
- **संस्कृति जैन**
  अकलंक शोधसंस्थान, कोटा, राजस्थान, M: 9352458768
- **बनमाली बिश्वालः**
  सेन्ट्रल संस्कृत विश्वविद्यालय, श्री रघुनाथ कीर्ति केम्पस, देवप्रयाग, पौडी गरवाल, उत्तराखंड - २४९३०१,
  M: 9450781742, 7839908471, Email: banamali7@gmail.com
- **વિરંચિ ત્રિવેદી**
  ૨, ગણેશશિવમ્ સોસાયટી, કારેલીબાગ, વડોદરા - ૩૯૦ ૦૧૮, M: 9904234291

સંપાદક અને પ્રકાશક : ધી મહારાજા સયાજીરાવ યુનિવર્સિટી ઓફ બરોડા વતી ડૉ. શ્વેતા પ્રજાપતિ, કાર્યકારી નિયામક, પ્રાચ્યવિદ્યામંદિર, મહારાજા સયાજીરાવ વિશ્વવિદ્યાલય, વડોદરા

મુદ્રક : જતીન એચ. સોમાણી, મેનેજર, ધી મહારાજા સયાજીરાવ યુનિવર્સિટી ઓફ બરોડા પ્રેસ (સાધના પ્રેસ), રાજમહેલ દરવાજા પાસે, રાજમહેલ રોડ, વડોદરા-૩૯૦ ૦૦૧, નવેમ્બર ૨૦૨૦

MSUP-4806-150+10-11-20